आध्यात्मिक आरोग्यम्

प्रकाशक

साधुमार्गी पब्लिकेशन

श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन संघ

आध्यात्मिक आरोग्यम्

संस्करण : द्वितीय, अप्रैल 2023
2000 प्रतियाँ

मूल्य : ₹ 125/-

प्रकाशक : **साधुमार्गी पब्लिकेशन**
अन्तर्गत - श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी
जैन संघ समता भवन, आचार्य श्री नानेश मार्ग,
श्री जैन पी. जी. कॉलेज के सामने, नोखा रोड,
गंगाशहर, बीकानेर-334401 (राज.)
☎ 0151-2270261
E-mail : sahitya@sadhumargi.com

मुद्रक : **पायोराईट प्रिन्ट मीडिया प्रा.लि.**
उदयपुर

यह पुस्तक केवल पुस्तक लिखने के लिए नहीं लिखी गयी है।

लेखकों में अपना नाम दर्ज कराने के लिए भी नहीं लिखी गयी है।

स्वान्त: सुखाय भी नहीं लिखी गयी है।

न ही निरुद्देश्य लिखी गयी है।

यह सोद्देश्य लिखी गयी है।

इसे लिखने का उद्देश्य है लोगों को वास्तविक सुख और शांति से परिचित कराना...

उनके करीब ले जाना...

उनसे गलबहियां कराना...

उनका आलिंगन कराना...

उनका रसपान कराना...

उसमें सराबोर कराना...

ब्यावर में सन् 2021 में सम्पन्न चातुर्मास में आचार्य श्री रामलाल जी म.सा. द्वारा दिए गए आयाम 'आध्यात्मिक आरोग्यम्' को केन्द्र में रखकर उक्त आयाम के 9 बिन्दुओं पर लिखी गयी यह पुस्तक उनके लिए बहुत ही उपयोगी साबित होगी, जो वास्तविक सुख और शांति को प्राप्त करना चाहते हैं।

संघ के प्रति अहोभाव

हे पितृ तुल्य संघ! हे आश्रयदाता संघ!

संसार के प्रत्येक जीव की रक्षा के लिए सतत प्रयत्नरत संघ! तुम्हारी शीतल छाँव तले हम अपने परिवार के साथ तप-त्याग से युक्त आध्यात्मिक, सुखद जीवन जी रहे हैं। तुम्हारे ही आश्रय में रहकर हमने अपने नन्हें चरणों को आध्यात्मिकता की दिशा में बढ़ाया है। तुमने ही हमें आत्मा के अन्वेषण हेतु प्रेरित किया। तुम्हारी ही प्रेरणा से प्रेरित होकर हमने अपने जीवन को सन्मार्ग की ओर बढ़ाया है। इस हेतु हम संघ का अभिवादन करते हैं।

संघ ने हम अकिंचन को इस पुस्तक '**आध्यात्मिक आरोग्यम्**' के माध्यम से सेवा का अनुपम अवसर प्रदान किया। इस हेतु हम अपने आपको सौभाग्यशाली समझते हैं। अन्तर्भावना से संघ का आभार व्यक्त करते हुए यह विश्वास करते हैं कि भविष्य में भी परम उपकारी श्री संघ शासन हमें सेवा का अवसर प्रदान करता रहेगा।

- अर्थ सहयोगी -

पूज्य स्व. श्रीमती माण्डु देवी-श्री मुलतान चंद जी, गौरी देवी-प्रताप चंद जी, सोनी देवी-मूलचंद जी, हुल्लासी देवी-तुलसी चंद जी की पुण्य स्मृति में बाफना परिवार, रायपुर, बीजा (छ.ग.), बालेसर (राज.)

।। सेवा है यज्ञकुण्ड, समिधा सम हम जलें।।

समस्याओं का समाधान है
आगे के सफ़्हों में...

डॉक्टर और मनोवैज्ञानिक परेशान हैं नित बढ़ते रोगों से। समाजशास्त्री परेशान हैं छिन्न-भिन्न होते सामाजिक ताने-बाने से। पर्यावरणविद् परेशान हैं बढ़ते प्रदूषण से। पुलिस परेशान है बढ़ते अपराधों से। जनता परेशान है प्रशासनिक अव्यवस्था से। समग्रता में देखा जाए तो हर वर्ग परेशान है। प्रत्येक व्यक्ति परेशान है। जिधर नजर जाए उधर परेशानी। परेशानी... परेशानी... और परेशानी...

इन परेशानियों से निजात पाने के लिए बहुत सारे लोग लगे हुए हैं। परेशानियों का हल तलाशने के लिए बैठकें होती हैं। सेमिनार का आयोजन होता है। राष्ट्रीय से लेकर अन्तरराष्ट्रीय स्तर तक नयी-नयी योजनाएं बनती हैं। लक्ष्य तय किया जाता है। टाइमलाइन तय की जाती है। इसके बाद किए जाते हैं बड़े-बड़े दावे। पर सारे दावे कर जाते हैं रिएक्शन। रिएक्शन का परिणाम होता है कि कम होने की जगह रोग बढ़ते जा रहे हैं। उनकी गंभीरता बढ़ती जा रही है। प्रदूषण बढ़ता जा रहा है। समाज के बीच खाई बढ़ती जा रही है। भ्रष्टाचार बढ़ता जा रहा है। अव्यवस्था बढ़ती जा रही है।

इसलिए बढ़ती जा रही है क्योंकि सही दिशा में काम नहीं हो रहा। सब चाह रहे हैं कि दूसरा व्यक्ति बदल जाए। कोई अपने आप को बदलना नहीं चाहता। इसलिए बढ़ती जा रही है क्योंकि भौतिकता के

चंगुल में फँसा समाज आध्यात्मिकता से दूर हो गया है। आध्यात्मिकता उसे नहीं सुहाती। इसलिए बढ़ती जा रही है क्योंकि पैसे के पीछे भाग रहे व्यक्ति के पास परिवार के लिए समय नहीं है। इसलिए बढ़ती जा रही है क्योंकि लोग शॉर्टकट रास्ते से मंजिल प्राप्त करना चाहते हैं।

सवाल है कि इसका कारण क्या है और क्या है इसका उपाय?

इसका कारण है मानव व्यवहार। उपर्युक्त सारी समस्याओं के लिए मानव व्यवहार ही उत्तरदायी है। सिर्फ और सिर्फ मानव व्यवहार। मानव ही प्रदूषण बढ़ा रहा। मानव ही भ्रष्टाचार का जनक है। वही अव्यवस्था फैला रहा और रोगों के बढ़ने के पीछे भी उसकी भूमिका कम नहीं है। सामाजिक ताने-बाने को छिन्न-भिन्न करने का जिम्मेदार भी मानव ही है।

इन समस्याओं के समाधान के लिए बहुत सारे उपाय करने की जरूरत नहीं है। इनका एक ही उपाय है। वह उपाय है आध्यात्मिक आरोग्यम्। आध्यात्मिक आरोग्यम् दुनिया के सारे रोगों की दवा है। ताकत देने वाली दवा है। जीवन देने वाली दवा है। आमूल-चूल परिवर्तन लाने वाली दवा है। इस उपाय में कुछ इनवेस्ट नहीं करना है। इसे बाजार से खरीद कर नहीं लाना है। इसके लिए किसी लाइसेंस की जरूरत नहीं है। यह सरकारी सब्सिडी का मोहताज नहीं है। यह किसी पूंजीपति की तिजोरी में नहीं है। किसी बाहुबली का इस पर कब्जा नहीं है। इसके मालिक हैं आप। इसका मालिक है हर आम-ओ-खास। पर आप उसे भूल गए हैं। व्यक्ति भूल गया है।

भूल गए आध्यात्मिक आरोग्यम् के पास ले जाने मे सहयोग

करेगी पुस्तक 'आध्यात्मिक आरोग्यम्।' मानव व्यवहार से उत्पन्न परेशानियों और उसके समाधान का विश्लेषण करती है पुस्तक आध्यात्मिक आरोग्यम्। न सिर्फ विश्लेषण करती है बल्कि उसे प्राप्त करने का उपाय भी बड़े सहज-सरल और रोचक ढंग से बताती है। इसे पढ़नेवाला, इसे गुननेवाला, इसे जीवन में उतारने वाला बहुत सारी समस्याओं से दूर हो जाएगा।

बसंत पंचमी, 2023

संयोजक
साधुमार्गी पब्लिकेशन
अन्तर्गत श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन संघ

विषयानुक्रमणिका

क्र.सं.	विषय	पृष्ठ संख्या
1.	अमूल्य पाथेय : आध्यात्मिक आरोग्यम्	09
2.	गुणपरक दृष्टि	21
3.	छिद्रान्वेषण का त्याग	43
4.	इन्द्रिय निग्रह	55
5.	आत्मानुशासन	71
6.	विवाद विग्रह से पराङ्मुखता	105
7.	मैत्री भावों का विकास	123
8.	जीवन नियमन	139
9.	सामूहिक साधना और स्वाध्याय	167
10.	तत्त्वानुप्रेक्षा : आत्मचिंतन	183

अमूल्य पाथेय
आध्यात्मिक आरोग्यम्

आरोग्य है अध्यात्म का गुरु राम सागर से मिला
अनमोल निधि आरोग्य की पाकर सुमन मन का खिला।
डुबकी लगा गोते लगा मन का कलिमल दूर कर
आनंद भक्ति प्रेम से गुरु देव का जयनाद कर।

जीवन सुख का सागर है। आनंद से भरा हुआ है। चारों तरफ सुख की हवाएँ चल रही हैं। यह नंदन वन है। चिंतामणि रत्न है। कामधेनु है। कल्पवृक्ष है। कामकुंभ है। अलादीन का चिराग है, जिससे आप जो चाहें पा सकते हैं। जो चाहें बन सकते हैं। जैसा चाहें वैसा कर सकते हैं। इसमें निखार लाना आपके हाथ में है।

यही बात श्री उत्तराध्ययन सूत्र में कही गयी है। श्री उत्तराध्ययन सूत्र के 20वें अध्ययन में कहा गया है–

अप्पा कामदुहा धेणू, अप्पा में नंदणं वणं।

आत्म सर्व शक्तिमान है। ऊँचे से ऊँचे देवलोक में जाने का काम इस जीवन में हो सकता है। इस जीवन में मोक्ष भी संभव है। कहा भी गया है कि मनुष्य तू बड़ा महान् है। तू जो चाहे तो नदियों की धारा को मोड़ दे...

सुख के सागर में हम हैं। सुख के पर्वत पर हम हैं। सुख के वातावरण में हम हैं। हर पल, हर क्षण चारों तरफ सुख बरस रहा है। ज्ञानीजनों ने इस जीवन को सुख का खजाना बताया है। सुख के उस खजाने में से मनुष्य कितना ले पाता है यह उस पर निर्भर है।

मनुष्य सोचता है कि ज्ञानीजन कह तो रहे हैं कि सुख है पर नजर तो नहीं आ रहा। दिख तो कुछ और रहा है।

वह सोचता है कि ज्ञानीजनों ने तो इस जीवन को सुख का सागर बताया है फिर चारों तरफ दुख क्यों दिख रहा है!

वह सोचता है कि उन्होंने सुख का खजाना बताया है पर हमें दुख भरा हुआ क्यों नजर आ रहा है!

वह सोचता है कि या तो ज्ञानी गलत हैं या हम गलत हैं।

फिर तुरंत सोचता है कि ज्ञानी तो गलत हो नहीं सकते। गलती हमारी ही है।

इसी दुनिया में बुद्ध थे। इसी दुनिया में महावीर थे। इसी दुनिया में राम थे। अर्जुन अणगार, गौशालक, जमालि और देवदत्त भी इसी दुनिया में थे।

दुनिया एक ही थी पर देवदत्त दुखी हो गया। बुद्ध और देवदत्त की दुनिया में कोई फर्क नहीं था, पर एक महान सुखी और एक बहुत दुखी बना। हमें देखना है कि हम क्या कर रहे हैं! इस संसार में हम सुखी हो रहे हैं या दुखी! संसार तो एक ही है। सुखी और दुखी होना हमारे ऊपर है।

रबड़ी, बल भी दे सकती है और अपच, अजीर्ण भी करा सकती है। संखिया नामक जहर मार भी सकता है और दवा के रूप में भी काम आ सकता है। महाभारत में ऐसा कहा गया है कि भीम जहर को भी हजम कर जाता था।

हम क्या कर रहे हैं यह हमें सोचना है। यह बात निश्चित है कि सुख हम पर निर्भर है। यह निश्चित है कि सुख हमारे ही अंदर है। हमें देखना है कि हम अपने अंदर उस सुख को पहुँचा पा रहे हैं या नहीं! इसी को समझने के लिए हमें अपने को टटोलना है। अपनी जाँच करनी है। जाँच करने की कसौटी है आध्यात्मिक आरोग्यम्। आध्यात्मिक आरोग्यम् वह कसौटी है जिस पर हम खुद को कस सकते हैं। जिससे हम खुद की जाँच कर सकते हैं। जिससे हम खुद

को टटोल सकते है। जिससे हम खुद का अवलोकन और आंकलन कर सकते हैं।

आध्यात्मिक मतलब आत्मा और आरोग्यम् मतलब निरोगता यानी आत्मा की निरोगता। आत्मा की स्वस्थता। अपने आपको इस कसौटी पर कसना है कि हमारी आत्मा कितनी निरोगी है। हम कितने स्वस्थ हैं। अब आप सोच सकते हैं कि आत्मा तो निरूज है फिर यह कैसा सवाल है कि आत्मा कितनी रोगी है? यही तो समझना है कि आत्मा निरोगी है फिर यह रोग क्यों पैदा हो रहे हैं!

मनोवैज्ञानिक कहते हैं कि 95 प्रतिशत बीमारियाँ मन की उपज हैं। 95 प्रतिशत बीमारियों का संबंध मन की गंदगी से है। व्यक्ति 95 प्रतिशत मन के रोगों से ग्रस्त है। हमें आध्यात्मिक आरोग्यम् के द्वारा देखना है कि हम मन से स्वस्थ हैं या नहीं!

आपके सामने कई बार ऐसी बात आयी होगी कि किसी पेसेंट की सारी रिपोर्ट्स नॉर्मल है लेकिन पेसेंट एबनॉर्मल है। यूरिन, ब्लड, स्टूल, एम आर आई, सिटी स्कैन, ई सी जी, लिपिड प्रोफाइल सब ठीक रहेगा पर मरीज ठीक नहीं दिखता। अच्छी से अच्छी दवाइयाँ असरहीन हो जाती हैं। कोई दवा असर नहीं करती। किसी दवा से फायदा नहीं होता। इस प्रकार की स्थिति होना आध्यात्मिक रुग्णता है।

आचार्य श्री रामलाल जी म. सा. फरमा रहे हैं आध्यात्मिक आरोग्यम् के बारे में। इस सदी के महानतम विचारों में से एक है यह। जिनशासन समुद्र का जगमगाता रत्न है आध्यात्मिक आरोग्यम्। रत्नों

से भरा खजाना है आध्यात्मिक आरोग्यम्।

जैसे कार में पेट्रोल ना होने पर गति की कल्पना नहीं की जा सकती, वीजा न होने पर विदेश जाने के बारे में नहीं सोचा जा सकता, आधार कार्ड न होने पर देश में सुरक्षित नहीं रह सकते, अ, आ, ई का ज्ञान न होने पर ग्रन्थ नहीं पढ़ सकते, बिना इलेक्ट्रिसिटी के ए सी-कूलर आदि इलेक्ट्रॉनिक्स सामान का प्रयोग नहीं कर सकते, वैसे ही आध्यात्मिक आरोग्यम् के बिना सुखी जीवन की कल्पना नहीं कर सकते। जैसे सिम के बिना मोबाइल व्यर्थ है, सील (SIL) के बिना नोट बेकार है, लाइट हाऊस के बिना बड़ी से बड़ी शिप किसी काम की नहीं है, रडार के बिना बड़ा से बड़ा वायुयान व्यर्थ है, वैसे ही आध्यात्मिक आरोग्यम् के बिना स्वस्थ जीवन की कल्पना करना व्यर्थ है।

होंठों पे लाली, कानों में बाली, माथे पे बिन्दिया, गले में हार, पैरों में पायल से लेकर बालों के गजरे तक सजी राजीमती का सारा शृंगार अरिष्टनेमि भगवान के लौट जाने पर व्यर्थ हो जाता है, वैसे ही आध्यात्मिक आरोग्यम् के बिना किए गए सारे अनुष्ठान व्यर्थ हो जाते हैं।

जैसे राजुल, नेमि के बिना चक्कर खा कर गिर जाती है, वैसे ही आध्यात्मिक आरोग्यम् बिना साधना चक्कर खाकर गिर जाती है।

जैसे राजुल, नेमि के बिना टप-टप आँसू बहाती है, वैसे ही साधना, आध्यात्मिक आरोग्यम् के बिना आँसू बहाती है।

जैसे राजुल मुरझा जाती है, वैसे ही साधना मुरझा जाती है।

जैसे राजुल को नेमि के बिना सब कुछ सूना लगता है, वैसे ही साधना, आध्यात्मिक आरोग्यम् के बिना सूनी हो जाती है।

जैसे राजुल, नेमि के बिना चलती-फिरती लाश हो जाती है, वैसे ही साधना, आध्यात्मिक आरोग्यम् के अभाव में चलती-फिरती लाश हो जाती है।

राजुल का प्राण आधार अरिष्टनेमि कुमार है और साधना का प्राण आधार आध्यात्मिक आरोग्यम् है।

राजुल का सहारा नेमि है और साधना का सहारा आध्यात्मिक आरोग्यम् है।

राजुल का प्राण नेमि है और साधना का प्राण आध्यात्मिक आरोग्यम् है।

राजुल की साँस नेमि है और साधना की साँस आध्यात्मिक आरोग्यम् है।

जैसे बिना पानी फसल, बिना चमक हीरा, रेडियो तरंग बिना नेटवर्क हम नहीं सोच सकते हैं, वैसे ही बिना आध्यात्मिक आरोग्यम् के जीवन और सुख की कल्पना नहीं की जा सकती।

पिछली सदी में हमने सुख के कारण बहुत खोज लिए। गर्मी से बचने के लिए ए सी, सर्दी से बचने के लिए हीटर, पैर न थकने के लिए गाड़ी और मनोरंजन के लिए टी.वी. हमारे पास है। इन सबको खरीदने के लिए धन है, पर सुख इंडेक्स में हम पिछड़ते चले जा रहे हैं। आज से 100 साल पहले आदमी के पास ये सब नहीं था पर वह

अब से ज्यादा सुखी था। मोबाइल नहीं था पर बातें मीठी थीं। 5000 सी सी का इंजन नहीं था पर दुनिया सुकून भरी थी। फेसबुक पर हजारों-लाखों फॉलोवर नहीं थे पर व्यक्ति आनंदित था। इनसान पूरे विश्व की खबरों से बेखबर था पर अपनी दुनिया में मस्त था। साधनों से अधूरापन होने के बावजूद वह पूरा था। साधनों का अभाव था, पर भाव शुभ था। सद्भाव था। आध्यात्मिक आरोग्यम् था।

कोई चीज बनती थी तो पूरा मोहल्ला खाता था। हर चीज को बाँटा जाता था। सुख-दुख में सभी एक दूसरे के साथी थे। तब के लोगों को लोग निपट मूर्ख भले कह लें किंतु उस समय के लोग आज के डिग्रीधारियों से कहीं ज्यादा समझदार थे। साधन कम थे पर सम्पन्नता ज्यादा थी। ज्यादा सभ्य थे। आज जब मनुष्य ऐसी प्रतियोगिता में भाग रहा है जिसमें यह पता ही नहीं कि जाना कहाँ है, तब आध्यात्मिक आरोग्यम् परम उपयोगी है।

आध्यात्मिक आरोग्यम् जीवन को समझने का चश्मा देता है। उसकी नई व्याख्या करता है। नए तौर से परिभाषित करता है। भूले-बिसरे बिन्दुओं को जोड़ता है।

जीवन को न समझने की वजह से ही लोग आत्महत्या करते हैं। नेशनल क्राइम रिकार्ड ब्यूरो की अगस्त 2022 की रिपोर्ट के अनुसार भारत में सन् 2021 में 164033 लोगों ने आत्महत्या की। यानी 450 लोग प्रतिदिन। रिपोर्ट के अनुसार शहरों में आत्महत्या की दर गाँवों के मुकाबले अधिक है। ध्यान देने की बात है कि शहर में रहने वालों के पास गाँव के लोगों से अधिक संसाधन हैं। यदि

संसाधनों से ही सुख मिलता तो गाँव वाले अधिक आत्महत्या करते न कि शहर के निवासी।

इतनी आत्महत्याएँ देख कर कोई कह सकता है कि जीवन सुख का सागर है? कोई कह सकता है कि आनन्द से भरा हुआ है? कोई इसे सुख का खजाना मान सकता है? कोई मान सकता है कि संसाधनों में सुख है?

नहीं! कदापि नहीं।

आत्महत्या करने का मन हो तो आध्यात्मिक आरोग्यम् के बारे में जान लेना।

उससे थोड़ी समझ ले लेना।

उसके पास बैठ कर कुछ सीख लेना।

उसके कुछ घूँट पी लेना।

उसका रसपान कर लेना।

वह मुर्दे में जान फूँकने का जज्बा रखता है। इन बिन्दुओं पर आगे चर्चा होगी, किंतु चर्चा से पहले अपने आप को देखें कि मैं सुखी हूँ या नहीं! यदि दुखी हैं तो सीधा मतलब है कि आध्यात्मिक रूप से रुग्ण हैं। भीतर से बीमार हैं। जो भीतर से बीमार हो, उसे कोई भी टॉनिक ताकत नहीं दे सकता। ताकत प्राप्त करने के लिए पहले बीमारी को दूर करना होगा। बीमारी दूर होगी फिर टॉनिक आपको ताकत दे पाएगा।

यदि हम आध्यात्मिक रूप से बीमार हैं तो हमारे द्वारा दिया गया दान, हमारे द्वारा की गई सामायिक, हमारे द्वारा किया गया

पौषध, हमारे द्वारा की गई दया, हमारे द्वारा किया गया संवर, हमारे द्वारा की गई तपस्या, हमारे द्वारा ली गयी दीक्षा, संयम सब व्यर्थ है। आध्यात्मिक आरोग्यम् के अभाव में ये सब कोई फल नहीं दे पाएंगे। कोई बहुत बड़ा लाभ नहीं मिल पाएगा। आध्यात्मिक आरोग्यम् हमारी बीमारी को दूर करेगा। जब बीमारी दूर होगी तो फिर हम धीरे-धीरे स्वस्थ और बलिष्ठ बन पाएंगे।

पीलिया, टाइफाइड और मलेरिया का कोई रोगी जिम में जाकर वर्जिश करे तो आप उसे सलाह देंगे कि भाई, पहले बीमारी तो ठीक कर ले, फिर बाद में जिम ज्वाइन करना।

यदि वह बीमार अवस्था में ही वर्जिश करता रहेगा तो और बीमार होता जाएगा। और तो और उसकी मेहनत, उसकी मौत का सबब भी बन सकती है।

बहुत बड़ा मकान हो। उसमें फर्निचर, टी.वी., फ्रिज, मोबाइल, कपड़े, सब्जियाँ, फल-फूल, गाड़ी, रुपया-पैसा जैसे दैनिक उपयोगी साधनों के साथ दुनिया की सारी सुविधाएँ हों परन्तु ऑक्सीजन न हो तो क्या जीवन की कल्पना की जा सकती है?

नहीं की जा सकती।

हमने 2020 में देखा कि कैसे कोरोना का मरीज ऑक्सीजन की कमी के कारण सब कुछ सही सलामत होते हुए भी मौत के मुँह में चला गया। सैकड़ों-हजारों नहीं, लाखों भले-चंगे लोग मौत के मुँह में चले गए। क्या बच्चे, क्या जवान, क्या बूढ़े। कई लोग तो 2-3 मिनट के भीतर ही काल के गाल में समा गए। बचाने

के लिए कोई उपाय करना तो दूर की बात रही, सोचने-समझने तक का मौका नहीं मिल पाया। कुछ लोग न भी मरे तो उनके शरीर पर उसका दुष्प्रभाव देखने को मिला। किसी का हृदय, किसी का फेफड़ा तो किसी की किडनी और किसी का लीवर डैमेज हो गया। इसका कारण सिर्फ आक्सीजन की कमी ही थी।

जैसे शरीर में ऑक्सीजन का महत्त्व है, वैसे ही जीवन के क्षेत्र में आध्यात्मिक आरोग्यम् का महत्त्व है। आध्यात्मिक आरोग्यम् वह प्राणवायु है जो जीवन के हर क्षेत्र को सुखी, समृद्ध और स्वस्थ बनाने में परम सहायक है।

आध्यात्मिक आरोग्यम् के बिन्दुओं को आत्मसात करने पर जीवन की बड़ी से बड़ी समस्या मिट सकती है। कोई व्यक्ति एक भी शास्त्र न पढ़े, सिर्फ आध्यात्मिक आरोग्यम् को पढ़े तो वह जीवन के किसी भी क्षेत्र में कभी असफल नहीं होगा।

जैसे पुष्पों का सार इत्र होता है, भोजन का सार बल होता है, वैसे ही आगम का सार आध्यात्मिक आरोग्यम् है।

जैसे पर्वतों में हिमालय, रत्नों में कोहिनूर और नदियों में गंगा श्रेष्ठ है, वैसे ही जीवन परिवर्तन के सूत्रों में आध्यात्मिक आरोग्यम् सर्वश्रेष्ठ है। एक छोटी सी घटना पर गौर करेंगे तो आध्यात्मिक आरोग्यम् की श्रेष्ठता स्पष्ट हो जाएगी। घटना एक सेठ के जीवन की है।

एक बड़ा सेठ था। उसका मन अपने शहर को छोड़ कर तीर्थ यात्रा करने का हुआ, किंतु तीर्थ यात्रा करने से पहले वह चिंतित

हो जाता है। चिंता के कारण उसका शरीर दुबला होता जाता है। सभी पूछते हैं कि सेठ क्या हुआ परन्तु वह कुछ नहीं कह पाता। एक दिन उसका परम बुद्धिमान मित्र उससे मिलने आया। सेठ की हालत देखकर उसका मित्र पूछता है कि सेठ तुम्हें क्या हुआ? तुम क्यों इतने दुबले हो रहे हो, तुम्हें कौन-सी चिंता सता रही है?

पहले तो सेठ टालमटोल करता है परन्तु अति विशिष्ट मित्र के अत्यधिक आग्रह पर कहता है कि मेरा मन तीर्थ यात्रा करने का है परन्तु सम्पत्ति की अधिकता के कारण मैं जा नहीं पा रहा हूँ।

सेठ का मित्र सेठ की बात सुनकर जोर से हँसने लगा। हँसते हुए कहता है कि बस इतनी सी बात! वह आगे कहता है कि तुम अपनी सम्पत्ति बेच दो और उसके बदले वेशकीमती रत्न खरीद लो। उन रत्नों को लेकर तुम जहाँ चाहो वहाँ जा सकते हो। उसका भार भी महसूस नहीं होगा।

अपने मित्र के कहे अनुसार सेठ अपनी सम्पत्ति को बहुमूल्य रत्नों में बदल देता है। अब कोई पूछे कि उस सेठ के पास कितना पैसा है, पहले जितना था उतना ही है या कम, तब आप क्या कहेंगे? आप यही कहेंगे ना कि उतना का उतना ही धन है। ठीक वैसे ही शास्त्रों की महान सम्पत्ति का अगर संक्षिप्तीकरण किया जाएगा तो संक्षिप्त नाम होगा आध्यात्मिक आरोग्यम्।

किसी प्रदेश में एक पक्षी होता है। वह पक्षी अपने चूजे के लिए भोजन ढूँढ़ता है। चूजे को भोजन देने से पहले वह पक्षी अपने मुँह में डाल कर उस आहार को उनके खाने योग्य बनाता है और जितना आहार उस

चूजे के लिए आवश्यक है उतना ही उसे खाने को देता है। चूजा नासमझ व अनगढ़ है। चूजा आहार की तलाश करना नहीं जानता। वह आहार निगलने की विधि भी नहीं जानता। माँ के कहे अनुसार माँ द्वारा दिए भोजन कणों का उपभोग करता है। वह क्षण-क्षण विकसित होता चला जाता है। ठीक उसी प्रकार आचार्य भगवन् अपने शिष्यों को शास्त्रों का भोजन कराने के लिए शास्त्र रूपी जंगल से चुनकर अपनी मेधा रूपी चोंच में रखकर परिपक्व बनाते हैं। उसी परिपक्व भोजन का नाम है आध्यात्मिक आरोग्यम्। आध्यात्मिक आरोग्यम् सभी आवश्यक तत्वों से भरपूर है। जो शिष्य उन कणों का उपभोग करेगा वह आध्यात्मिक विकास को प्राप्त करेगा। शिष्य श्रावक भी हो सकता है और साधु भी।

आगे पन्ने दर पन्ने आध्यात्मिक आरोग्यम् को समझने की कोशिश करेंगे। यह जानने की कोशिश करेंगे कि वे रत्न कौन से हैं और उनका उपयोग जीवन को समृद्ध बनाने के लिए कैसे किया जा सकता है। जानेंगे कि खोए हुए आत्मिक स्वास्थ्य को पुन: कैसे प्राप्त किया जा सकता है। जिस सुख के सागर की हमने प्रारंभ में बात की थी उस सुख के सागर का अनुभव किया जा सकता है।

मन की शक्ति हारा हुआ मनुष्य आध्यात्मिक आरोग्यम् द्वारा पुन: उस शक्ति को प्राप्त कर सकता है। कामधेनु, कल्पवृक्ष के समान आत्मा का लाभ लिया जा सकता है। शक्ति प्राप्त करने के लिए, कामधेनु और कल्पवृक्ष के समान आत्मा का लाभ लेने के लिए उन 9 बिंदुओं को अपने जीवन में उतारना होगा, जिनकी चर्चा आगे की जा रही है।

1

गुणपरक दृष्टि

दृष्टि गुण की राखिए, गुण धारिए दिल माय
गुणपरक दृष्टि सुखद गुरु वाणी सुखदाय

1

गुणपरक दृष्टि

आध्यात्मिक आरोग्यम् का पहला गुण है गुणपरक दृष्टि। गुणपरक दृष्टि का एक नायाब उदाहरण मिलता है एक माली और एक व्यक्ति की बातचीत में।

एक व्यक्ति घूमते-घूमते बगीचे में पहुँचता है। वहाँ वह देखता है सफेद मोगरा के फूल, लाल कमल के फूल, लीली के नीले फूल, अमलतास के पीले फूल और चमेली के सफेद फूल। फूलों के अलावा उसे वहाँ दिखता है मीठा गन्ना, कसैला आँवला और कड़वी नीम। उसे तीखी मिर्च भी दिखती है। इन सबको देखकर वह बगीचे के माली से पूछता है कि भाई, चमेली में सफेदी कहाँ से आयी? वह यह भी पूछता है कि गन्ने में मीठापन और नीम में कड़वापन कहाँ से आया?

माली कहता है कि कड़वा, मीठा, तीखापन आदि सारे रस जमीन में हैं, जिसकी जैसी ग्रहण क्षमता होती है, वह उसी प्रकार ग्रहण करता है।

बगीचे में जाने वाले उस व्यक्ति की तरह किसी के मन में यह प्रश्न आए कि यह दुनिया कैसी है तो किसी से पूछने से पहले वह यह टटोले कि हमारी ग्रहण क्षमता कैसी है। वह यह देखे कि हमारा

चश्मा कैसा है। जिसका जैसा चश्मा होता है उसको दुनिया उसी रंग की नजर आती है। काले चश्मे वाला काली दुनिया देखता है और हरे चश्मे वाला हरी। चश्मा बहुत महत्त्व रखता है। चश्मे के अनुसार हमारी नजर बनती है।

इसे एक घटना से जान सकते हैं। कृष्ण ने दुर्योधन को बुलाकर कहा कि जाओ हस्तिनापुर में जितने सद्गुणी हैं उनकी लिस्ट बनाकर लाओ। दुर्योधन के जाते ही युधिष्ठिर को भी बुलाकर कहा कि जाओ हस्तिनापुर में रहने वाले दुर्गुणियों की लिस्ट बनाकर लाओ। दोनों को 7-7 दिन का समय दिया गया।

7 दिन बाद युधिष्ठिर और दुर्योधन दोनों साथ लौटे। कृष्ण, दुर्योधन से पूछते हैं कि हो गया काम? दुर्योधन कुछ बोलते नहीं और मुँह नीचे कर लेते हैं। उनका मन उदास था। उदास देखकर कृष्ण ने कहा, क्या काम नहीं हुआ? दूसरी बार पूछने पर दुर्योधन ने पैर पटकते हुए कहा कि मैं पूरा हस्तिनापुर घूम लिया पर मुझे एक भी सद्गुणी पुरुष नहीं मिला।

तब कृष्ण, युधिष्ठिर की ओर देखते हैं। युधिष्ठिर नजर झुकाए हाथ जोड़कर कहते हैं, मुझे पूरे हस्तिनापुर में कोई भी दुर्गुणी नहीं मिला। यह वार्ता राजदरबार में हो रही थी। इसे सुनकर राजदरबार में उपस्थित लोग चौंके और एक-दूसरे की ओर इस भाव से देखने लगे कि ऐसा कैसे हो सकता है! दुर्योधन कहते हैं कि एक भी सद्गुणी नहीं मिला और युधिष्ठिर कहते हैं कि एक भी दुर्गुणी नहीं मिला।

हमें सोचना है कि क्या सच है। हमें सोचना है कि कौन सच कह रहा है। दुर्योधन सच बोल रहा है या युधिष्ठिर!

ज्ञानीवृंद कहते हैं कि दोनों ही सच है। आप दुनिया को जैसी नजरों से देखते हैं, दुनिया आपको वैसी ही नजर आती है। इसलिए दुनिया कैसी है, यह पूछने से पहले आप यह पूछो कि आप कैसे हैं। इस पर गुरुनानक के समय का एक दृष्टांत है।

गुरुनानक एक गाँव से गुजर रहे थे। थक जाने पर वे एक पेड़ के नीचे बैठ गए। वहाँ कुछ बुजुर्ग बैठे थे। उन बुजुर्गों के पास कुछ लोग आए। आने वालों के माथे पर गठरी थी। उनके पैरों में चप्पल था और कपड़े फटे हुए थे। वे बुजर्गों से पूछते हैं कि यह गाँव कैसा है, हम इसमें बसना चाहते हैं।

बुजुर्ग, आने वालों से पूछते हैं कि बताओ तुम जिस गाँव से आए हो वह गाँव कैसा था?

राहगीर कहने लगे कि पुराना गाँव तो बहुत गंदा था। वहाँ के लोग बहुत लड़ाका थे। बात-बात पर झगड़ा करते थे।

तब एक बुजुर्ग ने कहा कि यह गाँव भी वैसा ही है। तुम यहाँ मत बसो, आगे जाओ।

थोड़ी देर में एक और जत्था बुजुर्गों के पास पहुँचता है और पूछता है कि यह गाँव कैसा है?

बुजुर्ग फिर पूछते हैं कि तुम्हारा पिछला गाँव कैसा था?

सूरत से सज्जन दिखने वाले लोग कहते हैं कि हमारा पिछला गाँव बहुत अच्छा था। वहाँ के लोग बहुत प्यारे थे। आपस में

बहुत सहयोग करते थे। बड़े प्रेम से बात किया करते थे। ये कहते हुए उनकी आँख भर गयी।

तब वे बुजुर्ग कहते हैं कि यह गाँव भी बहुत अच्छा है। यहाँ के लोग भी बड़े सज्जन हैं। तुम लोग यहाँ रहो, तुम्हें कोई समस्या नहीं होगी।

ये मंजर देखकर गुरुनानक बुजुर्ग से पूछते हैं कि परस्पर विरोधी जवाब आपने कैसे दिए?

बुजुर्ग ने कहा कि गाँव और शहर कभी अच्छा व बुरा नहीं होता है। जब आप अच्छे होते हो तो गाँव अच्छा हो जाता है और जब आप बुरे होते हैं तब वही गाँव बुरा हो जाता है। यह आप पर निर्भर है कि आप कैसे हैं। आपका वर्तन, व्यवहार और सलीका कैसा है। आप दूसरों से कैसे पेश आते हैं। जैसा आप दूसरों के साथ व्यवहार करते हैं दूसरे भी आप के साथ वैसा ही व्यवहार करते हैं।

मुख्य बात यह है कि आपकी दृष्टि दूसरों में क्या खोजती है। आपकी दृष्टि गुणों को खोजती है तो आपको गुण नजर आएंगे। जैसे युधिष्ठिर को गुण नजर आए। श्री कृष्ण को सड़ी हुई कुतिया के सुन्दर दाँत नजर आए। भगवान को गौशालक का भव्यत्व नजर आया। जमालि की निकट भविता (जल्दी मोक्ष जाने की योग्यता) नजर आयी। उन्होंने चण्डकौशिक के भी दुर्गुणों को नहीं देखा। अर्जुन माली को भी दीक्षा प्रदान की। उन्होंने इसलिए ऐसा किया क्योंकि उनकी दृष्टि गुणपरक थी। भगवान प्रत्येक प्राणी के गुणों को देखते हैं। उन गुणों की अनुमोदना करते हैं। उन गुणों का प्रकटीकरण करते

हैं। उन गुणों के प्रति अहोभाव पैदा करते हैं। एवन्ता कुमार ने दीक्षा के पश्चात् पानी में नाव तिरायी तब भगवान उनके चरमशरीरी गुण का प्रकटीकरण करते हैं। यह भगवान की अद्भुत गुणपरक दृष्टि थी।

गुणपरक दृष्टि क्या है?

एक आदमी के पास दिल्ली साउथ एक्स में 10,000 गज की कोठी है। मुंबई के बालकेश्वर में 1000 स्क्वायर फीट का फ्लैट है। गुजरात, महाराष्ट्र, कर्नाटक और हिमाचल में फैक्ट्री है। अरबों का टर्नओवर है और करोड़ों की कमाई। हजारों कर्मचारी हैं। विदेशों में भी माल की सप्लाई होती है। घर-परिवार, गाड़ी-बंगला, बैंक बैलेंस सभी कुछ है। वह आदमी साउथ ब्लॉक में अपनी पैठ रखता है। रायसीना हिल्स तक भी उसकी पहुँच है। सी.एम., पी.एम., प्रेसिडेंट और फॉरेन एम्बेस्डर भी उसकी डॉयरेक्ट पहुँच में हैं। पद, प्रतिष्ठा, अधिकार सारी चीजें उसे प्राप्त हैं।

एक बार उसके यहाँ इ डी की रेड पड़ी। पूछताछ में पता चला कि 1975 में बांग्लादेश से भागकर भारत आया था और इसके पास आधार कार्ड नहीं है। बताएं उस आदमी का क्या हश्र होगा!

क्या उसे पुलिस बचा पाएगी?

क्या गृह मंत्रालय उसकी पैरवी कर पाएगा?

क्या साउथ ब्लॉक उसकी गवाही दे पाएगा?

क्या रायसीना हिल्स उसके साथ खड़ी रह पाएगी?

उसकी सारी पहुँच, सारी पैठ, पकड़, प्रभाव, जज्बा, जुनून, अधिकार सभी कुछ उस पर होने वाली कार्यवाही से महफूज

कर पाएंगे ?

कौन देगा उसे पनाह ?

कौन बनेगा उसकी शरणगाह ?

कौन बचा पाएगा उसे ?

कोई नहीं बचा पाएगा। इसलिए नहीं बचा पाएगा क्योंकि उसके पास आधार कार्ड नहीं है। दिल्ली के शाहीनबाग में दिया गया धरना आधार कार्ड के लिए ही तो था।

बांग्लादेश के रोहिंग्या आधार कार्ड के लिए ही तो लड़ाई लड़ रहे हैं। कश्मीर के शरणार्थी आधार कार्ड के लिए ही तो जद्दोजहद करते हैं। इस समय दुनियाभर में करीब 9 करोड़ लोग रिफ्यूजी हैं। इनका कोई ठिकाना नहीं है। इनके पास कहीं की भी नागरिकता नहीं है। आधार कार्ड होने पर एक चाय वाला भी भारत का पी.एम. बन सकता है। दलित महिला भी भारत की राष्ट्रपति बन सकती है। आधार कार्ड नहीं होने पर अरबपति को भी देश छोड़कर भागना पड़ सकता है।

इसी प्रकार नित्य 11 सामायिक करने वाला, रात्रि संवर करने वाला, 5000 गाथा का स्वाध्याय करने वाला, सैकड़ों थोकड़ों का जानकर, जैन तत्त्व विद्या में पारंगत, द्रव्यानुयोग का तलस्पर्शी ज्ञाता, लाखों-करोड़ों का दान देने वाला, अनेक सत् कार्यों में सम्पत्ति व्यय करने वाला, छोटी वय में अनेकानेक चार खन्द आदि पचखाण लेने वाला, साधु-साध्वियों की भरपूर सेवा करने वाला **श्रावक गुणपरक दृष्टि नहीं रखता तो बाकी के सारे गुण बेकार हैं।**

एक चद्दर रखनेवाला, रूखी-सूखी गोचरी करनेवाला, एकांतर, बेले-बेले, तेले-तेले, अठाई और मासखमण की तपस्या से शरीर को सुखाने वाला, अनेकानेक आगमों को कठंस्थ करने वाला, जुबान पर थोकड़े बैठाने वाला, संस्कृत, प्राकृत, अंग्रेजी, अपभ्रंश आदि अनेक भाषाओं का ज्ञाता, गुरु महाराज का आशीर्वाद प्राप्त, प्रवचन शक्ति सबल, मेधा शक्ति प्रबल, तर्क शक्ति पैनी, मौनी, ध्यानी, उग्रविहारी, दृष्टि संयमी, वाणी संयमी, काय संयमी जैसे अनेकानेक सद्गुणों का धारक साधु या श्रमण यदि गुणपरक दृष्टि का स्वामी नहीं है तो इतने सारे गुण???

जैसे बिना आधार कार्ड वाले अरबपति को कोई नहीं बचा सकता, वैसे ही उपर्युक्त गुणों से सम्पन्न श्रावक और साधु को दुर्गति से कोई नहीं बचा सकता। आप अपने सहवर्ती श्रावक-श्राविका, साधु-साध्वी में क्या देख रहे हैं यह महत्त्वपूर्ण है।

जैसे नींव के बिना महल की कल्पना नहीं की जा सकती, वैसे ही गुणपरक दृष्टि के बिना साधना की कल्पना नहीं की जा सकती।

जैसे पानी के बिना फसल की कल्पना नहीं की जा सकती, वैसे ही गुणपरक दृष्टि के बिना साधना की कल्पना नहीं की जा सकती।

जैसे मस्तक पर मुकुट का महत्त्व है, वैसे ही गुणों में गुणपरक दृष्टि का महत्त्व है।

जैसे रत्नों में वैडूर्य मणि श्रेष्ठ है, वैसे ही गुणपरक दृष्टि

सर्वश्रेष्ठ है। चिंतन करें कि हम इस गुण को कितना विकसित कर पाए हैं। चिंतन करें कि क्या हम युधिष्ठिर के समान सद्गुणों को देख पाते हैं।

गुणपरक दृष्टि को तीन चरणों में बाँटा जा सकता है–

पहला, सामने वाले व्यक्ति के गुणों को देखना तथा दोषों की उपेक्षा करना।

दूसरा, गुणों की स्तुति करना एवं स्वयं के जीवन में उन गुणों को उतारने की कोशिश करना। साथ ही जो गुण विद्यमान हैं उन्हें मलिन न होने देना।

तीसरा, यदि दूसरा व्यक्ति हमारे दोषों को बताए तो उसे आनंदपूर्वक स्वीकार करना।

गुणपरक दृष्टि अर्थात् सुखपरक दृष्टि। गुणानुरागी मनुष्य अर्थात् सुखानुरागी मनुष्य। संक्षेप में गुणानुरागी मनुष्य अर्थात् सुखी मनुष्य। जो जितना गुणानुरागी होता है, वह उतना ही सुखी होता है। गुणपरक दृष्टि से सकारात्मकता आती है। जिन्दगी जीने का तरीका समझ में आता है। गुणपरक दृष्टि से दूसरे लोगों के उत्साह में वृद्धि होती है। जब आप किसी के गुण के बारे में बात करते हैं तो उसका मन खिल जाता है। वह खुश होने लगता है। उसे लगता है कि मैं कुछ हूँ। उसके आत्मविश्वास में वृद्धि होती है। ये गुणपरक दृष्टि का प्रभाव है। संसार के सर्वश्रेष्ठ श्रुतज्ञानी गणधर भगवान होते हैं। उनके भीतर भी गुणपरक दृष्टि कूट–कूट कर भरी होती है।

कल्पना करें कि एक मनुष्य गणधर भगवान के पास आता है। भगवान उसे वात्सल्य भरी अमिय दृष्टि से देखते हैं और पूछते हैं

कि क्या तुम्हें नवकार मंत्र आता है? नहीं आने पर कहते हैं, अच्छा कोई बात नहीं, तुम बहुत गुणवान हो। तुम नवकार सीखो। वह नवकार सीखता है। फिर गुरु वन्दन सिखाते हैं। वह भी सीखता है। फिर वे इच्छाकारेणं सिखाते हैं। वह भी सीखता है। इसी तरह क्रमशः लोगस्स, नमोत्थुणं, सामायिक, प्रतिक्रमण सीखता चला जाता है।

भगवान उसका उत्साहवर्धन करते हैं। उसे संयम के लिए प्रेरित करते हैं। वह संयम ग्रहण कर लेता है। भगवान नवदीक्षित का उत्साह बढ़ाते हुए अंगशास्त्र पढ़ाते हैं। पढ़ते-पढ़ते वह धीरे-धीरे 11 अंगशास्त्र का ज्ञाता हो जाता है। फिर वे उसके गुणों की सराहना करते हैं। उपबृंहण करते हैं। इससे वह अपने उत्साह को बढ़ाता चला जाता है और द्वादशांगी में पारंगत हो जाता है। गुणपरक दृष्टि से जिनशासन को एक ज्ञानी मुनि मिलते हैं।

सुकोमल शरीर का स्वामी, राजपरिवार से संबंध रखने वाला एक दीक्षित मुनि, जिसे नवकारसी करने का भी अभ्यास नहीं है, वह धीरे-धीरे नवकारसी तो करता ही है, पोरसी, एकासन, उपवास आदि तप के लिए भी प्रेरित होता है। गणधर भगवान उसके उत्साह को बढ़ाते चले जाते हैं। उसके गुणों का बखान करते चले जाते हैं। धीरे-धीरे वह मुनि तप प्रेमी बन जाता है। मास-मासखमण जैसी तपस्या से जुड़ जाता है। जिनशासन को एक तपस्वी मुनि की भेंट प्राप्त हो जाती है। यह गुणपरक दृष्टि का ही प्रभाव है।

बहुत ही संकोची, शर्मीला, डरपोक व्यक्ति गणधर भगवान के सानिध्य में आता है तो भगवान उसे ज्ञान देते हैं। वह धीरे-धीरे

याचना करता है। अटकता है। उत्साह गिरता है। भगवान फिर बढ़ाते हैं। फिर गिरता है। भगवान फिर बढ़ाते हैं। तत्त्वों में शंका आती है तो विषय भूल जाता है। उत्साह मंद पड़ने लगता है। गणधर भगवान उसका उत्साह फिर बढ़ाते हैं। उसकी त्रुटियों की जगह उसके गुणों को उभारते हैं। लगातार उत्साहवर्धन से वह एक महानवादी प्रवचनकार बन जाता है। यह गुणपरक दृष्टि की भेंट है।

गुणपरक दृष्टि होने पर भीतर एक निश्वार्थ प्रेम होता है। उस प्रेम की सहायता से हर कोई लाभान्वित होता है। मन में रहे हुए हीन विचार भाग जाते हैं। यह गुणपरक दृष्टि का प्रभाव है।

तीर्थंकर, केवली, गणधर, पूर्वधारी, मनः पर्यवज्ञानी, अवधिज्ञानी, श्रुतज्ञानी, आहारक, लब्धिधारी, सर्वाक्षर सन्नीपाती, जिनकल्पी, स्थविरकल्पी, परिहार विशुद्धि के आराधक सभी के लिए एक गुण परम आवश्यक है। वह है गुणपरक दृष्टि। यूं कह दें कि गुणपरक दृष्टि होगी तभी ये सारी लब्धियाँ प्राप्त हो सकेंगी।

गुणपरक दृष्टि से अनेक आत्माएं तर जाती हैं। शाल, महाशाल ने देशना सुनी और दोनों भाई संसार से संयम की ओर बढ़ गए। वे अपने भांजे और बहनोई को राज्य संभला कर धर्म की सुन्दर आराधना करते हुए विचरण करने लगे। दोनों भाई भगवान से आज्ञा प्राप्त करके गौतम स्वामी के साथ अपनी नगरी में जाते हैं। प्रजा अपने राजा को देखकर हर्षित होती है। वहाँ गौतम स्वामी की देशना सुनकर शाल, महाशाल के सांसारिक बहन, बहनोई और भांजे संयम ग्रहण करते हैं। मार्ग में शाल, महशाल अपने बहन, बहनोई और भांजे के

बारे में विचार करते हैं कि ये लोग कितने अच्छे हैं कि इन्होंने हमारे दीक्षा लेने के मार्ग को सुगम बना दिया। हमें प्रपंचों से मुक्त कर दिया। अहोभावों से उनको नमस्कार करते हैं। मन से उनके सद्गुणों का विचार करते हैं। दूसरी तरफ बहन विचार करती है कि मेरे दोनों भाई कितने अच्छे हैं कि उन्होंने शादी के बाद भी पूरा राज्य हमें सौंप दिया। भांजा विचार करता है कि मामा कितने अच्छे हैं जो हमें राज्य भी दिया और संयम की प्रेरणा भी दी। बहनोई भी दोनों सालों के प्रति प्रशस्त विचार करते हैं। इस प्रकार पाँचों एक-दूसरे के प्रति गुणपरक दृष्टि रखते हैं। पाँचों के अध्यवसाय शुरू होते हैं। निर्मल बनते हैं। वर्धमान परिणाम के प्रभाव से पृष्ठचम्पा के राजा शाल और महाशाल केवलज्ञानी बन जाते हैं। यह कहानी गुणपरक दृष्टि का अद्भुत उदाहरण है।

जगत में गुणपरक दृष्टि वाले लोग बहुत कम होते हैं। दूसरों के गुणों को देखना एवं उन्हें धारण करना बहुत कठिन है क्योंकि इसके लिए अपने अहंकार को मिटाकर अपने भीतर बहुमान पैदा करना होता है।

गुणपरक दृष्टि को हासिल करने, उसे बढ़ाने और सुरक्षित रखने के लिए कुछ उपाय करने होंगे। वे उपाय हैं-

1. **गुणी जन सत्संग :** गुणियों की संगत करेंगे तो हमारे भीतर गुणपरक दृष्टि बढ़ेगी। तपस्वी की संगत से तपस्या, ज्ञानी की संगत से ज्ञान, सेवाभावी की संगत से सेवा, मृदुभाषी की संगत से मृदुता, भक्त हृदयी की संगत से भक्ति की वृद्धि होती है। इससे स्पष्ट

है कि जो जैसे गुणों का धारक है, उससे वैसे गुणों की वृद्धि होती है। जब हम गुणियों की संगत में रहेंगे तब अनचाहे ही हमारी नजर में गुण आएंगे। स्वाध्यायी मुनि के पास बैठने से उसका स्वाध्याय रूपी गुण दिखेगा ही। तपस्वी मुनि के पास बैठने पर उसकी तपस्या आँखों से ओझल नहीं हो सकती। मृदुभाषी मुनि की मीठी वाणी कानों में पड़ेगी ही। जैसे व्यक्ति आपके आस-पास होंगे आप अनचाहे ही वैसे बनने लगेंगे। इसलिए गुणपरक दृष्टि का विकास चाहते हो तो गुणी जनों की संगत करनी चाहिए।

2. **वर्णवाद :** भगवान ने श्री ठाणांग सूत्र में फरमाया कि वर्णवाद करने से सुलभबोधि की प्राप्ति होती है। यहाँ ध्यान रखना है कि कोई वर्णवाद तभी करेगा, जब गुणों को देखेगा। गुणों को देखे बिना वर्णवाद नहीं किया जा सकता। वर्णवाद करने से समकित निर्मल होती है। संघ के छोटे से छोटे सदस्य का गुणानुवाद करना वर्णवाद है। ऐसा करने से वह सदस्य आगे बढ़ेगा। उसके उत्साह में वृद्धि होगी। उसका आत्मविश्वास उसे धर्म से जोड़े रखेगा और एक जिनशासन भक्त संघ को प्राप्त होगा।

केवली भगवान सभी जीवों के गुण और अवगुण जानते हैं। उनसे कुछ छिपा हुआ नहीं है परन्तु वे जीवात्मा के गुणों का कथन करते हैं। हम भी संकल्प करें कि अधिक से अधिक वर्णवाद करेंगे। गलतियां किससे नहीं होती हैं! क्या हमसे गलतियां नहीं होती! कोई हमारी गलती बतायेगा तो हमें कैसा लगेगा! जैसे हम अपने गुणों को सुनना चाहते हैं, वैसे ही हर जीव अपने गुणों को सुनना चाहता है।

भगवान तो अजीव में भी गुणों की बात कर रहे हैं। भगवान नारकी जीवन में भी गुण कथन कर रहे हैं। हमें देखना है कि हम क्या कर रहे हैं।

हमें वर्णवाद ही करना चाहिए। कहा भी गया है–

''गुण कहना गुण लखना गुण को ही फैलाना
नाथ मेरे जीवन का एक यही हो गाना।।''

वर्णवाद से सकारात्मक वातावरण का निर्माण होता है। इससे आपके चारों तरफ सकारात्मकता फैलती है। लोगों में आपकी सकारात्मक छवि बनती है। वैसे इन सबकी हमें आवश्यकता ही नहीं है। भगवान तो फरमाते हैं कि इससे दर्शन की विशुद्धि होती है। अरिहंत भगवान के गुणों को देखना, सिद्ध भगवान के गुणों को देखना, आचार्य भगवन् के गुणों को देखना, उपाध्याय प्रवर के गुणों को देखना, साधु-साध्वी, श्रावक-श्राविकाओं के गुणों को देखना, चतुर्विध संघ के गुणों को देखना और कहना हमारे जीवन का लक्ष्य होना चाहिए। स्वाध्याय कम हो तो चलेगा, तपस्या कम हो तो भी चलेगा, दान कम हो तो भी चलेगा पर गुणकथन में किसी प्रकार की कंजूसी नहीं करना।

3. **सहायक भाव :** सहायक भाव का गुण साधु-साध्वी एवं श्रावक-श्राविका सभी के लिए आवश्यक है। साधु और साध्वी के तल पर सहायक भाव यह होगा कि वे आपस में ज्ञान में सहयोग दें। अपने सहवर्ती के ज्ञानवर्धन में सहयोगी बनें। उससे भी महत्वपूर्ण है कि बिना स्वार्थ के अग्लान भाव से परस्पर सेवा में सहयोग करें। कोई

नवदीक्षित ग्लान दशा में हो और उसके साथ आत्मीय व्यवहार होगा तब उसके परिवारिकजन को जानकारी होने पर जिनशासन के प्रति उनका अहोभाव बढ़ता है। बुखार आदि में उनका ध्यान रखेंगे, मन लगा कर सेवा करते हैं तो परिजनों के मन में संघ, गुरु एवं जिनशासन के प्रति अहोभाव बढ़ता है। यह गुणपरक दृष्टि से ही संभव हो पाएगा।

श्रावक अपने श्रावकों को, संघ के सदस्यों को संभाले, आर्थिक सहयोग दे। कैसे दे, इस पर गुरुदेव श्री लालजी म. सा. बीकानेर के श्रावक की बात कहते हैं कि वे किसी मध्यम किंवा परिस्थिति वाले भाई को देखते तो चुपके से उसे अलग बुला कर कहते कि बच्चों को छाछ लेने भेजना। छाछ लेने आने पर छाछ वाले बर्तन में सिक्के डाल देते। ऐसी गुप्त सहायक वृत्ति सभी श्रावकों में पैदा हो। गुणपरक दृष्टि से परस्पर सहयोग की भावना पैदा होती है। हम गुरुदेव की प्रार्थना में गाते हैं- 'स्वधर्मी को सहयोग मिले।' स्वधर्मी सहयोग तभी हो पाएगा, जब गुणपरक दृष्टि होगी। साधु-साध्वी निस्वार्थ भाव से ज्ञान-ध्यान और सेवा में परस्पर सहयोग करेंगे तथा श्रावक-श्राविका भी आपस में सहयोग की वृत्ति को बढ़ाएंगे। साधर्मियों का आर्थिक सहयोग बिना किसी नाम की अपेक्षा के करेंगे। कई स्वधर्मी बहुत मुश्किल से अपना जीवन यापन करते हैं पर स्वाभिमान के कारण वे किसी से कुछ माँगने की हिम्मत नहीं कर पाते। उन्हें डर रहता है कि मैं किसी से माँगूंगा तो मेरी इज्जत बाजार में आ जाएगी। वे अपना पेट काटकर बच्चों को पढ़ाते हैं।

बहुत मुश्किल से घर का खर्चा चलाते हैं पर किसी के सामने हाथ नहीं फैलाते। पुराने श्रावकों के बारे में सुनते थे कि वे इस हाथ से दान देते थे तो उस हाथ को मालूम नहीं पड़ता था। आप देखें कि क्या कोई माँ अपने पुत्र की सेवा करने पर किसी से कहती है कि मैंने सेवा की। नहीं कहती। उसकी सेवा गुप्त होती है। वैसे ही हम भी संघ सेवा, स्वधर्मी सेवा गुप्त तरीके से करें। इससे हम वास्तव में जिनशासन के सच्चे सेवक बन पाएंगे।

4. अहोभाव : गुणपरक दृष्टि से अहोभाव पैदा होता है। अहोभाव से वर्णवाद हुए बिना नहीं रहता। अहोभाव अतिविशिष्ट गुण है, जो गुणपरक दृष्टि का ही फल है। अहोभाव के बिना सहायक भाव नहीं हो पाएगा और सहायक भाव के बिना समूह भाव (टीम वर्क) नहीं हो पाएगा। संघ का कार्य टीम वर्क है। हम सभी जानते हैं कि टीम में हर एक का अपना महत्त्व होता है। सूई की जगह सूई और तलवार की जगह तलवार काम आती है। सूई को फेंक देने या तलवार को तोड़ डालने से टीम वर्क नहीं हो पाएगा। संघ में ज्ञानवान, धनवान, तपस्वी, सेवाभावी, वक्ता, पुरुषार्थी, बालक, युवक, बुजुर्ग, श्राविका, साध्वी, साधु सबकी आवश्यकता है। आप किसी को भी नजरअंदाज नहीं कर पाओगे। इन सबको एक सूत्र में पिरोने की अमता अहोभाव में है। अहोभाव के धागे से संघ के सभी मोती पिरोये जा सकते हैं। अहोभाव से गुणपरक दृष्टि प्राप्त होती है।

अहोभाव, बहुमान, भक्ति एक-दूसरे से जुड़े हुए हैं। ऐसा भी कह सकते हैं कि ये एक ही हैं। गुणपरक दृष्टि हमें बहुत व्यापक

दृष्टिकोण देती है। हम गुण पूजक हैं, व्यक्ति पूजक या जड़ पूजक नहीं। हमारे महामंत्र में किसी व्यक्ति का नाम नहीं है। उसमें गुणियों का नाम है। मेरी भावना में हम कहते हैं–

गुणीजनों को देख हृदय में मेरे प्रेम उमड़ आवे।
बने जहाँ तक उनकी सेवा करके यह मन सुख पावे।

गुणियों के प्रति अहोभाव, वर्णवाद, सहायक भाव होना चाहिए, चाहे किसी भी देश–सम्प्रदाय का हो। 'नमो लोए सव्व साहुणं' में किस सम्प्रदाय के साधु का नाम है? 'णमो सिद्धाणम' में किस सम्प्रदाय के सिद्धों का नाम है? वहाँ तो अन्य लिंग सिद्ध और गृहस्थ लिंग सिद्ध भी कहा है। अर्थात् गुणियों को नमस्कार किया गया है। किसी एक सीमा में नहीं बाँधा गया है। जो गुणी हैं, उन्हें नमस्कार करने की बात कही गयी है।

गुणपरक दृष्टि को आचार्य श्री के ही शब्दों में कहे तो गुरुदेव ने गुणोत्कीर्तन वर्ष में कहा था कि हर श्रावक–श्राविका गुण कीर्तन, गुण संरक्षण और गुण संवर्धन से जुड़े। इसमें गुण संरक्षण और गुण संवर्धन बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। बबूल के पेड़ की रक्षा नहीं की जाती। वह तो ऐसे ही बढ़ता चला जाता है। आम और गुलाब की रक्षा की जाती है। गाजर घास को उगाने के लिए कहाँ मेहनत की जाती है परन्तु गन्ने की फसल कमरतोड़ मेहनत माँगती है। सद्गुणों का ही संरक्षण आवश्यक है, दुर्गुण से तो हम भरे हुए हैं ही।

एक राजा ने तीर्थयात्रा पर जाने का विचार किया। तीर्थयात्रा पर जाने से पूर्व उसके मन में उत्तराधिकारी के चयन की अभिलाषा

थी। उसने अपने पुत्रों को बुलाकर गुलाब के कुछ बीज उनके हाथों में देते हुए कहा कि मैं तीर्थयात्रा से लौटकर आऊँगा तब तुमसे ये बीज माँगूंगा। राजा तीर्थयात्रा पर निकल पड़ा। राजा के जाने के बाद पुत्र अपने-अपने कामों में लग गए। उधर राजा मन लगाकर तीर्थयात्रा कर रहा था। कोई एक साल तक वह घूमता रहा। एक साल बाद वह अपने नगर में पहुँचा तब पूरा नगर सजाया गया। राज्य के अनेक लोग उसके स्वागत के लिए राजधानी में आए हुए थे। राजा बड़ा खुश था। राजा ने दुल्हन सी सजी हुई अपनी राजधानी का भ्रमण किया। जुलूस निकला और ढोल-नगाड़ों के साथ राजदरबार पहुंचा। राजदरबार में अनेक मित्र राजा, अधीनस्थ राजा, राव, उमराव, सेनापति, सेठ आए हुए थे। आये हुए सभी लोग अपनी तरफ से कुछ न कुछ उपहार राजा के लिए लाए थे। राजा उन उपहारों को खुशी-खुशी ग्रहण कर रहा था और अपनी ओर से भी दे रहा था। एक भव्य महोत्सव राज्य में मनाया गया। सबने स्वागत अभिभाषण दिया। राजा ने भी अपना वक्तव्य दिया।

सब कुछ हो जाने पर राजा ने अपने पुत्रों को बुलाया और कहा कि तीर्थयात्रा पर जाने से पहले मैंने तुम्हें कुछ बीज दिए थे, वे कहाँ हैं। एक पुत्र के अतिरिक्त अन्य पुत्र उन बीजों को भूल ही गए थे। पूछने पर एक पुत्र को याद आया और वह बीज लेने दौड़ा। उसने अपने सन्दूक में बीजों को संभाल कर रखा था। उसने बीज निकालकर देखा तो वे सड़ चुके थे। एक पुत्र ने कहा कि मैंने उन्हें खेत में बोया है चलिए देखने। राजा अपने रथ पर बैठकर उस खेत

तक पहुंचा तो वहाँ पत्थर पड़े थे और घास उगी थी। वहाँ काँटे बिखरे थे और पशु बैठे थे।

जो पुत्र बीजों को याद किए था, उसके चेहरे पर आभा थी। अपनी चमकदार आँखों से पिता की ओर देखकर वह कहता है, पिताजी! चलिए मैं आपको वह बीज दिखाता हूँ। पिताजी उसके चेहरे को देखकर आश्वस्त हुए और अपने ही रथ पर बैठाकर उसे ले चले।

एक घाटी के पास पहुंचकर पुत्र ने कहा, अब आप रथ छोड़ दें, कुछ दूर पैदल चलना होगा। राजा रथ छोड़ कर पैदल चलने लगा। राजा जैसे-जैसे आगे बढ़ा, वैसे-वैसे वातावरण की फिजां बदलने लगी। खुशबू आने लगी। ठंडी-ठंडी लहरों और गुलाब की गंध उसके नासापुट में भरने लगी। जहाँ तक उसकी नजर जा रही थी पूरी जमीन गुलाबी दिख रही थी। खिले हुए झूमते फूल राजा के मन को मोहित करने लगे। यह दृश्य देख कर राजा बड़ा प्रसन्न हुआ। उसने अपने पुत्र को गले से लगा लिया और उसके साथ राजदरबार पहुँचा। अगले दिन उस पुत्र की ताजपोशी कर दी।

राजा ने अपने अन्य पुत्रों से पूछा कि तुमने क्या किया था तब किसी ने कहा कि हम तो भूल गए, हमें याद ही नहीं है। एक पुत्र ने कहा कि मैंने तो पेटी में संभाल के रख दिया था। एक ने कहा, मैंने तो जमीन में बो दिया था पर बोने के बाद मेरा ध्यान ही नहीं गया। विजेता पुत्र ने कहा कि पिताजी, आपके जाने के बाद मैंने राजधानी के श्रेष्ठ माली को बुलाया और उससे पूछा कि इन बीजों का क्या

किया जाए जिससे सम्राट खुश हो जाएं, तो उस माली ने उन बीजों को लिया और जमीन का चयन किया। फिर उस जमीन से काँटों एवं पत्थरों को हटाकर हल चलाया और उन्हें बो दिया। उनके लिए खाद-पानी की व्यवस्था की। उन्हें पक्षियों और जानवरों से बचाया तो पौधे लहलहा उठे। फिर कलियाँ फूटी, फूल खिले और और धीरे-धीरे एक बगीचा नाचने लगा।

गुरुदेव कहते हैं गुण संरक्षण और गुण संवर्धन करने के लिए। गुणों की रक्षा और संवर्धन दोनों जरूरी है। आपके जीवन में कोई गुण है तो उसकी रक्षा करें। साथ ही यह चिंतन करते रहें कि उस गुण को कैसे बढ़ाया जाए। बार-बार गुरु सान्निध्य, अहोभाव की खाद डाल कर उन बीजों को बढ़ाते चलें। ऐसा करने से जीवन एक दिन गुण रूपी फूलों का बगीचा बनकर नाचने लगेगा। जब हम गुणों का चिंतन करेंगे, उनका कीर्तन करेंगे तो हमारे भीतर स्वत: गुण संरक्षण और गुण संवर्धन होने लगेगा।

***

पहला बिन्दु गुणपरक दृष्टि पूरा हो चुका है...थोड़ा रुकिये...इस पर सोचिए...हम आपको ऐसे आगे नहीं बढ़ने देंगे।

रुकें, वादा करें अपने आप से कि इन बिन्दुओं को कम से कम 21 दिनों तक अपने जीवन शैली का हिस्सा बनाने की कोशिश करेंगे। वादा करें अपने आप से कि आप अगले 21 दिन तक ये करेंगे। 21 दिन तक इसलिए क्योंकि मनोवैज्ञानिक कहते हैं कि कोई भी क्रिया यदि 21 दिन तक लगातार की जाती है तो वह आदत बन जाती है। आप इसे अपने जीवन का हिस्सा बनाएं।

सप्ताह में एक बार पति/पत्नी/बच्चे/कर्मचारी की तारीफ करें। कहें कि

1. आप मुझे अच्छे लगते हैं।
2. कहें कि आपने फलां काम बहुत अच्छा किया।
3. आप आज बहुत सुंदर लग रहे हैं।
4. आपके कारण ही ये हो पाया है।
5. किसी से काम लेने के बाद उसे थैंक्यू कहें।
6. देवानुप्रिय/भाग्यशाली/पुण्यवान/आयुष्मान शब्दों के प्रयोग से दिन की शुरुआत करें।
7. सबसे जय जिनेन्द्र कहें।

2

छिद्रान्वेषण का त्याग

दोष दर्शन ना करें, दुर्गुण यह दुःखकर
कथन दोष करना नहीं, गुरु वचन सुखकर

2

छिद्रान्वेषण का त्याग

इस बिन्दु की शुरुआत एक प्रसिद्ध कहानी से करते हैं। एक शिष्य को यह पता चला कि मेरे गुरु के पास ऐसी चादर है जिसे किसी को ओढ़ा दिया जाए तो उस पर उस व्यक्ति के अंदर रहे हुए सारे दुर्गुण अंकित हो जाएंगे अर्थात् वह चादर उसके दुर्गुणों से छप जाएगी। यह पता चलने पर वह गुरु की सेवा मन लगाकर करने लगा। उसने गुरु को खुश करने का लक्ष्य बना लिया। उसकी सेवा से खुश हो कर गुरु कहने लगे कि माँग बच्चे माँग, क्या माँगता है।

शिष्य तो सालों से इसी क्षण की प्रतीक्षा में था। इसी के लिए तो वह सेवा कर रहा था। शिष्य ने झट से वह चादर माँग ली।

गुरु ने कहा कि रहने दे, ये तुम्हारे काम की नहीं है।

शिष्य जिद पर अड़ गया। उसने हठ पकड़ ली की मुझे तो वह चादर ही चाहिए।

गुरु जानते थे कि वह इस चादर को पचा नहीं पाएगा। उन्होंने उसे समझाने का बहुत प्रयास किया परन्तु बाल हठ के सामने आखिर में गुरु को झुकना पड़ा। उन्होंने वह चादर उसे दे दी।

शिष्य को तो खिलौना मिल गया। अब कोई भी आता तो वह उस पर चादर डाल देता। गाँव का सरपंच आया, पुजारी आया,

आश्रम का महंत आया, महंत की पत्नी आयी, महारानी आयी तो उसने इन सब पर चादर डाली। चादर डालने से उनके अंदर रहे हुए दुर्गण उस चादर पर छपने लगे। इस तरह एक-एक करके सबकी पोल पट्टी खुलने लगी। चादर पर छपने लगा कि यह व्यभिचारी है, इसने दूसरे का धन दबाया है, इसने धर्म का पैसा खाया है, इसका पर पुरुष से संबंध है, इसने चोरी की है, यह वेश्यावृत्ति करता है।

सबकी पोल-पट्टी जान कर शिष्य का दिमाग खराब होने लगा। वह मन में सोचने लगा कि मैं तो इन सबको बड़ा पाक-साफ समझता था किंतु ये तो बड़े पापी और दुर्गुणी निकले।

गुरु महाराज ये सब देख रहे थे। उन्होंने उसे समझाया पर वह नहीं माना। मानना तो दूर एक शाम आरती के समय जब गुरुजी साष्टांग प्रतिमा वंदन कर रहे थे तो उस नासमझ शिष्य ने गुरु जी पर भी वह चादर डाल दी। गुरु उस समय समाधि में थे इसलिए उन्हें कुछ पता न चला परन्तु उस शिष्य के मन में भूचाल आ गया। वह सोचने लगा कि गुरु जी भी ऐसे हैं! उसने चादर उठा कर कंधे पर डाली और आश्रम छोड़ कर भाग खड़ा हुआ।

गुरु समाधि से बाहर आए तो शिष्य को ढूँढा पर शिष्य नहीं मिला। उन्होंने अपने दूसरे शिष्यों को उसे पकड़ने के लिए भेजा। अन्य शिष्य पकड़ कर लाए तो गुरु ने कहा कि मैंने कहा था ना कि ये चादर मत लो, पर तुम नहीं माने। अपनी जिद पर अड़े रहे। तुम्हारी हठधर्मिता ने तुम्हें पतन के मार्ग पर बढ़ा दिया और तुम इतने पतित हो गए कि मुझे चादर ओढ़ा दी। मैं तुमसे पूछना चाहता हूँ कि तुमने

वो चादर कभी खुद को ओढ़ाई! ऐसा कह कर गुरु ने वह चादर उससे छीन कर उसको ओढ़ा दी। वह चादर क्षण मात्र में पूर्ण भर गयी। गुरु ने दुबारा ओढ़ाई तो फिर भर गयी। फिर ओढ़ाई फिर भर गयी। गुरु बार-बार ओढ़ाते गए, चादर बार-बार भरती गयी। उन्होंने शिष्य की ओर देखकर कहा कि देख, तू इतना दुर्गुणी है नहीं। मैं तुम्हें बचपन से जानता हूँ पर दूसरों के दोषों को देखने की प्रवृत्ति ने तुम्हें दुर्गुणों का समुद्र बना दिया। यदि तुम इस चादर का ऐसा उपयोग नहीं करते तो तुम्हारा यह पतन नहीं होता। गुरु ने उससे कहा कि तुम छिद्रान्वेषण का त्याग करो, यही तुम्हारे लिए श्रेष्ठ है।

छिद्रान्वेषण की प्रवृत्ति वाला किसी को नहीं छोड़ता। सामने चाहे तीर्थंकर ही क्यों न हों। संस्कृत के एक कवि लिखते हैं **'वपुरेव तवाचष्टे साक्षात् मिष्टान्नभोजनम्।'** इसका अर्थ है काहे का वीतरागी! तुम्हारा शरीर देखकर तो लग रहा है कि तुम भोजन भट्ट, मोदकप्रिय हो। किसी छिद्रान्वेषी ने कहा कि छत्रातिछत्र, चंवर, देव दुंदुभि, स्वर्ण सिंहासन, पुष्प वृष्टि और वीतरागता! ये कैसी वीतरागता है! ये वीतरागता है तो भोगी अवस्था किसे कहेंगे!

देखने वालों ने चन्द्रमा में दोष देख लिया। सूरज को भी नहीं छोड़ा। नदी की बुराई की। पहाड़ों पर व्यंग्य किया। देवताओं की निंदा की। माता-पिता, गुरु को नहीं छोड़ा। विश्व के किसी भी व्यक्ति को नहीं छोड़ा। संस्कृत साहित्य में एक श्लोक का अर्थ है कि परमात्मा एक व्यक्ति का रूप धरकर पृथ्वी का निरीक्षण करने निकले, देखने निकले कि मैंने इतनी सुन्दर सृष्टि की है, इसका लोगों

में क्या प्रभाव है। वह ब्राह्मण का रूप बनाकर धरती पर घूमने लगे। वह लोगों से पूछने लगे कि भगवान कैसे हैं, उनकी बनाई गयी धरती कैसी है तो किसी ने कहा कि भगवान तो मूर्ख हैं, इतनी भयंकर गर्मी बनाई। किसी ने कहा कि इतनी भयंकर सर्दी बनाई। किसी ने कहा कि परमात्मा बुद्धिहीन था जो पूरा समुद्र खारा कर दिया। पीने लायक बनाता तो कभी पीने के पानी की कमी नहीं पड़ती। किसी ने कहा कि इतने पहाड़ बनाए कि उसे काट-काट कर हमें रास्ते बनाने पड़ते हैं। किसी ने कहा कि इतने बड़े-बड़े जंगल बना दिए कि खेती की जमीन ही नहीं छोड़ी। कहते हैं कि ये सब सुनकर परमात्मा बेहोश हो गये। उनके अनुचर उन्हें लेकर बैकुंठ में चले गए। तब से वह कभी धरती पर आने की हिम्मत नहीं करते। यह दृष्टांत छिद्रान्वेषण को दर्शाता है।

गुरुदेव फरमाते हैं कि निंदा, अहंकार का भोजन है। आप बुराई करते हैं तो आपके अहंकार को पोषण मिलता है। अहंकारी व्यक्ति ही निंदा करता है। निंदा करने वाले के विनय का नाश हो जाता है। छिद्रान्वेषण की प्रवृत्ति हमें दुर्गुणों का सम्राट बना सकती है। निगोद की यात्रा पर ले जा सकती है।

वह तपस्या करता है और क्रोध करता है। वह ज्ञानी है और अहंकारी है। वह दानी है और अहंकारी है। बहुत गलत है, ऐसा क्यों? होने दो। वह क्रोधी है ज्ञानी होने के बाद और तुम तो तपस्या न होने पर भी क्रोधी हो। कौन ज्यादा गलत है? **तुम दान न देकर भी अहंकारी हो** और वो दान देकर अहंकारी है। कौन ज्यादा गलत है?

चंडकौशिक ने पूर्व भव में गुरु के दुर्गुणों का छिद्रान्वेषण किया, जिससे गुरु-शिष्य दोनों का अहित हुआ।

छिद्रान्वेषण के कारण 'कुलबालुक' सातवीं नरक में गया। छिद्रान्वेषण के कारण संगम, तीर्थंकर भगवान को भयंकर उपसर्ग देने वाला बना। कमठ नौ भवों तक वैरानुबंध कर बैठा। गोशालक ने इसी कुटैव के वश होकर तीर्थंकर भगवान की अशातना की। जमालि **निह्नव** बन बैठा। कोणिक पितृहंता बन गया। राक्षस ने अर्हन्नक और कामदेव श्रावक की परीक्षा ली। ऐसे ना मालूम कितने लोगों के उदाहरण इतिहास के पृष्ठों पर अंकित होंगे, जिन्होंने छिद्रान्वेषण की बलि वेदी पर अपना सर्वस्व भस्मीभूत कर लिया। छिद्रान्वेषण बड़ा दुर्गुण है।

भगवान फरमाते हैं- "**न सिया तोत्त-गवेसए**" अर्थात् हे जीव! तू कभी भी छिद्रान्वेषी मत बन। छिद्रान्वेषण ऐसा छिद्र है जिससे आत्मसमाधि का रिसाव होता है। जिससे प्रसन्नता का क्षरण होता है। खुशी कपूर की भाँति उड़ जाती है। अविनय-अशातना उसके परम मित्र हैं। क्रोध उसका भाई है। मान उसका पिता है। माया उसकी बहन है। द्वेष उसका पुत्र है। पैशुन्य और पर परिवाद, अभ्याख्यान उसके अनुचर हैं। दास-दासी हैं। अर्थात् छिद्रान्वेषण से सारे दोष आपके जीवन में दौड़े चले आते हैं। उसकी अंतिम निष्पत्ति मिथ्यात्व उसकी माँ है। मिथ्यात्वी जीवन कभी भी संसार पारावार का पार नहीं पा सकता। वह अनंतानंत काल तक भव भ्रमण करता ही रहता है।

इसलिए गुरुदेव फरमाते हैं, ऐ शिष्य! छिद्रान्वेषण का त्याग करो। छिद्रान्वेषी का कोई मित्र नहीं हो सकता। उसके पास कोई बैठना नहीं चाहेगा। कोई उससे बात नहीं करना चाहेगा। लोग बात करने में हिचकिचाएंगे। नजरें चुराएंगे। रास्ता बदल लेंगे। संक्षेप में वे सबसे कट जाएंगे। जिसके भीतर छिद्रान्वेषण नामक दुर्गुण घर बसा लेता है, वह किसी को नहीं बख्शता। वह सबका दोष दर्शन करेगा। सब की बुराई करना उसका शगल हो जाएगा।

आधुनिकता के इस दौर में आई टी के क्षेत्र में अतिरिक्त तरक्की हुई है। 2 जी, 4 जी के बाद अब 5 जी भी बाजार में आ चुका है। पहले 1 जी बी डेटा एक महीना चला करता था, अब 1 दिन में 3-3 जी बी डेटा भी कम पड़ जाते हैं। कहाँ जाता है 3 जी बी? 3 जी बी यह जानने में चला जाता है कि दूसरा क्या कर रहा है। उसने क्या खाया। उसने क्या पहना। उसने क्या कहा। किसी की छोटी-सी गलती भी नोट कर ली जाती है और उसका मैसेज वायरल हो जाता है।

वॉट्सएप ग्रुप का एडमिन किसी के प्रति भी मनगढ़ंत बातें अपने ग्रुप में डाल सकता है। मनगढ़ंत बातें डालना क्या दर्शाता है?

किसी ने कहा है कि स्मार्टफोन रखने से कोई स्मार्ट नहीं होता बल्कि स्मार्ट बनता है अपने विचारों से। इन दिनों हमारा समय फिजूल की गॉसिप में जाता है। इस दौर में PNPC सबके सिर चढ़ कर बोल रही है। PNPC अर्थात् पर निंदा पर चर्चा। इसमें कोई पीछे नहीं है। क्या साधु, क्या साध्वी, क्या श्रावक और क्या श्राविका। संघ

के धर्म मंच को भी इसने नहीं छोड़ा है। पुराना अध्यक्ष ऐसा है, पुराना मंत्री ऐसा है। वर्तमान अध्यक्ष ऐसा है, वर्तमान मंत्री ऐसा है। फलां श्रावक ऐसा, फलां साधु वैसा। फलां सम्प्रदाय में ऐसा हुआ, उनके साधु ने ऐसा किया। क्या सच है, क्या झूठ है, क्या सही है क्या गलत है, कितना सच है कितना झूठ है कितना सही है कितना गलत है, इसकी समीक्षा किए बिना हम तो बस PNPC में लगे रह कर ऐसे वीडियो या मैसेज को फॉरवर्ड करने में अपनी शान समझते हैं। हम यह भी नहीं सोचते कि हमारे मैसेज से कितना वैचारिक प्रदूषण फैलेगा! कितने लोगों के मन में कैसे-कैसे विचार आएंगे! ऐसा करने पर दूसरे संघ वालों अथवा अजैनों पर क्या प्रभाव पड़ेगा! वे हमारे बारे में क्या सोचेंगे!

कई 'पुण्यवान' तो उन सूचनाओं में गुरुजनों को भी घसीट लेते हैं। उनको ये नहीं पता चलता कि हमारी यह प्रवृत्ति कितने चिकने कर्मों का बंध कराने वाली है। कितने लोगों को धर्म से दूर कराने वाली है। कितने लोगों की भावना गिराने वाली है। कितने लोगों के मन को विचलित करने वाली है। इन सबका कारण होता है सिर्फ और सिर्फ आपका एक मैसेज...

गुरुदेव फरमाते हैं कि जो बात है मुझसे कहो। चर्चाओं का बाजार गर्म मत करो। एक तरफ हम बड़े गुरुभक्त बनते हैं और दूसरी ओर उनकी आज्ञा की अवहेलना करते हैं। हम संकल्प करें कि किसी भी प्रकार से ऐसी प्रवृत्ति में भाग नहीं लेंगे। कदाचित किसी की कोई गलती ध्यान में भी आ जाए तो हम उसे प्रचारित नहीं करेंगे। जैसे

कोई हमारी गलती प्रचारित करे तो हमें अच्छा नहीं लगता, वैसे ही किसी को भी अपने बारे में ऐसा करना अच्छा नहीं लगता। छिद्रान्वेषण से अवर्णवाद पैदा होता है। आक्षेप-प्रत्याक्षेप पैदा होते हैं। अशातना का भाव बढ़ता जाता है।

छिद्रान्वेषण होगा तो अवर्णवाद हुए बिना नहीं रहेगा। मुँह से कुछ न कुछ अवांछित निकलेगा ही। अवर्णवाद हमें दुर्लभ बोधि बनाता है। दर्शन को मलिन करता है। सम्यक्त्व रूपी रत्न को गंदा करता है।

छिद्रान्वेषण से आक्षेप-प्रत्याक्षेप होते हैं। बात तू-तू, मैं-मैं में बदल जाती है। छिद्रान्वेषी छींटाकशी, तंज और व्यंग्य करने से भी नहीं चूकता। बात बढ़ते-बढ़ते कोर्ट कचहरी तक चली जाती है।

आप देखिए, कितने भाई-भाई, पिता-पुत्र, गुरु-शिष्य, समाज के ट्रस्टी, मंदिर के पुजारी, कोर्ट कचहरी तक पहुँच जाते हैं।

अशातना छिन्द्रान्वेषण के कारण ही होती है। छिद्रान्वेषण होगा तो अशातना भी होगी। छिद्रान्वेषी गुरुजनों, साधु-साध्वियों, श्रावक-श्राविकाओं, छोटे-बड़ों की अशातना कर बैठता है। मेरी भावना में कहा गया है 'देख दूसरों की बढ़ती को कभी न ईर्ष्या भाव धरूं।' ईर्ष्या होने पर ही छिद्रान्वेषण होता है। इसलिए संकल्प करें कि प्रथम तो छिद्रान्वेषण करेंगे ही नहीं और कदाचित हो जाए तो उसको कहेंगे नहीं। उसको प्रचारित नहीं करेंगे। हमें दोषों को नहीं, गुणों को ढूंढ़ने का प्रयास एवं प्रयत्न करना चाहिए।

एक बात ध्यान में लेने जैसी है कि कोई काला है तो है,

आप क्यों कहते हैं। कोई गंजा है तो है, कोई मोटा है तो है, कोई काना है तो है, कोई अनपढ़ है तो है। आप को क्या पड़ी है कहने की। कह के आप कौन-सा तीर मार लेंगे! कह के आप कौन-सा नौ का तेरह कर लेंगे! आपके कहने से कोई बदलेगा तो नहीं! और तो और आप जिसको कह रहे हैं उसके दिल को ठेस पहुँचेगी। इसलिए छिद्रान्वेषण करें ही नहीं। हो जाए तो कहें नहीं।

आप मक्खी और हंस को देखे होंगे। हंस चोंच से दूध पी लेता है और पानी छोड़ देता है जबकि मक्खी सोलह शृंगार किये हुए किसी युवती के सिर पर छोटा-सा घाव है तो उस पर जाकर बैठती है। देखना है कि हम हंस जैसे हैं या मक्खी जैसे?

एक राजकुमारी ने एक सुअर का बच्चा पाला। राजा द्वारा बहुत मना करने पर भी उसने बाल हठ पकड़ ली। वह उसे सोने की जंजीर में बाँध कर रखती। उसे चाँदी के पात्रों में भोजन करवाती और मखमली शय्या पर अपने पास सुलाती। राजा बहुत मना करता पर...

एक बार राजकुमारी अपने साथ उसे अपनी सखी के यहाँ ले गयी। वहाँ उसे देखकर सभी हँसने लगे पर कौन कहे। उसके लिए चाँदी के पात्रों में मिष्टान्न रखा गया। सुअर खाने लगा। इतने में ही राज परिवार का कोई शिशु पोटी कर देता है। वह सुअर मिठाई छोड़कर विष्ठा खाने दौड़ पड़ता है। राजकुमारी को आत्मग्लानि होती है। सुअर की नजर मिठाई छोड़कर विष्ठा पर चली गई।

हमें अपनी नजर पर ध्यान देना है कि वह कहाँ जाती है। हमारी नजर सद्गुणों की तरफ जाती है या अवगुणों की ओर! हम किन

चीजों की चर्चा करते हैं! दोष रूपी विष्ठा हमें लुभाता है या हम गुणरूपी मिष्टान्न का आस्वादन करते हैं! हमें देखना है कि हम क्या कर रहे हैं! हम अपने मुँह से किसी की बुराई न करें।

किसी शायर ने कहा है–

''माना कि हम बुरे हैं
पर आप कहते हैं तो दिल दुखता है।''

किसी ने कहा है–

''बुरा जो देखन मैं चला बुरा न दिखिया कोय
जो घट शोधू आपणों मो सो बुरो न कोय''

हमें दूसरों के छिद्रों का अन्वेषण करने से पहले आत्मनिरीक्षण करना चाहिए। हम जब आत्मनिरीक्षण करेंगे तब पता चलेगा कि हम कैसे हैं।

''कबीर औगन ना गहे, गुन ही ली बीनी
घट–घट मधु के मधुप ज्यों, परमातम ही चीन्ही''

कबीर कहते हैं– अवगुन को मत ग्रहण करो। हो सके तो गुणों को लेना। जैसे भँवरा फूलों से पराग लेकर स्वयं को तृप्त करता है, वैसे ही हमें दूसरे के गुणों की ओर आकर्षित होना चाहिए। किसी के अवगुणों पर ध्यान नहीं देना चाहिए। अवगुणों को देखकर मन को मलिन नहीं करना चाहिए। यही आध्यात्मिक आरोग्यम् की शिक्षा है।

***

दूसरा बिन्दु छिद्रान्वेषण का त्याग पूरा हो चुका है। जैसे दूसरे बिन्दु के बाद थोड़ा सा रुके, सोचे वैसे ही पुन: रुकिए, सोचिए और आगे बढ़िए।

पुन: वादा करिए कि आगे के बिन्दुओं को पूर्व की भाँति 21 दिनों तक अपने जीवन शैली का हिस्सा बनाने की कोशिश करेंगे। वादा करें अपने आप से कि आप अगले 21 दिन तक ये करेंगे। इसे अपने जीवन का हिस्सा बनाएं।

1. किसी की गलती सबके सामने नहीं बताएं।
2. आप गलत हो ऐसा कहने की बजाय यह कहें कि ऐसा करते तो और अच्छा हो जाता।
3. वॉट्सएप पर गलत मैसेज नहीं डालें।
4. जहाँ बुराई हो रही हो वहाँ से उठ जाएं।
5. किसी को टोंट नहीं मारें।

③

इन्द्रिय निग्रह

वश में इन्द्रिय को रखो, आँख, नाक, मुख, कर्ण
शरीर की यतना करो, गुरु वचन का मर्म

3

इन्द्रिय निग्रह

एक बन्दर जंगल में घूम रहा था। उसने देखा की पानी का झरना बह रहा है। उसे प्यास लगी थी। उसने पानी पीने के लिए मुँह डाला। उसे लगा की पानी नहीं है फिर भी वह अपने आप को रोक नहीं पाया। उसका मुँह चिपक गया। दरअसल वह पानी नहीं था। वह शिलाजीत था। उसने वहाँ से मुँह हटाने की कोशिश की पर मुँह निकल नहीं पाया। मुँह निकालने के लिए उसने हाथ डाला तो हाथ भी चिपक गया। बंदर ने अपने आपको निकालने की जितनी कोशिश की, उतना ही चिपकता गया। बहुत कोशिश के बाद भी वह अपने आप को छुड़ा नहीं पाया। आखिरकार उसकी अकाल मृत्यु हो गयी। यदि वह इन्द्रिय निग्रह कर लेता तो शायद ऐसा नहीं होता।

इन्द्रिय निग्रह का अर्थ है पाँचों इन्द्रियों को निग्रहित करना। पाँच इन्द्रियाँ यानी कान, आँख, नाक, जीभ एवं त्वचा और निग्रहित करने का अर्थ है उनको अपने वश में रखना। इन्द्रियों का निग्रह करना, उनको अपने वश में रखना सिर्फ साधु के लिए ही जरूरी नहीं है, श्रावक और सद्गृहस्थ के लिए भी इसकी उपादेयता है।

इन्द्रियां ही विषयों को ग्रहण करती हैं। फिर उस पर राग-द्वेष होता है। राग-द्वेष के कारण आत्मा नए-नए कर्मों का बंध करती है। इन्द्रियाँ ज्ञान प्राप्ति का एक माध्यम हैं। उनसे हमें पदार्थ का

परिचय मिलता है। हमारी जानकारी बढ़ती है। दृश्य जगत से जुड़ने का माध्यम हैं इन्द्रियाँ। यदि पाँच में से एक भी इन्द्रिय न हो तो विकलता हमें दुखी करेगी।

आप सोचिए! आप कल्पना करके देखिए कि कान से सुनते नहीं हैं या आँख देखती नहीं है या शरीर लकवाग्रस्त हो गया तो आप की स्थिति क्या हो जाएगी! इनमें से एक भी घटना यदि घट जाए तो क्या आप खुश रह पाएंगे!

सोचिए कि ऐसा होने पर कितनी दयनीय हालत हो जाती है!

सोचिए गूंगे-बहरे लोगों के बारे में जो न कुछ सुन पाते हैं, न बोल पाते हैं।

और सोचिए अंधे लोगों के बारे में।

उफ! कितना दर्द होता है उनके जीवन में।

जिस दुनिया में वे हैं, उसे देखना भी उनके नसीब में नहीं है।

दुनिया को तो छोड़िए, वे अपनी माँ को नहीं देख सकते।

वे अपने पिता को नहीं देख सकते हैं।

अपनी पत्नी, अपने बच्चे, यहाँ तक की गुरु और प्रभु के भी दर्शन नहीं कर सकते।

हैलन किलर की जीवनी पढ़ने से पता चलता है कि अंधत्व क्या है। उसकी जीवनी में एक दर्द है। वह दर्द हर पन्ने पर महसूस होता है। उस महिला ने बिना आँखों के एक लम्बी आयु भोगी।

उस महिला के जीवन की कल्पना कीजिए और अपने आप

से पूछिए कि क्या मैं एक दिन भी बिना आँख खोले रह सकता हूँ? आँखों पर पट्टी बाँध कर रह सकता हूँ?

झांकिए शिवाजी के पुत्र शम्भा जी के जीवन में। झांकेंगे तो पाएंगे कि औरंगजेब ने शम्भा जी की जीभ काट दी थी। कटे हुए जीभ की कल्पना कर पूछिए अपने आप से कि क्या मैं एक दिन के लिए अपने होंठ सिल कर रह सकता हूँ!

सोचिए उस सैनिक के बारे में जिसे गोली लगने पर अपना पैर या हाथ कटवाना पड़ता है।

मोहम्मद गजनी ने पृथ्वीराज चौहान की आँखें फोड़ दी थी। शाहजहाँ ने 16000 कारीगरों के हाथ कटवा दिए थे। अंग्रेजों ने लाखों बुनकरों के हाथ काट दिए थे। शरीर से एक भी इन्द्रिय का कम हो जाना त्रासद होता है।

एक दिन कोई हमारी नाक बंद कर दे तो हमें कैसा लगेगा? हिटलर ने गैस चैम्बर में लोगों को दम घोंट कर मारा था। बताया जाता है कि गैस चैम्बर में एक बार में 5000 लोग भरे जाते थे और दिन में तीन बार ऐसा होता था। करीब दो सालों तक ऐसा चला। हिस्ट्री कहती है कि उस जहरीली दमघोंटू गैस के दुष्प्रभाव से 2-3 मिनट में लोग छटपटा कर मर जाते थे।

ब्लैक फंगस की बीमारी में हजारों लोगों ने अपनी आँखें खो दी। पार्किंसन नामक रोग में पूरा शरीर काँपता है। अंग-अंग काँपते हैं। पार्किंसन का रोगी चाहकर भी अपने हाथ-पैर और मस्तक का निग्रह नहीं कर पाता।

एक-एक इन्द्रिय महत्त्वपूर्ण है। हर इन्द्रिय की अपनी जरूरत है किंतु ध्यान देने की बात है कि हम इनका प्रयोग कैसे करते हैं। ध्यान देना है कि हमारी इन्द्रियों के घोड़े निग्रहित हैं या नहीं।

श्री ज्ञाताधर्म कथा सूत्र के 17वें अध्ययन में घोड़ों की कहानी दी गयी है। राजा कनककेतु अपने नगर हस्तीशीर्ष के व्यापारियों से कालिक द्वीप के घोड़ों के बारे में सुनते हैं। सुन कर राजा को लगता है कि वे घोड़े उनके पास होने चाहिए। उन घोड़ों को पकड़कर लाने के लिए राजा व्यापारियों को आज्ञा देते हैं।

राजा का आदेश सुन कर व्यापारी साजो-सामान के साथ तैयारी करते हैं। व्यापारी अपने साथ अनेक प्रकार की वीणा, आँखों को लुभानेवाले, रसनेन्द्रिय को प्रिय और पाँचों इन्द्रियों के अनुकूल पदार्थों को रखकर कालिक द्वीप के उस जगह पहुँचे जहाँ घोड़े बैठते तथा सोते थे।

वहाँ उन्होंने कहीं आँखों को लुभाने वाली वस्तुएँ बिखेर दी तो कहीं नाक को प्रिय लगने वाले सुगंधित द्रव्य फैला दिए और जाल बिछा कर छुप गए। घोड़े जब वहाँ आए तो उन्हें कुछ नया अनुभव हुआ। वहाँ उत्तम शब्द, रस, स्पर्श रूप और गंध युक्त वस्तुएं रखी थी। ऐसा उन्होंने पहले कभी न देखा था न जाना था और न ही कभी वैसा अनुभव किया था। कई घोड़े उन पदार्थों के प्रति आसक्त नहीं हुए। उनमें उनके प्रति लोभ नहीं हुआ। ऐसे घोड़े उन पदार्थों से बहुत दूर रह कर भयरहित सुखपूर्वक विचरण करने लगे, जबकि कई घोड़े रंग और गंध पर मोहित हो गए। उस पर आसक्त हो कर उनका

सेवन करने में प्रवृत्त हो गए। उनका आस्वादन करने में कुछ घोड़ों की गर्दन और पैर जाल में फँस गए। घोड़ों को पकड़ने की नीयत से आये लोगों ने उन घोड़ों को पकड़ लिया। घोड़ों को पकड़ कर उन्हें जहाज में लाद कर हस्तीशीर्ष नगर कनककेतु राजा के पास पहुँच गए। वहाँ उन घोड़ों को चाबुक से पीट-पीट कर प्रशिक्षित किया गया।

भगवान फरमाते हैं कि जो साधु दीक्षित होकर पाँच इन्द्रियों के विषय भोगों में आसक्त होते है वे संसार में भटकते हैं और उनका निग्रह करनेवाले सुखपूर्वक रहते हैं। संक्षेप में इन्द्रिय निग्रह करनेवालों को लाभ होता है और जो इन्द्रियों का निग्रह नहीं कर पाते वे दुखी होते हैं।

बात केवल साधुओं की नहीं है। सांसारिक कार्यों में भी यदि इन्द्रिय निग्रह न हो तो सफलता मिलना असंभव है। हमें पाँच इन्द्रियाँ प्राप्त हैं। इन्द्रियों के साथ मन की भी हमें प्राप्ति हुई है। अनंतानंत जीव ऐसे हैं जिन्हें एक ही इन्द्रिय प्राप्त है। दो इन्द्रिय वाले और कम हैं। तीन इन्द्रिय वाले उससे भी कम हैं। चार इन्द्रिय वाले उससे भी कम हैं। इस लोक में सबसे कम जीव ऐसे हैं जिन्हें पाँचों इन्द्रियाँ प्राप्त हैं। उनमें भी ऐसे लोग थोड़े हैं जिन्हें जिनवाणी श्रवण करने का अवसर प्राप्त हुआ। इन्द्रिय निग्रह की प्रेरणा पानेवाले तो और थोड़े हैं। इससे भी कम लोग ऐसे होते हैं जो इन्द्रिय निग्रह के विषय को समझते हैं।

हम दिनचर्या में देखें कि हमारे भीतर किस हद तक इन्द्रिय निग्रह है!

ध्यान दें कि क्या हम पाँच इन्द्रियों के विषयों से निज को रोक पाते हैं!

विचार करें कि क्या हम भागते हुए मन को रोक पाते हैं!

शास्त्र हमें बार-बार इन्द्रिय निग्रह की प्रेरणा दे रहे हैं। शास्त्रों में **पंचनिग्गहणा धीरा** कह कर सम्बोधित किया गया है। धीर पुरुष ही पाँच इन्द्रियों का निग्रह कर पाते हैं। अधीर उनके विषयों में उलझते जाते हैं। इन्द्रिय निग्रह नहीं होने पर आसक्ति भाव बढ़ता चला जाता है। आसक्ति भाव बढ़ने से वह बड़े-बड़े पाप कर बैठता है। बादशाह अकबर रसनेन्द्रिय में इतना आसक्त था कि रोज नाश्ते में 200 चिड़िया की जीभ का मांस खाता था। आचार्य जवाहर के सम्पर्क में एक अंग्रेज आया। उसके मांसाहार की लिस्ट देखेंगे तो आश्चर्य होगा। ऐसा सुना गया है कि चीन, जापान, रूस आदि देशों में लोग खाने में कच्चे साँप का सलाद लेते हैं। अब तो मानव भ्रूण भी वहाँ के पाँच सितारा होटलों में सर्व होने लगा है। वे लोग कॉकरोच, तिलचट्टे को मुखवास के रूप में खाते हैं। एक जाति विशेष के लोग जिंदा सुअर को उल्टा लटकाकर उसके नीचे भट्ठी सुलगा देते हैं। इससे वह तड़प-तड़पकर भयंकर रुदन करता हुआ पकता है। चिकन का सूप बहुत फेमस है। इसके लिए जिंदा मुर्गियों को मिक्सर में फेंट दिया जाता है। इन सबके सेवन का कारण रसनेन्द्रिय का अनिग्रह ही तो है।

जैन कुल में जन्म लेने वाले बच्चे भी आजकल अण्डे आदि का सेवन करते सुने जाते हैं। उन्हें वह बड़ा अच्छा लगता है।

शाकाहार जिस संस्कृति का प्राण है, उस संस्कृति में पैदा होने वाले लोग रसना का निग्रह न करने के कारण न जाने कितने कुकृत्य कर बैठते हैं। चॉकलेट, बिस्कुट, जैली, मैगी जैसे न जाने कितने पदार्थों के निर्माण में बहुत सारी कंपनियां किसी भी प्रकार ध्यान नहीं रखती और हम सिर्फ रसनेन्द्रिय के वश होकर उसका उपभोग करते हैं।

आध्यात्मिक आरोग्यम् कहता है कि इन्द्रिय निग्रह करो। एक मूवी बनने में क्या-क्या नहीं होता। मूवी बनाने में हीरो, हीरोइन, प्रोड्यूसर, डायरेक्टर, कलाकार, सह कलाकार होते हैं।

क्या ये सब लोग शाकाहारी होते हैं? क्या इनके चरित्र का कोई स्तर होता है?

न मालूम कितनी मुर्गियाँ और भैंसे ये खा लेते हैं। एक्शन शॉट प्राय: हीरो करता ही नहीं है। उसकी जगह दूसरा स्टंट करता है। कई बार उसकी मौत भी हो जाती है। ये सब सिर्फ चक्षुरिंद्रिय अनिग्रह का परिणाम है। कुली की शूटिंग में अभिताभ की जो हालत हुई उसे कौन नहीं जानता है।

ऐसा हिंसात्मक खेल कई लोगों के साथ होता है। ये सिर्फ आँखों के मनोरंजन के लिए है। बॉलीवुड, हॉलीवुड, टालीवुड में अरबों रुपया खर्च होता है। मूवी बनने में कैमरे झूठ क्रिएट करते हैं और दर्शक उसे देखकर गुमराह होते हैं। सभ्य कहलाने वाले समाज के लिए एक बात और सोचने वाली है कि वह सालाना कई हजार करोड़ की पोर्न मूवीज देख लेता है।

राजकुंद्रा पोर्न मूवीज को लेकर ही 2020-21 में मुसीबत

में फँस गए थे। दिल्ली के एक स्कूल के छात्र ने अपनी हरकतों से बवाल खड़ा कर दिया था। सब जानते ही हैं कि कितना वल्गर कंटेट इंटरनेट पर उपलब्ध है। यह समाज किस और जा रहा है। कितने विरोधाभाषों में जी रहा है। एक ओर महिला सशक्तिकरण की बात की जाती है और दूसरी ओर महिलाओं को कैसे-कैसे रूप में देखा और दिखाया जाता है। बेटी, पोती और माँ की उम्र की महिलाओं की चेष्टाओं को देखने में भी हम कोई विचार नहीं करते।

लेकिन कब तक नहीं करेंगे!

विचार करना होगा। बिना देर किए करना होगा।

विचार करिए कि क्या यह इन्द्रिय निग्रह है?

विचार करिए कि क्या हम सभ्य कहे जाने योग्य हैं?

मंथन करिए कि क्या हम श्रावक कहलाने लायक हैं?

सोचिए कि क्या हम इनसान की हैसियत रखते भी हैं।

विचार करेंगे तो पाएंगे कि जानवर भी इस तरह की हरकतें नहीं करते होंगे और हम ऐसे दृश्यों को देख कर अपने को मलिन और दूषित करते जाते हैं।

भगवान फरमाते हैं कि भोग वासनाएं बढ़ाने से बढ़ती हैं और घटाने से घटती हैं।

'न कामभोगा समयं उवेंति'

जब ऐसे दृश्य हम देखेंगे तो हमारे भीतर किसी भी विजातीय को देखकर विकार भाव नहीं आएगा? क्या साधु-साध्वियों को देखकर हम अपनी दृष्टि निर्मल रख पाएंगे? इसका

जवाब होगा 'शायद नहीं।' इसलिए हमें इस तरह की प्रवृत्ति का त्याग करना चाहिए।

कानों में पड़ने वाले शब्द और उन पर होने वाले राग-द्वेष कर्मों का बंधन कराते हैं।

हमें कैसे शब्द पसन्द हैं। तैमूरलंग अपनी आत्मकथा में लिखता है कि मुझे मारकाट की आवाज बहुत अच्छी लगती है। ये श्रोतेन्द्रिय का निग्रह नहीं है। आधुनिक समय में गीत-संगीत में कैसे-कैसे शब्दों का प्रयोग हो रहा है। उनमें कितनी अश्लीलता है। एक समय था जब संगीत को साधना कहा जाता था पर अब क्या कहा जाए! राखी सावंत ने किस तरह से अपने शरीर का प्रदर्शन किया! उर्फी जावेद शरीर का कैसा प्रदर्शन कर रही है! सुंदर रूप के लिए सोफिया लॉरेन और कई अन्य अभिनेत्रियों ने प्लास्टिक सर्जरी करा रखी थी। 2022 में एक कन्नड़ अभिनेत्री चेतना राज प्लास्टिक सर्जरी के कारण मर गयी। अभिनेत्रियों द्वारा प्लास्टिक सर्जरी कराए जाने के पीछे सिर्फ और सिर्फ एक कारण होता है, दर्शकों का मनोरंजन करना। अपने शरीर को पतला रखने के लिए वे मेहनत भी खूब करती हैं। उनके द्वारा की जानेवाली जी तोड़ मेहनत उन्हें एनोरेक्सिया का रोगी बना देती है। इस रोग में व्यक्ति अपने आप को पतला रखने के लिए भयंकर प्रताड़ना देता है।

पता है कि आप सब इसे पढ़ कर एक बारगी इन सबका त्याग नहीं कर पाएंगे, परन्तु जब इस पर विचार करेंगे, ठंडे दिमाग से सोचेंगे तो निश्चित ही त्याग करने की दिशा में पहला कदम बढ़ाएंगे।

एक कदम बढ़ाने से जो सुखद अनुभूति आपको होगी वह और आगे कदम बढ़ाने के लिए आत्मा को प्रेरित करेगी। फिर किसी को कहना नहीं पड़ेगा। फिर कोई किताब नहीं पढ़नी पड़ेगी।

फिल्म जगत द्वारा संस्कृति की जो धज्जियां उड़ाई जाती हैं, वह अक्षम्य हैं। विशेषज्ञ कहते हैं कि इसीलिए हिन्दी फिल्में अपना जलवा बिखरने में नाकाम हो रही हैं। वहीं दक्षिण भारतीय फिल्में संस्कृति से जुड़ी होने के कारण बॉक्स ऑफिस पर कमाल कर रही हैं। इसमें छोटे पर्दे भी पीछे नहीं हैं। कुछ रियलिटी शो तो सारी हद पार कर गए हैं। न मालूम हमारा सेंसर बोर्ड क्या कर रहा है! शायद वह गांधी जी के उन तीन बंदरों का अनुकरण कर रहा है जिनके आँख, कान और मुँह बंद थे। आए दिन घट रही बलात्कार की घटना के लिए फिल्में कम जिम्मेदार नहीं हैं। एक सर्वे के मुताबिक बलात्कार करने वाले लोग किसी न किसी पोर्न से प्रेरित होते हैं। पोर्न देखनेवाले अधिकांश लोग नशा करते हैं और नशे में अकाज कर बैठते हैं।

बाल्मिकि रामायण में लक्ष्मण से जुड़ी एक घटना का वर्णन है। वहाँ लिखा गया है–

नाहं जानामि केयूरे, नाहं जानामि कुण्डले।
नूपुरे त्वमभिजानामि, नित्यं पादाभिवन्दनात्।।

लक्ष्मण कहते हैं कि मैं सीता माता के बाजूबंद और कुंडल को नहीं जानता हूँ, परन्तु भाभी के नूपुर और पायल के बारे में मुझे पता है। नित्य चरण स्पर्श करते समय उसे मैंने देखा है।

12 साल जिनकी सेवा में रहे उनके कुंडल नहीं देखे।

संस्कृति के ऐसे सपूत जय हो आपकी।

इसे कहते हैं इन्द्रिय निग्रह। युवाओं को यह बात समझनी चाहिए कि वे वासना और उत्तेजना को जितना भड़काएंगे, वह उतनी भड़कती जाएगी। भगवान इन्द्रिय निग्रह की बात करते हैं क्योंकि इन्द्रियों को कितना भी भोगा जाए मन कभी नहीं भरता। स्पर्शनेन्द्रिय की बात भी कर ही लेते हैं। विज्ञान ने पिछली सदी में आविष्कारों की बाढ़ ला दी। पुराने जमाने में हाथ पंखे हुआ करते थे। आजकल कूलर, ए.सी. जैसी चीजें हो गयी हैं। एक ए.सी. से निकलने वाली गैस ग्लोबल वार्मिंग में कितना सपोर्ट करती है, यह जानने और समझने की बात है। वैज्ञानिक चिल्ला रहे हैं कि ओजोन में छेद हो रहा है पर बहरे बने लोग शरीर की सुविधा के लिए, आराम के लिए नए-नए आविष्कार करते जा रहे हैं, जो ओजोन परत की छेद को बढ़ा ही रहे हैं। लोग उसके दुष्परिणामों की तरफ से आँख बंद किए बैठे हैं। आँख बंद कर लेने से सामने दिख रहा खतरा टल नहीं जाता।

रोल्स रायस कार का सीट कवर गाय के चमड़े से बनाने की बात सामने आती है। छः स्केन्डीनेवियन गाय का चमड़ा एक रोल्स रायस कार का सीट कवर बनाने में लगता है। नरम चमड़े के जूते, कोट, बेल्ट आदि बनाने के लिए गर्भवती गायों के उदर से बछड़े को निकाल कर उसके चमड़े से बनाते हैं। इसके लिए नृशंस तरीके अपनाए जाते हैं। आदमी के शरीर को सुख देने के लिए खरगोश, मगरमच्छ आदि कितने प्राणियों की हत्या कर दी जाती है। राजा-

महाराजा का युग चला गया। एक-एक राजा के महल में 100-100 शेरों की खाल हुआ करती थी। अभी-अभी हमारे प्रधानमंत्री चीता लेकर आए हैं।

यह भी सोचने की बात है कि भारत से चीता लुप्त क्यों हो गया? सोचने की बात है कि चीता को दूसरे देश से क्यों लाना पड़ा?

स्पर्शन्द्रिय सुख के लिए आज लाखों रुपये की शॉल और कालीन बिकती है। उन्हें तैयार करने में अनेक जीवों की हिंसा होती है। यदि हम इन्द्रिय निग्रह करते हैं तो पर्यावरण के हितैषी हैं।

इको फ्रेंडली का नारा तो अब दिया गया है। भगवान ने तो पहले ही इन्द्रिय निग्रह की बात की है, जो इको फ्रेंडली से अधिक विचारणीय है।

राजा के हरम में सैकड़ों रानियाँ होती थीं। ऐसा करने वाला इन्द्रियों का दास ही कहा जाएगा। जरमनीदास की किताब महाराजा और महारानी ने राजघरानों में हड़कंप मचा दिया।

'फ्रीडम एट मिडनाइट' किताब में लेखक लिखता है कि पटियाला के राजा के हमाम में ऐसे फव्वारों का प्रयोग किया जाता था जिसका तापमान बाहर के तापमान से आधा या उससे भी कम होता। ऐसे कितने ही किस्सों से यह किताब भरी है जो स्पर्शन्द्रिय और रसनेन्द्रिय के अनिग्रह की व्याख्या करते हैं। हमें यह जानने की आवश्यकता है कि हम जितना इन्द्रिय निग्रह करेंगे उतना ही एकाग्र बनेंगे। जितना एकाग्र बनेंगे उतना ही हमारे ध्यान की धारा गहरी होती जाएगी।

दशवैकालिक की दूसरी चूलिका में कहा गया है–

अरक्खिओ जाइपहं उवेई,
सुरक्खिओ सव्वदुहाण मुच्चइ।

अर्थात् अनिग्रह नरक का द्वार है और निग्रह मोक्ष का।

आगमों का स्वाध्याय करें।

धन्ना अणगार के रसनेन्द्रिय विजय को देखें।

ऋषभदेव भगवान के वार्षिक तप को देखें।

भगवान महावीर के छमासी तप को देखें।

आतापना लेने वाले मुनियों को देखें।

लोच वाले, नंगे पैर चलने वाले स्पर्शनेन्द्रिय विजेताओं को देखें।

हुक्मीचंद जी म.सा. को याद करें जिन्होंने 13 वस्तुओं से आत्म निग्रह किया हुआ था। मीठा और तली हुई वस्तु का सम्पूर्ण त्याग किया था। एकान्तर की तपस्या करते थे और एक चादर ही रखते थे। ऐसा जबरदस्त निग्रह उन मुनियों का था। हम उनके ही शिष्य और अनुयायी हैं।

रंगू जी महाराज ने पाँच द्रव्यों की मर्यादा की; आँवला, हल्दी, छाछ, आटा और पानी।

तिंवरी के पीरदान जी के रसनेंद्रिय निग्रह को याद करें। उन्होंने गाय का बाटा भी समभाव से खा लिया।

आयम्बिल, उपवास करना, विगय का त्याग करना, नीवी करना और भोजन संयोजना रहित करना सभी इन्द्रिय निग्रह के

अप्रतिम उदाहरण हैं।

नमक कम-ज्यादा होने या खाना ठंडा होने पर भभकने वाले हम लोग एक बार अन्तर्हृदय से ऊपर उल्लिखित महापुरुषों का अनुमोदन करें और धन्यवाद दें जिससे हमारे भीतर भी वह निग्रह पैदा हो।

जिनशासन के नंदन वन में हमें इन सबको जानने-देखने के साथ वंदन-अनुमोदन का लाभ मिलना महान् पुण्य नहीं तो और क्या है!

यह सही है एक ही दिन में उन लोगों जैसा नहीं बना जा सकता पर यह भी सही है कि छोटी-छोटी चीजों से शुरू करके एक दिन उनके जैसा बन सकते हैं।

शुरू में चमड़े की वस्तु का त्याग करें।

रेड मार्क वाली वस्तुओं का त्याग करें।

मिक्स होटल में खाने का त्याग करें।

मसाज पार्लर का त्याग करें।

हुक्का पार्टी का त्याग करें।

पोर्न देखने का त्याग करें।

बोन फायर का त्याग करें।

ऐसा करने से इन्द्रिय निग्रह में मदद मिलेगी। भोजन संयम और द्रव्य मर्यादा जैसे छोटे-छोटे त्याग कर हम इन्द्रिय निग्रह की दिशा में आगे बढ़ सकते हैं। इन्द्रिय निग्रह संयम में सहायक बनता है। श्रावक जीवन में भी इन्द्रिय निग्रह की सहायता से साधना को प्रखर

बनाया जा सकता है। कई श्रावक भी सामायिक की साधना गहरी करते हैं। नवकार की आराधना उनकी गहरी होती चली जाती है। युवा अवस्था से ही प्रति रविवार प्रतिपूर्ण पौषध करने वाले मंदसौर के शिव सिंह जी चौधरी का अद्‌भुत इन्द्रिय निग्रह है। लगभग 50 वर्षों से वे प्रत्येक रविवार को पौषध करते हैं। उन्हें देव दर्शन होते हैं। युवा वय में विषयों में भागते मन पर उन्होंने इन्द्रिय निग्रह द्वारा लगाम लगाई है। ऐसा आप भी कर सकते हैं।

***

तीसरा बिन्दु इन्द्रिय निग्रह पूरा हो चुका है। पहले दो बिन्दुओं के बाद जैसे थोड़ा सा रुककर सोचे थे, वैसे ही पुन: रुकिए, सोचिए और आगे बढ़िए।

पुन: वादा करिए कि नीचे लिखे बिन्दुओं को पूर्व की भाँति 21 दिनों तक अपने जीवन शैली का हिस्सा बनाने की कोशिश करेंगे।

1. चमड़े की वस्तुओं का त्याग करना है।
2. रेड मार्क पदार्थों का त्याग करना है।
3. नशा का त्याग करना है।
4. बाजार के भोजन की मर्यादा रखना है।
5. जंक फूड़ की मर्यादा करना है।
6. गरमी के दिनों में कुछ देर बिना कूलर ए.सी. बैठने की कोशिश करें।

4

आत्मानुशासन

अनुशासन में जो रहे, करता नित्य विकास
अनुशासित श्री संघ हो कहते गुरु महाराज

4

आत्मानुशासन

नदी कल-कल छल-छल बहती है। उसकी अपनी गति है। बहती नदी जीवन कहलाती है। उसके किनारे कई नगर बसते हैं। उसके पानी का उपयोग सिंचाई में किया जाता है। नहाने और पीने में भी काम आता है उसका जल। अन्य अनेक प्रकार के जीवनोपयोगी कार्यों के लिए नदी से पानी की आपूर्ति होती है। अनेकानेक सभ्यताएँ नदी के किनारे विकसित हुई हैं।

जो इतिहास हमें पढ़ाया जाता है उसके अनुसार मनुष्य का पहला निवास नदी का किनारा था। नदी के किनारे सभ्यता के विकास में आसानी होती है इसलिए नदी का दूसरा नाम जीवन भी है। नदी के आस-पास का क्षेत्र हरा-भरा होता है। उस क्षेत्र में पशु-पक्षी और जानवर भी होते हैं। नदी से जितना दूर बढ़ते जाएंगे, उतना ही सूखापन देखने को मिलेगा। रेगिस्तान में दूर-दूर तक नदी देखने को नहीं मिलती। वैसे ऐसा भी सुना जाता है कि हजारों साल पहले रेगिस्तान में भी नदी बहती थी पर किसी कारण से वह धरती में समा गयी।

आज भी सरस्वती नदी की धाराएं रेगिस्तान में देखने को मिलती हैं। थार मरुस्थल से लेकर कच्छ और भुज के रण तक देखी

जाती हैं। धौलवीरा (गुजरात) को वर्ल्ड हेरिटेज साइट में यूनेस्को ने शामिल किया है। ऐसे प्रमाण मिलते हैं कि वहाँ सरस्वती के किनारे-किनारे करीब 4 हजार नगर बसे हुए थे। आए दिन नये-नये नगरों की खोज एवं प्राप्ति पुरातत्वविदों को खुदाई के माध्यम से होती है। संक्षेप में कहें तो जहाँ-जहाँ नदी है, वहाँ-वहाँ जीवन है। जहाँ नदी है वहाँ सभ्यता है। जहाँ नदी है वहाँ बस्ती है। जहाँ-जहाँ नदी है, वहाँ-वहाँ अन्न-जल की पूर्णता है। जिधर नदी है उधर हरियाली है। उधर बस्ती है। उधर समृद्धि है। उधर लहलहाते खेत हैं। नदी का दूसरा नाम तटी भी है। तटबंधों के मध्य में बहने वाली को तटी कहते हैं। नदी को बाँध कर नहरों के रूप में निकाला जाता है तो जहाँ नदी नहीं निकलती है उन क्षेत्रों में भी नदी का लाभ मिलता है।

1960 में नेहरू जी ने सतलुज नदी पर भाखड़ा नांगल बाँध बनाया था। उससे लाखों हेक्टेयर भूमि की सिंचाई हो रही है। उस नदी के पानी को बिजली बनाने के काम में भी लिया जाता है। यह नदी की उपयोगिता है। दो तटों के बीच मर्यादा पूर्वक बहने से नदी जीवनदायनी बन जाती है, पर जब नदी तटबंधों को तोड़ने लगती है...

...तो हाहाकार मच जाता है। प्रलय मच जाता है।

नदी ही नहीं, मर्यादा से बाहर होने पर हर वस्तु नुकसानदेह होती है।

यूरेनियम नाम का एक पदार्थ होता है। उसका उपयोग परमाणु बम बनाने में किया जाता है। इसे बनाने में ऊर्जा का

विखण्डन होता है। एक ग्राम यूरेनियम से उत्पन्न बिजली कई बाँधों से उत्पन्न बिजली से भी ज्यादा होती है। प्रसिद्ध वैज्ञानिक आइन्स्टीन ने जो शक्ति सिद्धांत प्रतिपादित किया है उसके अनुसार एक पुद्गल परमाणु से 3, 45, 960 कैलोरी (ऊर्जा) शक्ति उत्पन्न हो सकती है। वस्तुत: विज्ञान अभी तक निश्चित रूप से यह नहीं समझ पाया है कि एक परमाणु के अंदर यथार्थत: कितनी शक्ति है। फिर भी उक्त संदर्भ से आप यह अनुमान कर सकते हैं कि अनंत पुद्गल परमाणुओं से निर्मित इस शरीर में कितनी शक्ति हो सकती है।

एक अन्य वैज्ञानिक अनुमान के अनुसार 450 ग्राम पुद्गल द्रव्य को यदि पूर्णरूप से शक्ति में परिवर्तित किया जा सके तो उससे उतनी ही शक्ति (ऊर्जा) उत्पन्न होगी, जितनी 14 लाख टन कोयला जलाने पर प्राप्त होती है।

यूरोनियम की शक्ति को जब वैज्ञानिकों ने जाना तो उनकी आँखें खुली रह गईं। उसके बाद एक नए युग का सूत्रपात हुआ। 1920 से 1930 के दौर में पूरी दुनिया के वैज्ञानिक एटम की एनर्जी और उसके विखण्डन के प्रभाव को जाँचने और देखने में व्यस्त थे। पूरी दुनिया आइंस्टीन के सिद्धांत $E = mc^2$ की परिक्रमा कर रही थी। वैज्ञानिकों ने सालों दिन-रात मेहनत की। आखिर एक दिन उन्होंने एटम बम बना ही लिया किंतु उसके विखण्डन से निकलने वाली ऊर्जा का तब भी उनको अंदाजा नहीं था। उसका अंदाजा तब हुआ जब 'हिरोशिमा' पर बम गिराए गए। 6 अगस्त 1945 को हिरोशिमा पर गिराए गए बम की विभीषिका इतनी थी कि विस्फोट केन्द्र से

1600 गज की दूरी पर स्थित एक लोहार की दुकान का सारा लोहा पिघल गया। 900°C पर पिघलने वाला अभ्रक भस्म हो गया। अनुमानत: विस्फोट स्थल का तापमान 6000°C तक पहुँच गया था, जिससे नगर की 25% आबादी बम द्वारा जलने से, 50% उससे उत्पन्न जख्मों से, 25% उसके रेडिएशन से मर गयी। 90000 मकानों में से 62000 पूर्णत: ध्वस्त हो गए, 6000 मरम्मत योग्य बचे। नगर के मध्य भाग में 5 मकान ही ऐसे बचे थे जिनकी मरम्मत की जरूरत नहीं थी।

खेतों में उगे हुए आलू, शकरकन्द आदि खाने योग्य पक गये थे। लोगों के कण्ठ प्यास से सूख गये थे। पानी में लेट-लेट कर शरीर की जलन को शांत करने की कोशिश की गयी थी। बम की बीटा और गामा किरणों से अनेक रोग फैले। विस्फोट केन्द्र से आधा-आधा मील दूर तक की 95% आबादी मर गयी थी। बम प्रहार से 15-20 दिन के बाद बाल झड़ने शुरू हुए और 25-30 दिन बाद रक्त दोष उत्पन्न हुए। मसूड़ों से खून बहने लगा। चमड़ी पर दाने और फफोले आ गए। गला और मुँह सूज गया। पैरों से मोजे उतारने पर मोजे के साथ खाल भी खिंच गयी। धुएं से लोगों का दम घुटने लगा। नगर में रह रहे 2,45,000 लोगों में लगभग 1,00,000 लोग बम विस्फोट से मारे गए। पूरा आकाश पहले सफेद और फिर पीली चमक से भर गया। फिर पीले से लाल हुआ और उसके बाद नारंगी। जिसने उन रंगों को देर तक देखा वह अंधा हो गया। नगर की इमारतें ढह गईं। वृक्ष गिर पड़े।

सारा नगर जलते हुए अंगारों में बदल गया। अचेत अवस्था में लोगों ने ऐसा अनुभव किया जैसे सूर्य, रवि मंडल से गिर पड़ा है। ऐसे लगा जैसे करोड़ मील का उल्का पिंड उन पर बरस गया है। विश्व के इतिहास में यह निराला संहार था। समूचा नगर चार फीट ऊँची लपटों से घिर गया। 7 वर्ग मील क्षेत्र में एक भी प्राणी जीवित न बचा। साढ़े 7 मील की ऊँचाई तक धुआँ छा गया। नगर से 3-4 किमी. की दूरी पर खड़े आदमी झुलस गए। उनके शरीर नीले हो गए और फफोले पड़ गए। दस कोस तक पहाड़ों की हरियाली खत्म हो गयी। खेत सूख कर जल गए। 40 मील दूर एक अंधे आदमी की आँखें चौंधिया गयी। विस्फोट का धमाका 150 मील तक सुनाई दिया और 50 मील तक की धरती हिल गयी। इस महाभयानक विस्फोट की जानकारी कुछ ही घंटों में पूरे विश्व को हो गयी। हिटलर जिस महाअस्त्र की अंतिम क्षणों तक प्रतीक्षा करता रहा, वह अमेरिकियों के हाथों लगा और उसका शिकार हिरोशिमा नगर हुआ।

7 अगस्त 1945 को टू मैन ने सैन फ्रांसिस्को से रेडियो भाषण से हीरोशिमा पर गिराए गए बम का नाम लिटिल बॉय परमाणु बम बताते हुए उसके विध्वंसकारी प्रभाव पर प्रकाश डाला। पूरा संसार भयभीत हो गया। मानव मस्तिष्क की यह खोज जितनी हितकारी थी, उससे कई गुना अधिक विध्वंसकारी साबित हुई।

इस पूरे दृश्य का वर्णन आचार्य चतुरसेन ने किया है। आप सोच रहे होंगे कि इसे यहाँ पर क्यों लिखा जा रहा है। इसके उत्तर में निवेदन है कि यह ऊर्जा की व्याख्या है। अनुशासित ऊर्जा

जनकल्याणकारी होती है किंतु जब उससे अनुशासन का अंकुश हट जाता है तब वह प्रलयकारी हो जाती है। परमाणु बम जब संयंत्र में होता है और बड़े-बड़े इंजीनियरों के दिमाग और नजरों से निकलता है तो लाखों मेगावाट बिजली पैदा करनेवाला बन जाता है। उससे उत्पन्न बिजली सैकड़ों गाँवों और शहरों को जगमग कर देती है। सिंचाई के काम आती है।

नदी जब तक तटबंधों के बीच बहती है तभी तक वह जीवनदायनी कहलाती है। जब उसके तटबंध टूटते हैं तब वह बाढ़ के रूप में मृत्युदायनी बन जाती है। हिन्दुस्तान के पूर्वोत्तर में बहने वाली ब्रह्मपुत्र और कोसी का कहर हर कुछ सालों में देखने और सुनने को मिलता है।

हमारा शरीर भी तो पुद्गल द्रव्य से निर्मित है। कल्पना करिए 60 किलोग्राम भार वाले इस शरीर से कितनी शक्ति उत्पन्न हो सकती है!

इसी शक्ति के कारण वेदों में इस शरीर को 'ज्योतिषां-ज्योतिः' कहा गया है। यदि 6 नील (6, 00,00,00,00,00,000) कोशिकाएं हैं। शरीर के विभिन्न अंगों की कोशिकाएं एक-दूसरे से काफी भिन्न हैं। ये इतने सूक्ष्म आकार की होती हैं कि एक आलपीन की नोंक पर लगभग दस लाख कोशिकाएं अवस्थित रह सकती हैं, लेकिन बड़ी कोशिकाओं का आकार शुतुरमुर्ग के अण्डे के बराबर भी होता है।

यद्यपि मानव खोपड़ी का भार डेढ़ किलोग्राम से अधिक

नहीं होता; लेकिन इसमें ही 14 करोड़ कोशिका तंत्र होते हैं तथा 14 अरब 5 लाख ज्ञान तंतु मानव-मस्तिष्क में अवस्थित होते हैं। इसका क्षेत्रफल लगभग 26 वर्ग इंच होता है। मस्तिष्क में दो रंग के द्रव्य होते हैं- एक, धूसर (पीले से कुछ गहरा रंग) रंग का, यह स्मृति तथा बुद्धि को नियंत्रित करता है। जिस व्यक्ति के मस्तिष्क का यह द्रव्य अच्छा होता है, उसकी बुद्धि भी अच्छी होती है और दूसरा द्रव्य है सफेद रंग का, यह क्रिया का नियंत्रण करता है। मस्तिष्क के तीन भाग हैं- एक समस्त क्रिया-प्रक्रियाओं का संचालक है, दूसरा- मांसपेशियों का नियंत्रक है और तीसरा स्वचालित प्रक्रियाओं- साँस लेना, भोजन पचाना आदि क्रियाओं का नियंत्रक है।

अब जरा इस मस्तिष्क की कार्यक्षमता का अनुमान लगाइए। आँखें ही औसतन 50 लाख चित्र प्रतिदिन उतारती हैं। इसके अतिरिक्त ध्वनियों, गंधों, स्पर्शों, स्वादों का महासागर हर समय मनुष्य के चारों ओर लहराता रहता है। यह सारा तूफान मस्तिष्क से ही तो टकराता है और मस्तिष्क इन सबको समझता है, जानता है और निर्णय करता है। इन सबके अलावा नई-पुरानी स्मृतियाँ, अर्जित किया हुआ ज्ञान, इस जन्म और पिछले जन्मों के संस्कार, सुखद-दुःखद अनुभूतियाँ आदि सभी मस्तिष्क में ही संचित रहती हैं।

यह सारा कार्य कितना श्रमसाध्य और उलझनभरा है? किंतु इन सब कार्यों को अपने 14 अरब 5 लाख ज्ञान तंतुओं की सहायता से मस्तिष्क सुचारु रूप से नियमित संपन्न करता रहता है।

समस्त अतींद्रिय-क्षमताएं भी मस्तिष्क में ही भरी होती हैं; दूसरे शब्दों में मस्तिष्क ही अतींद्रिय क्षमताओं का स्रोत है।

सुना है आपने-

1. नियेशन नाम की एक महिला किसी भी अज्ञात व्यक्ति की कोई वस्तु छूकर उस व्यक्ति का भूत, वर्तमान और भविष्य बता देती है, जो पूर्णरूप से सत्य होता है।

2. कुमारी एडम, दूरवर्ती वस्तुओं को इस प्रकार बता देती है, मानो वह सामने खुली हुई पुस्तक को पढ़ रही हो।

3. कनाडा के मन:तत्व विशेषज्ञ डॉ. डब्ल्यु जी पेनफील्ड ने ऐसे विद्युदग्र (Electrode) की खोज कर ली है जिसका शरीर के किसी विशिष्ट स्थान की किसी विशिष्ट कोशिका के साथ संबंध जोड़ देने पर मनुष्य अपने भूतकाल की घटनाओं को अपनी आँखों के सामने चित्रपट की भांति प्रत्यक्ष देख सकता है।

4. रूसी वैज्ञानिक प्रो. एनाखीन ने एमीनोजाइन (Eminozine) नाम की ऐसी औषध का आविष्कार कर लिया है जो व्यक्ति को शारीरिक पीड़ा से छुटकारा दिला देती है।

5. एक ल्यूथिनियन लड़का विशिष्ट अतींद्रिय क्षमता का धनी है। वह किसी भी नई-पुरानी, जीवित-मृत भाषा यथा इंगलिश, फ्रेंच, लैटिन, ग्रीक आदि के शब्दों को उच्चारणकर्ता के साथ-साथ इस प्रकार बोलता जाता है, मानो वह उन भाषाओं का विद्वान हो और उसे पहले से ही यह ज्ञात हो कि उच्चारणकर्ता आगे कौन-सा शब्द बोलने वाला है।

यह तो हुई मानव मस्तिष्क की बात, जिसके बारे में कहा जा सकता है कि मनुष्य तो संसार का सर्वश्रेष्ठ प्राणी है और उसका मस्तिष्क अत्यंत ही विकसित तथा उच्चकोटि का है, लेकिन ऐसी ही अतींद्रिय क्षमताएं चूहे-बिल्ली आदि संज्ञी पंचेंद्रिय प्राणियों में भी पाई जाती हैं।

मस्तिष्क तो अनेक क्षमताओं और चमत्कारी शक्तियों का पुंज है ही, किंतु त्वचा की सामर्थ्य और शक्ति भी कम नहीं है। इसका महत्व भी अत्यधिक है।

मानव शरीर की चमड़ी का क्षेत्रफल लगभग 250 वर्ग फुट होता है और वजन 6 पौंड (लगभग 2 किलो, 750 ग्राम)। इसकी सबसे पतली तह आँखों पर होती है- लगभग 5 मिलीमीटर और सबसे मोटी तह पैर के तलवों में होती है- 6 मिलीमीटर। साधारणतया इसकी मोटाई 1 से 3 मिलीमीटर होती है। इसमें अगणित छेद होते हैं। प्राचीन धर्मशास्त्रों के अनुसार त्वचा में साढ़े तीन करोड़ रोम होते हैं। त्वचा, शरीर के लिए एयरकण्डीशनर का काम करती है, अर्थात् जाड़ों में यह शरीर को गर्म रखती है और गर्मियों में ठण्डा। इसकी छह परतें होती हैं, जो विभिन्न कार्य करती हैं।

त्वचा में इतनी अद्‌भुत क्षमताएँ भरी पड़ी हैं कि यदि उन्हें विकसित कर लिया जाए तो वह अन्य इंद्रियों का काम भी कर सकती है। त्वचा के द्वारा देखा जा सकता है, सूँघा जा सकता है, सुना जा सकता है, स्वाद लिया जा सकता है और स्पर्श तो उसका

प्रमुख कार्य है ही।

1. मास्को में 22 वर्षीया कुमारी रोजा कुलेशोवा ने अपने दाहिने हाथ की तीसरी व चौथी अंगुली में दृष्टि शक्ति की विद्यमानता का परिचय दिया है। उसने अपनी आँखों पर पट्टी बंधवाकर वैज्ञानिकों के सामने अपनी इन दो अंगुलियों द्वारा समाचार-पत्र का एक पूरा लेख पढ़कर सुनाया और फोटो को पहचाना।

2. एक 9 वर्षीय लड़की में यह शक्ति और भी बढ़ी-चढ़ी है। यह लड़की खार्कोब की श्रीमती ओलगा ब्लिजनोवा की पुत्री है। उसने आँखों पर पट्टी बंधी होने पर हाथ से छूकर शतरंज की काली सफेद गोटों को अलग-अलग कर दिया, रंगीन कागजों की कतरन की रंग के अनुसार अलग-अलग ढेरी बना दी, रंगीन किताबों को पढ़ लिया। उसने बाँह, कंधा, पीठ, पैर आदि शरीर के अन्य अवयवों से छूकर भी वैसे ही परिणाम प्रस्तुत किए। इतना ही नहीं, वह दस सेंटीमीटर दूर रखी वस्तुओं के रंग आदि उसी प्रकार बता देती है, जैसे हम लोग खुली आँखों से बताते हैं।

इन परीक्षणों से मनोविज्ञान शाखा के वरिष्ठ शोधकर्ता प्रो. कोन्स्टाटिन प्लातोनोव इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि मानवीय चेतना-विद्युत की व्यापकता को देखते हुए इस प्रकार की अनुभूतियाँ अप्रत्याशित नहीं हैं। नेत्रों में जो शक्ति काम करती है, वही अन्यत्र ज्ञानतंतुओं में काम करती है, उसे विकसित करने पर मस्तिष्क को वैसी ही जानकारी मिल सकती है, जैसी नेत्रों से मिलती है।

जैन शास्त्रों में संभिन्न स्रोत लब्धि बताई है जो इन सबसे

ज्यादा जागृत और चमत्कारी है।

जैन दर्शन के अनुसार इन सारी शक्तियों के ढके रहने का कारण कर्मों का आवरण है। आत्मानुशासन से उस आवरण में कमी लाकर हम ऊपर लिखे गए चमत्कारों को अपने अंदर भी अनुभव कर सकते हैं।

ऊर्जा का भंडार कोई बालक कभी अपने समय को व्यर्थ में जाया करता है और कभी वही किसी विषय में आगे बढ़ता है तो विशेषज्ञ बन जाता है। प्राय: बच्चों में खटर-पटर करने की आदत होती है। वे खिलौनों को तोड़ देते हैं। उसके पार्ट्स को अलग-अलग कर देते हैं। कम ही बच्चे ऐसे होते हैं जो यह सब नहीं करते। अधिकतर बच्चे ऐसा करते ही हैं परन्तु उनमें से कितने मैकेनिकल इंजीनियर, सिविल इंजीनियर और साइंटिस्ट बन पाते हैं। आखिर मैकेनिकल और सिविल इंजीनियर या साइंटिस्ट खटर-पटर ही तो करते हैं। वे भी चीजों को इधर-उधर करते हैं। पर उसे खटर-पटर नहीं कहते। उसे शोध (रिसर्च) कहते हैं। उनका कार्य अनुशासित होता है और उसमें एक दिशा होती है।

केदारनाथ की घटना से अभी तक हमारा मुल्क उबर नहीं पाया था कि जोशीमठ की दरारें वैश्विक समस्या का सबब बनकर उभरी हैं। इससे हमें यह समझने को मिलता है कि जब तक हम अनुशासन में रहते हैं तभी तक अपना और दूसरों का हित कर पाते हैं। जैसे ही अनुशासन के तटबंधों को तोड़ते हैं वैसे ही भयानक रूप देखने को मिलता है। मनुष्य को शक्तिपुंज और ऊर्जापुंज कहा गया

है। जब तक व्यक्ति उस शक्ति को नहीं समझ पाता, तब तक वह दुखी रहता है। शक्ति को समझने के बाद भी उसका अनुशासित तरीके से उपयोग न कर पाने के कारण वह यथोचित परिणाम नहीं दे पाता। कोई व्यक्ति एक घंटे में यदि 20 पेज पढ़ता है तो एक हफ्ते में 140 और एक महीने में 560 पेज पढ़ेगा। इसी अनुपात से एक साल में 6720 पेज और दस साल तक लगातार पढ़ने पर 67200 पेज पढ़ लेगा। 50 साल तक यह कार्य करने का परिणाम 336000 पेज पढ़ने के रूप में पाएगा। कोई एक दिन में एक श्लोक भी याद करे तो एक साल में 365 श्लोक याद हो जाएगा। 2 साल में गीता पूरी हो जाएगी और चार साल में उत्तराध्ययन। 40 साल में 32 शास्त्र पूरे हो जाएंगे। कोई रोज की 20 माला फेरे तो 2 महीने में सवा लाख का नवकार जाप हो जाएगा। इस तरह सवा करोड़, सवा अरब की संख्या भी पूरी हो सकती है।

कोई व्यक्ति 10 पृष्ठ रोज लिखे तो साल में 3650 पृष्ठ और दस साल में 36500 पृष्ठ लिख लेगा। कोई एक गीत रोज बनाए तो 10 साल में उसकी रचनाधर्मिता क्या से क्या कर सकती है। आचार्य श्री रामेश इसके बहुत बड़े उदाहरण हैं। उन्होंने एक-एक पन्ना लिख कर अब तक अनेक भजन, दोहे, चौपाई, कविता के द्वारा साहित्य को समृद्ध किया है। उनके चिन्तन के पृष्ठ अनेक के जीवन बदलने वाले बने हैं। गुरुदेव निरंतर लिखते हुए देखे जाते हैं।

15 दिन में एक उपवास करने पर साल के 24 उपवास होते हैं। एक आयंबिल करने पर साल के 24 आयंबिल होते हैं। एक

एकासन करने पर साल के 24 एकासन होते हैं। इस तरह एक-एक उपवास करते-करते मासखमण और मासखमण करते-करते अपने जीवन में 64 साल की उम्र में 98 मासखमण करने वाले महान संत श्री अशोक मुनि जी म.सा. जिनशासन के एक अनुपम रत्न हुए हैं। आत्मानुशासन का नायाब उदाहरण हैं वीरेन्द्र मुनि जी म. सा। उन्होंने अपने जीवनकाल का अधिकतम हिस्सा संतों की सेवा में लगा दिया। तन-मन अर्पित कर दिया। वे श्री इन्द्रचन्द्र जी म. सा (भगवान) के साथ छाया की तरह लगे हुए थे। उन्होंने संस्कृत का गहरा अध्ययन किया। काव्य रचना में वे सिद्धहस्त हैं। कितना आत्मानुशासन होगा उनका कि उन्होंने अपनी सारी इच्छाओं को गौण करके सिर्फ और सिर्फ सेवा को ही अपने जीवन का ध्येय बना लिया। उच्चकोटि का विद्वान होने के बावजूद आप श्री सरल सहज व्यक्तित्व के धनी हैं।

आत्मानुशासन द्वारा अनगिनत क्षेत्रों में सफलता अर्जित की जा सकती है। परन्तु इसका अभाव होने से अधिकांश लोग कुछ नहीं कर पाते। सफलता शक्ति से नहीं बल्कि निरन्तरता से मिलती है। निरन्तरता आती है आत्मानुशासन से। प्राय: हममें आत्मानुशासन का अभाव होता है। हम वे लोग हैं जो नए वर्ष की शुरुआत में कुछ नियम बनाते हैं पर दूसरे हफ्ते तक पहुंचते-पहुंचते उन नियमों को भूल जाते हैं फलस्वरूप कुछ नहीं कर पाते। एक सामायिक रोज करने वाला साल में 365 सामायिक करता है। एक लाइन रोज याद करने वाला बहुत जल्दी सामायिक और प्रतिक्रमण याद कर सकता है।

ऐसी बहुत सी चीजें हैं जिनसे हम लाभान्वित नहीं हो पाते। लाभान्वित नहीं होने का कारण है आत्मानुशासन का अभाव। आत्मानुशासन का अभाव दुर्गुण है। ऐसा दुर्गुण जो बड़ी से बड़ी प्रतिभा को खोखला कर देता है। मेधावी लोग भी आत्मानुशासन के अभाव में जीवन में कुछ नहीं कर पाते। जिनके जीवन में बड़ी से बड़ी सफलता जुड़ सकती थी, जिनके नाम के साथ सफलता का उल्लेख हो सकता था, आत्मानुशासन के अभाव में ऐसा नहीं हो पाता।

चित्तनदी उभयतो वहति, वहति पुण्याय पापाय च

चित्त को नदी की संज्ञा दी गयी है।

जैसे नदी बहती है, वैसे ही चित्त भी बहता है।

जैसे नदी में उफान आता है, वैसे ही चित्त में भी उफान आता है।

जैसे नदी में उतार आता है वैसे ही चित्त में भी उतार आता है।

जैसे नदी पर बाँध बनाकर उसे लोक कल्याणकारी बनाया जा सकता है, वैसे ही चित्त को अनुशासित करके आत्महितकारी कार्य भी किए जा सकते हैं।

सांसारिक क्षेत्र में मिलिट्री का उदाहरण दिया जाता है कि मिलिट्री से जुड़े लोग जबरदस्त अनुशासित होते हैं। उनका हर कार्य निर्धारित समय पर होता है। उससे जुड़े लोग समय के पाबंद होते हैं। अनुशासित बन कर आध्यात्मिक क्षेत्र में भी हम बहुत कुछ हासिल कर सकते हैं। समय का सदुपयोग और सावधानी बहुत आगे बढ़ा

देती है।

नाना गुरु की दिनचर्या बहुत सधी हुई थी। उनका सब कुछ तय समय पर होता था। शय्या त्याग, फिर व्यायाम, प्राणायाम, शीर्षासन, ध्यान, प्रतिक्रमण, नवकारसी, प्रवचन, वाचनी, रात्रि प्रश्न-उत्तर, पठन-पाठन, चिंतन-मनन सब कुछ समय से। इसी की बदौलत वे समाज हितकारी अनेक कार्य पर पाए। आचार्य श्री जवाहरलाल जी म.सा. का तो दिन तय था कि इस दिन इस धर्म के ग्रंथ को पढ़ना है। तभी उन्होंने जैन-अजैन ग्रंथों का गहरा अध्ययन किया। उन्होंने 'गीता रहस्य' जैसे ग्रंथ की समीक्षा उसके लेखक बाल गंगाधर तिलक की मौजूदगी में प्रवचन में हजारों जनता के समक्ष प्रस्तुत की। समीक्षा सुन कर बाल गंगाधर तिलक भी आश्चर्यचकित हो गए। उन्होंने अपने चिंतन से जनमानस को आंदोलित कर दिया। युग चेतना में क्रांतिकारी परिवर्तन ला दिया।

गुरुदेव श्रीलाल जी म.सा. 45 वर्ष की उम्र तक रोज एक नया बोल सीखते थे। दुर्लभ जी भाई जवेरी उनकी जीवनी में लिखते हैं कि आचार्य श्री सधी हुई दिनचर्या के स्वामी थे। नियमित स्वाध्याय, जाप, सूत्र पारायण, थोकड़ों का पुनरावर्तन होता ही था। आचार्य पद पर आसीन होने पर भी उन्होंने कई नए ग्रंथों की वाचना ली।

आचार्य श्री हुक्मीचंद जी म.सा. ने 30 आगम के टब्बे लिखे। 16 साल के छोटे से काल में उनकी अप्रमत्त साधना आज तक हमारे लिए प्रकाश स्तम्भ बनी हुई है। यह आत्मानुशासन का ही

प्रतिफल है। संघशास्ता शासन प्रभावक श्री सुदर्शन लाल जी महाराज के जीवन से अनेक लोगों ने प्रेरणा पाई थी। प. हस्तीमल जी म.सा., पूज्य समराथल जी म.सा. की अनुपमश्रुत सेवा आत्मानुशासन का ही सुफल है।

आत्मानुशासन एक ऐसा सांचा है जिसमें मन को ढाल कर मनुष्य अपनी ऊर्जा से बहुत कुछ प्राप्त कर सकता है पर अपनी शक्तियों को जानते हुए भी वह उसका समायोजन नहीं कर पाता। फलस्वरूप अभीष्ट परिणाम नहीं प्राप्त होता। यदि हम हमारी शक्ति का 20 प्रतिशत भी उपयोग कर लें तो समाज को बहुत कुछ दे सकते हैं और खुद भी संतुष्ट हो सकते हैं।

आवश्यकता है आत्मानुशासन को समझने की। आत्मानुशासन का अर्थ है कि आप खुद अनुशासित बनें। कोई दूसरा क्यों आप पर अंकुश लगाए! क्यों कोई दूसरा आपको टोके! यूं कह दें कि अनुशासित व्यक्ति ऐसा कार्य ही नहीं करता है जिससे उसे दूसरा कोई टोके। ऐसा भी कह सकते हैं कि उससे ऐसा कार्य होता ही नहीं है। अनजाने में भी उसके मुँह से अपशब्द नहीं निकलेंगे। उसकी काया से अकृत्य नहीं होगा। स्वप्न में भी वह स्वयं को अनुशासित रूप में देखेगा।

अनुशासन अर्थात् शास्त्र के अनुसार चलना।
अनुशासन अर्थात् गुरु के अनुसार चलना।
अनुशासन का मतलब है सिस्टम के अनुसार चलना।
सामाचारी के अनुसार चलना।

गुरु के इंगित इशारों को समझना।

गुरु द्वारा अनुशासित करने पर क्रोधित नहीं होना।

आदेशों-निर्देशों के प्रति अन्तर्मन से समर्पण भाव धारण करना।

ऐसे समर्पण भाव का नायाब उदाहरण है आचार्य श्री उदयसागर जी म.सा. के एक शिष्य द्वारा आचार्य श्री से किया गया निवेदन।

श्री उदयसागर जी म.सा. ने अपने एक शिष्य से पूछा कि क्या खाओगे?

शिष्य कहता है, आप जो खिलाएंगे।

गुरुदेव पूछते हैं कि क्या पहनोगे?

शिष्य कहता है, जो आप पहनाएंगे।

गुरुदेव पूछते हैं कि कहाँ जाओगे?

शिष्य कहता है, आप जहाँ भेजेंगे।

गुरुदेव पूछते हैं कि क्या पढ़ोगे?

शिष्य कहता है, आप जो पढ़ाएंगे।

गुरुदेव पूछते हैं कि कहाँ रहोगे?

शिष्य कहता है, आप जहाँ रखोगे।

इसका मतलब है पूर्णरूपेण समर्पण। मेरा कुछ नहीं है, सब कुछ आपका है। मुझे आपके अनुसार चलना है। एक शिष्य 21 बार बुलाने पर भी आता रहा। गलती नहीं होने पर भी शिष्य डाँट सुनता रहा। ये आत्मानुशासन के उत्कृष्ट नमूने हैं।

भगवान फरमाते हैं कि इच्छा का निरोध करने से मोक्ष की प्राप्ति होती है। आचार्य उमास्वाति कहते हैं कि इच्छा का निरोध करना ही तप है। अनुशासन के ऊपर हजारों किताबें हैं। कई ऑडियो-वीडियो हैं, जिन्हें हम सुनते-देखते हैं। हमें अच्छा भी लगता है। कुछ दिन हम उनमें बताई गई बातों पर अमल करते हैं, पर थोड़े दिनों बाद वह सिलसिला थम जाता है।

क्यों थम जाता है?

इसलिए थम जाता है क्योंकि जो पढ़ा, सुना या देखा वह सब उधार था। वह आत्मानुशासन में रूपान्तरित नहीं हुआ। ध्यान देना है कि अनुशासन और आत्मानुशासन में बुनियादी फर्क होता है। उस बुनियादी फर्क को जान लें।

अनुशासन थोपा जाता है जबकि आत्मानुशासन प्रकट होता है।

अनुशासन सिखाया जाता है जबकि आत्मानुशासन दिखता है।

अनुशासन कुछ दिन रहता है जबकि आत्मानुशान शाश्वत होता है।

अनुशासन शब्दों और बातों में होता है जबकि आत्मानुशासन धड़कन और सांसों में होता है।

अनुशासन तनाव देता है जबकि आत्मानुशासन निर्भार बना देता है।

अनुशासन अर्थात् कोई न देखे तब तक जबकि आत्मानुशासन

मतलब सदा सर्वदा।

अनुशासन में व्यक्ति मुखौटा ओढ़ लेता है। इसका मतलब है कि वह तब तक सही है जब तक कोई देख रहा है। जैसे ही लोगों की नजर उस पर से हटती है वह बेकाबू हो जाता है। ये अनुशासन का दुष्प्रभाव है। इसके कारण संयम और नियमों का बहुत मखौल उड़ा है। ऐसे लोग धर्म के नाम पर ढोंग करते हैं। लोगों की नजर में वे धार्मिक दिखते हैं पर वास्तव में होते नहीं।

अनुशासन व्यवस्थाओं को तोड़ने की प्रेरणा देता है जबकि आत्मानुशासन व्यवस्था को आत्मसात कर लेता है।

अनुशासन से दबाव पैदा होता है। दबाव, तनाव लाता है। तनाव से अवसाद पैदा होता है। अवसाद, मन को आत्महत्या तक पहुँचा देता है।

आत्मानुशासन खुलापन की ओर ले जाता है। खुले मैदान की ओर ले जाता है जिधर व्यक्ति अपनी गति से गति करता है। नयी सोच उत्पन्न करता है। शास्त्रों में विनीत शिष्य को अश्व की उपमा दी गयी है। ऐसा अश्व जो कभी चाबुक की मार नहीं खाता। जैसे ही मालिक चाबुक उठाता है या चाबुक उठाने की सोचता है वह तद्नुसार अपनी गति व प्रवृत्ति करता है। महाराणा प्रताप के घोड़े चेतक के लिए कहा जाता है कि वह उनकी आँखों को पढ़ता था। मन के भावों तक को समझ लेता था, लगाम खींचना तो दूर रहा। यह आत्मानुशासन है।

श्री दशवैकालिक सूत्र में विनीत, अविनीत का वर्णन करते

हुए बताया गया है कि विनीत पुरुष, तिर्यंच और देवता कैसे शुभ फलों को प्राप्त करते हैं। उनकी कैसी महिमा होती है। फौज के कुत्ते एकदम ट्रेंड होते हैं। पुराने जमाने में कबूतरों को प्रशिक्षित किया जाता था। वे समय और परिस्थिति के अनुसार कार्य को साधते थे।

वृक्ष की शाखा-प्रशाखा, पत्तियाँ, फूल, फल बाहर निकलने दो। उसमें कुछ भी थोपने की कोशिश न करो, क्योंकि वह जो बनने वाला है बीज में डिसाइड हो चुका है। पूरा का पूरा ढाँचा बीज में फिट है। आप उसमें कोई बदलाव नहीं कर सकते। यदि करेंगे तो आपको और पौधे दोनों को हानि झेलनी पड़ेगी।

बच्चों के नन्हें हाथों को चाँद सितारे छूने दो
चार किताबें पढ़कर ये भी हम जैसे हो जाएंगे

किसी को बचपन में अनुशासित कर सकते हैं। गर्भावस्था और बाल्यावस्था बीज की अवस्था है। तदनुसार उसके भविष्य का निर्माण होगा। बड़ा होने के बाद उसका आत्मानुशासन ही काम आएगा। बड़ा होने पर आप कुछ समझाने जाएंगे तो बात बनने की जगह बिगड़ेगी। दुर्योधन, कंस, रावण, हिटलर, मुसोलिनी, चंगेज खाँ, इदी अमीन, लादेन की क्रूरता का कारण कहीं ना कहीं उनको बचपन में दिए गए संस्कार ही हैं। बाल्यावस्था अनुशासन की होती है। जब अनुशासन धीरे-धीरे आत्मा में रम जाता है, तब उसे आत्मानुशासन कहा जाता है।

अवचेतन मन में जो संस्कार घर कर जाते हैं वही पूरे जीवन को संचालित करते हैं। बचपन से शाकाहारी व्यक्ति मांसाहार देखना

भी पसंद नहीं करेगा। इसलिए हमारे बुजुर्गों ने छुआछूत का नियम बनाया था कि जो लोग अभक्ष्य का सेवन करते हैं, उनके साथ कोई व्यवहार नहीं करना। भोजन आदि का परहेज करना। उनके साथ एक थाली में खाना नहीं खाना। ऐसे बिन्दु अपने प्रारम्भिक अवस्था में बहुत सही अर्थ लिए हुए थे। कालान्तर में इनका रूप विकृत हो गया। हमें देखना है कि हम कितने आत्मानुशासित हैं।

पुराने जमाने में गुरुकुल अध्ययन शैली हुआ करती थी। गुरुकुल में विद्यार्थियों के संस्कारों पर काम किया जाता था। उनके आंतरिक गुणों के विकास की प्रेरणा दी जाती थी। उस समय प्राय: 25 वर्ष तक ब्रह्मचर्य में रहकर प्रकृति के साथ जीवन यापन करते हुए शिक्षा प्राप्त करते थे। जीवन के पहले 25 वर्ष तक की गयी मेहनत उन्हें बलिष्ठ बनाती थी। बलिष्ठ शरीर, स्वस्थ मन और भावुक हृदय प्रदान करता था। 25 साल तक अनुशासन में रहने वाले की बात ही कुछ अलग होगी। उसके व्यक्तित्व का निखार ही कुछ अनूठा होगा। गुरुकुल शिक्षण पद्धति से ऐसे-ऐसे वीर, शील सम्पन्न पुरुष हुए जिन्होंने भारतीय संस्कृति का नाम रोशन किया।

वीर दुर्गादास पर औरंगजेब की बेगम मोहित हो गयी किंतु दुर्गादास अपने नियम पर दृढ़ रहे।

वनराज चाबड़ा की माँ ने अपने शील की रक्षा के लिए जीभ खींचकर आत्महत्या कर ली।

चन्दनबाला की माता ने शील की रक्षा के लिए अपने पेट में खंजर घोंप लिया।

मेवाड़ के महाराणा चूण्डा ने पिता के वचन की खातिर आजीवन विवाह नहीं करने का प्रण किया। उन्हें उस युग का भीष्म कहा जाता था। आनंद शर्मा ने अपने प्रसिद्ध उपन्यास 'अमृत पुत्र' में इस घटना का मार्मिक चित्रण किया है।

वीर पृथ्वीराज चौहान ने ध्वनि के आधार पर मोहम्मद गोरी को मार गिराया। यह गुरुकुल के संस्कारों का ही सुफल है। उससे आत्मानुशासन पैदा होता है।

गुरुकुल अध्ययन प्रणाली के प्रभाव से ही हेमचन्द्राचार्य ने साढ़े 3 करोड़ श्लोकों की रचना की।

हरिभद्र सूरी ने 1444 ग्रंथ बनाए।

बप्पभट्टी ने सरस्वती को सिद्ध कर लिया।

अभयदेवसूरी ने 9 अंगों की टीका बनाई।

धर्म सिंह जी म.सा. ने 32 आगमों की टब्बा लिखी।

दौलतरामजी म.सा. ने दिल्ली से गुजरात तक धर्म प्रवर्तन किया। शंकराचार्य ने 32 साल की छोटी वय में अद्भुत परचम फहराया।

आचार्य श्री नानेश ने प्रमेय कमल, मार्तंड और ब्रह्मसूत्र का शांकर भाष्य का अध्ययन किया।

आचार्य आनंदऋषि जी ने 80 साल की उम्र में फारसी भाषा पढ़ी।

मुनि जम्बू विजय जी ने द्वादशारनय चक्र ग्रंथ का तिब्बेटियन से संस्कृत में अनुवाद किया। मुनि श्री अनेक देशी-

विदेशी भाषा के जानकार थे। 90 वर्ष की उम्र तक जिनशासन की श्रुत सेवा करते रहे।

मुनि पुण्यविजय जी ने जैसलमेर जैसे शहर में रहकर भयंकर गर्मी और परीषहों को सहकर ज्ञान भण्डार को सुरक्षित करने का प्रयास किया।

विवेकानन्द के साथ उसी समय अमेरिका में सर्वधर्म सम्मेलन में जैन धर्म ध्वज फहराने वाले शासन प्रभावक भाई श्री राघव जी वीर जी गांधी ने पश्चिम को जिनशासन से परिचित कराया। विशेषज्ञों का मानना है कि उनकी प्रतिभा, वाग्मिता और विचक्षणता अतुलनीय एवं अप्रतिम थी। यह गुरुकुल शिक्षा का ही प्रभाव है।

जैन जगत के अद्‌भुत विद्वान डॉ. सागर मल जैन ने अनेक ग्रंथों का लेखन किया। साथ ही सैकड़ों लोगों को शोध करवाया।

पण्डित धीरज भाई 90 वर्ष की उम्र तक न्याय पढ़ाते रहे।

पन्यास आचार्य चन्द्रशेखर विजय जी ने कमरतोड़ मेहनत करके न्याय का अभ्यास किया।

मुनि भक्तियश विजय जी ने गूढ़ार्थ तत्वालोक पर 14 भागों में टीका लिखकर संस्कृत जगत एवं न्याय जगत को चकित कर दिया।

उपाध्याय श्री राजेश मुनि जी म.सा. ने 6 महीने में 'सिद्धान्त कौमुदी' जैसे ग्रंथ का गहरा अभ्यास किया। आपने 6 दिन में 6 कर्म ग्रंथ का आगम, टीका, टब्बा, भाष्य, चूर्णि का गहरा अध्ययन कर महान श्रुत सेवा की। समय के एक-एक क्षण का उपयोग करना, आत्मानुशासन में रहना कोई इनसे सीखे।

साधु-साध्वियों के साथ-साथ श्रावक-श्राविका भी आत्मानुशासन द्वारा जिनशासन का गौरव बढ़ा रही हैं। विदुषी श्राविका रत्न श्रीमती कंचन देवी कांकरिया ने भगवती सूत्र पर 10,000 से ज्यादा प्रश्न बनाकर अनुपम श्रुत सेवा की और अनेक साधु-साध्वियों को अध्ययन करवाकर महान लाभ का कार्य किया। कोई तो उन्हें साक्षात सरस्वती सा मानते हैं। लोग उनकी तुलना लता मंगेशकर से करते हैं। मधुरवाणी में पढ़ाती हुई कंचन देवी सरस्वती-सी प्रतीत होती हैं। हुआ यूं कि एल.एम.म्यूजिक के शुभारंभ के अवसर पर मशहूर वीणावादक पंडित विश्वमोहन भट्ट का प्रोग्राम रखा गया था। वे कहते हैं कि मैंने उस समारोह में पहली बार लता जी को देखा और साष्टांग प्रणाम किया। तब वे कहने लगीं कि मैं इतनी बड़ी नहीं हूँ। मैंने कहा कि ये हमें मालूम है कि आप कितनी बड़ी हैं। आप साक्षात् सरस्वती सी हैं। ऐसे ही कंचन देवी भी प्रतीत होती हैं।

अनेक श्रावक-श्राविका, बिजनेस, फैक्ट्री, जॉब की मसरुफियत के बावजूद अपना समय संघ, समाज एवं शासन की सेवा में प्रदान करते हैं। भाई पुरण सुराणा, आदित्य पिरोदिया और उनकी टीम ने श्रुत का अभ्यास करके संघ का गौरव बढ़ाया। मुम्बई की प्रभा देवी ललवानी, कोलकाता की श्वेता बच्छावत ने कर्म सिद्धान्त में अपनी पैठ बनाई और शासन सेवा कर रही हैं। इरोड की अनिता गोलछा, कोलकाता की सीमा सेठिया, स्तोक के द्वारा संघ गौरव बढ़ा रही हैं। दिल्ली की शांति देवी सांड ने सम्पूर्ण उत्तराध्ययन सूत्र कण्ठस्थ कर समय सार्थक किया। जयपुर निवासी मंजू देवी

भंडारी उत्तराध्ययन ए बी सी डी की तरह बोलती हैं। हर दिल अजीज महेश नाहटा से कौन अपरिचित है, जिन्होंने देश-विदेश में जैन धर्म, शाकाहार और आचार्य श्री रामेश के सिद्धान्तों को पहुंचाया। आपकी आवाज और शैली के लोग मुरीद हैं। दिल्ली के शांतिलाल कोठारी 80 वर्ष की उम्र में स्वाध्याय करते हैं और भक्ति के श्लोक एवं स्तोत्र याद करते हैं। ऐसे श्रावकरत्न शासन की निधि हैं।

ये ना सोचें कि हमें थोकड़े पढ़ने में रुचि नहीं है तो हम ज्ञानी नहीं बन सकते हैं। ज्ञान के अनेक मायने हैं। अनेक विधाएं हैं। भगवान ने शास्त्रों को चार अनुयोगों में विभाजित किया है। आपको जिसमें रुचि हो उसको पढ़ें। उसके ऊपर मेहनत करें। ईमानदारी के साथ उसमें सप्ताह के आठ घंटे दें। जैन साहित्य भरा पड़ा है। कथा साहित्य भरा पड़ा है। जैन ज्योतिष, जैन भूगोल, जैन वास्तु, जैन गणित, जैन आहार, विज्ञान क्या नहीं है। एक बात और, हर साल के 5 हजार रुपये जैसी छोटी राशि साहित्य में निवेश करें। इतनी राशि तो आप किसी होटल में एक बार जाकर उड़ा देते हैं। आपके घर पर एक ग्रन्थालय होना चाहिए। किताबें होंगी तो पढ़ेंगे न। होगी तो कम से कम देखेंगे तो। किताबों के बारे में गुलजार कहते हैं-

किताबें झांकती हैं बंद अलमारी के शीशों से
बड़ी हसरत से तकती हैं
महीनों अब मुलाकातें नहीं होतीं
जो शामें उन की सोहबत में कटा करती थीं, अब अक्सर
गुज़र जाती हैं कम्प्यूटर के पर्दों पर

बड़ी बेचैन रहती हैं किताबें
उन्हें अब नींद में चलने की आदत हो गई है
बड़ी हसरत से तकती हैं
जो कद्रें वो सुनाती थीं
कि जिन के सेल कभी मरते नहीं थे
वो कद्रें अब नज़र आती नहीं घर में
जो रिश्ते वो सुनाती थीं
वो सारे उधड़े उधड़े हैं
कोई सफ़्हा पलटता हूं तो इक सिसकी निकलती है
कई लफ़्जों के मानी गिर पड़े हैं
बिना पत्तों के सूखे तुंड लगते हैं वो सब अल्फाज़
जिन पर अब कोई मानी नहीं उगते
बहुत सी इस्तेलाहें हैं
जो मिट्टी के सकोरों की तरह बिखरी पड़ी हैं
गिलासों ने उन्हें मतरूक कर डाला
ज़बां पर ज़ाइका आता था जो सफ़्हे पलटने का
अब उंगली क्लिक करने से बस इक
झपकी गज़रती है
बहुत कुछ तह-ब-तह खुलता चला जाता है पर्दे पर
किताबों से जो ज़ाती राब्ता था कट गया है
कभी सीने पे रख के लेट जाते थे
कभी गोदी में लेते थे

कभी घुटनों पर अपने रेहल की सूरत बना कर
नीम सज्दे में पढ़ा करते थे छूते थे जबीं से...

अनेक शहरों में पुस्तक मेले लगते हैं। साहित्य उत्सव होते हैं। आप वहाँ पहुंचें। दिल्ली में हर साल पुस्तक मेला लगता है। विश्व साहित्य वहाँ उपलब्ध होता है। आपके घर पर अच्छा साहित्य होगा तो आपके बच्चे पढ़ेंगे अन्था वे जासूसी और फिक्शन पढ़कर अपने जीवन को तबाह करने में लगेंगे। जैन कथा साहित्य, जैन उपन्यास सभी कुछ है हमारे पास। आगे आएं और उसे जानने-समझने की कोशिश करें।

विश्व पटल पर देखने से पता चलेगा जैन साहित्यकारों का प्राय: अभाव है, जबकि हमारे यहां पर 99% साक्षरता है। इतनी साक्षरता के बावजूद क्यों विख्यात ट्रेनर, स्पीकर, लेखक, वक्ता, कथावाचक नहीं हैं। साधु की अपनी मर्यादा है, परन्तु गृहस्थ वर्ग क्या कर रहा है? क्या आपकी इतनी पहुंच भी है कि आप पुलिस महकमे, लाल फीताशाही और लालबत्ती तक मुनियों को पहुंचाएं। यदि है तो मुनियों के पास लाएं। यह भी धर्म प्रभावना का एक रूप है। 8 प्रकार से प्रभावना हो सकती है। आप ये देखें कि आप कैसे कर सकते हैं। क्या आपने कभी अखबार में कोई लेख लिखा? क्या कभी ज्वलंत मुद्दे पर चर्चा करने की कोशिश की? आजकल शाकाहार-मांसाहार पर बहुत बहस हो रही है। इस पर बहस हो रही है कि अंडा शाकाहारी है या नहीं! चमड़े का प्रयोग, Vegan और शाकाहार में क्या फर्क है। इस प्रकार के कई मुद्दे हैं जिस पर काम किया जा सकता

है। गुजरे दौर में संथारे पर बहुत बहस हुई। आपने कुछ किया या नहीं! समय निकालें। जैन तत्त्वों को समझने के लिए समय निकालें।

एक व्यक्ति एक मुनि के पास गया और कहने लगा कि आपने बाइबिल पढ़ी है, बहुत महान किताब है। मुनि ने पूछा कि आपने उत्तराध्ययन पढ़ा? उसने कहा, नहीं। जब पढ़ा नहीं तो अब कैसे होगी तुलना। तुलना तो अध्ययन से ही होगी। पढ़ेंगे तो हो पाएगी।

आपके घर में डायनिंग रूम है, किचन है, बेडरूम है, गेस्ट रूम है, लैट-बाथ है। सब कुछ तो है पर लाइब्रेरी है या नहीं! स्वाध्याय कक्ष है या नहीं! स्टडी टेबल है या नहीं! राइटिंग टेबल है या नहीं! नहीं है तो कैसे जी रहे हो? क्या है? आपका उद्देश्य क्या है? क्या है आपका लक्ष्य? क्यों जिंदा हो? ऐसे जीने का क्या फायदा? क्या होगा? ऐसे यदि 50 साल भी जीते रहेंगे तो क्या हासिल होगा?

हम सोचें? ड्राइंग, पेंटिंग, सिंगिंग आदि न मालूम कितनी चीजें है, जो हमें आनंद से भर सकती है। किताबें हमारा जीवन सरस बना सकती हैं।

पीछे के पृष्ठों पर दिए गए अनेक नामों में गृहस्थ जीवन जीने वालों के नाम भी हैं।

क्या उन सभी का एक दिन 24 घंटे से अधिक का है?

क्या उनका सप्ताह 7 दिन से ज्यादा का है?

नहीं। उनके पास भी 24 घंटे का ही दिन है। सात दिन का ही सप्ताह है। 30 दिन का ही महीना है। वे भी खाते-पीते हैं। उनके

भी पति/पत्नी और बच्चे हैं। वे भी अपने पारिवारिक और सामाजिक कर्तव्यों को निभाते हैं। उनके पास भी मोबाइल है। ये सब करते हुए भी वे जिनशासन के गौरव में कुछ योगदान दे पा रहे हैं। योगदान दे पाने का एकमात्र कारण है आत्मानुशासन।

किसी ने कहा है–

उसने सारा दिन काम किया
और सारी रात काम किया
उसने खेलना छोड़ा और मौज मस्ती छोड़ी
उसने ज्ञान के ग्रंथ पढ़े और नई बातें सीखीं
वह आगे बढ़ता गया पाने के लिए सफलता
जरा सा दिल में विश्वास और हिम्मत लिए वह आगे बढ़ा
और वह सफल हुआ
लोगों ने उसे भाग्यशाली कहा

स्व नियंत्रण व स्व अनुशासन के लिए स्वयं से वादा करना होगा।

फिल्म जगत में अमिताभ बच्चन और लता मंगेशकर के अनुशासन की मिसाल दी जाती है। प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी जी 74 साल की उम्र में भी 18 घंटे काम करते हैं। विदेशी दौरों पर भी नवरात्रि के नियमों का पालन करते हैं। नेहरू जी ने जेल में किताबें लिखी। गांधी जी समय के पाबंद थे। उनका आत्मानुशासन ही उनकी लय बनाए रखता था।

जब ये लोग इतना आत्मानुशासन रख सकते हैं तो धर्म के क्षेत्र

में हमें कितना रखना चाहिए! धर्म से तो सिर्फ और सिर्फ आत्मा का ही हित होगा। इससे हमारी साधना-आराधना बढ़ेगी जो हमें मोक्ष मार्ग पर आगे बढ़ाएगी। श्रीमद् उत्तराध्ययन की टीका में एक कहानी आयी है कि सेचनक हाथी मदोन्मत्त होकर उस आश्रम के ऋषियों के साथ बुरा बर्ताव करने लगा, जिस आश्रम में बड़ा हुआ था। जिन ऋषियों ने उसे बचपन से पाला था उन्हें ही उठा-उठा कर पटकने लगा। आश्रम को उजाड़ने लगा। कुछ ऋषि उसे समझाते हैं किंतु उस पर कुछ भी असर नहीं होता। वह आश्रम को नष्ट करने पर तुल गया।

ऋषियों का एक दल राजा श्रेणिक के पास पहुँच कर उसकी शिकायत करने लगा। ऋषियों की बात सुनकर श्रेणिक ने उस हाथी को पकड़ने के लिए अपने लोगों को भेजा। लोग दल-बल से आए परन्तु हाथी को पकड़ने में नाकाम रहे। लोगों द्वारा पकड़ने का प्रयास करने पर वह हाथी और ज्यादा गुस्से में आ गया। उस हाथी का पूर्व जन्म का मित्र देव योनि में था। वह देवलोक से आकर हाथी को समझाता है। समझाते हुए कहता है कि सेचनक, 'अप्पा चेव दमेयव्वो' अर्थात् आत्मा का दमन करो। आत्मा दुर्दम है। दूसरों से दमित होने की वंध और बंधन की अपेक्षा मत करो।

इसे सुनकर सेचनक शांत हुआ। राजा ने उसको पकड़ा और उसके सौन्दर्य को देखकर उसे पट्टहस्ती बना दिया। यह आत्मानुशासन का अद्भुत उदाहरण है। हमारे लिए भी आत्मा का दमन श्रेष्ठ है। संयम और तप द्वारा आत्मा का दमन करने वाला इस लोक और परलोक में सुखी होता है।

''आत्मानुशासन महान है जीवन का उत्थान है।
जो कोई इसको धारण करता बन जाता महान है।।''

भारत सरकार न मालूम कितने प्रकार के नियम बनाती है। प्रदूषण नियंत्रण के लिए नियम, कर संबंधी नियम, ट्रैफिक संबंधी नियम, विरासतों को गंदा न करने का नियम, ट्रेन और फ्लाइट में सफाई का नियम, लाइब्रेरी का नियम आदि कितने ही नियम हैं। सबके बारे में लिखा जाए तो कई पन्ने भर सकते हैं। बहुत सारे नियम बने तो हैं पर उनका पालन होता नहीं दिखता। इसका कारण है आत्मानुशासन का अभाव। जब तक नागरिकों में आत्मानुशासन नहीं आएगा, तब तक इनका पालन कौन करवा सकता है! सरकार क्या करेगी! पुलिस क्या करेगी!

एक भारतीय विदेश में गया। वहाँ किसी लाइब्रेरी में बोर्ड देखा, जिस पर लिखा हुआ था 'इण्डियंस ऑर नॉट अलाउड।' पूछने पर पता चला कि कुछ समय पहले वहाँ गए किसी भारतीय ने किताबों में से चित्र काट लिए। पन्ने फाड़ लिए। तब से साइनबोर्ड लगा हुआ है। विदेश के मॉल में 'नो इंट्री फॉर इण्डियन' देखने पर जब पूछा गया तो पता चला कि किसी भारतीय ने कॉइन की जगह वाइसर डाले जबकि वहाँ पर सिस्टम है कॉइन डालने का। कॉइन डालने से कोक निकलेगी, कॉइन डालने से कॉफी आदि कोई भी चीज निकलेगी। कॉइन की जगह वाइसर डालना आत्मानुशासन का अभाव है। सोच का बौनापन है। रात्रि भोजन का त्याग करने वाले कई लोग पाँच-दस मिनट की खातिर ऐसा कह कर रात्रि भोजन के

पचकान में दोष लगाते हैं कि अभी तो उजाला है। अभी तो धूप दिख रही है। अभी तो हाथ की रेखा दिख रही है। अभी तो घंटी की आवाज नहीं आयी है। एकासना करके लोग खिसक-खिसक कर खाते हैं। वहीं सो जाते हैं, फिर उठ कर चाय पी लेते हैं। उत्क्रांति का फार्म भरने के बाद न मालूम उसमें कैसी-कैसी गलतियाँ निकालते हैं। मोबाइल का पचकान लेकर लैंडलाइन चलाते हैं। पान पराग का पचकान लेकर रजनीगंधा खाते हैं। टी.वी. देखने का पचकान लेकर मोबाइल में देखते हैं। हरी लिलौती का पचकान लेकर टमाटर खाते हैं। तर्क देते हैं कि वह लाल है। आम खाते हैं क्योंकि वह पीला है। जामुन खाते हैं क्योंकि वह काला है।

ये सब क्या है? हालांकि सभी ऐसे नहीं हैं। करणीदान जी लूनिया ऐसे श्रावक थे जिन्होंने नियम लिया था कि साल भर में 100 रुपये से अधिक का कपड़ा नहीं पहनूंगा। उन्होंने सिल-सिल कर पहना पर अपने नियम में कोई दोष नहीं लगाया। पैबंद लगाते जाते पर कभी लिए गए नियम के साथ धोखाधड़ी नहीं की। यह आत्मानुशासन से ही संभव है। करणीदान जी ही नहीं, कई ऐसे श्रावक हैं जिन्होंने गृहस्थ में रहकर नियमों का सूक्ष्मता से पालन किया। जब तक आत्मानुशासन नहीं होगा, तब तक नियमों का पालन नहीं हो सकेगा। सुना गया है कि कई लोग तपस्या पचकने के बाद भी खाते हैं। ऐसा आत्मानुशासन के अभाव में ही होता है।

आत्मानुशासन वाला रास्ते-रास्ते चलता है। एक गुरु ने अपने शिष्य को कबूतर देते हुए कहा कि जहाँ कोई न देखे, वहाँ इसे

मार देना। शिष्य कई दिनों बाद लौटा और गुरु को वापस कबूतर सौंप दिया। गुरु ने पूछा कि क्या हुआ? शिष्य ने कहा कि कहीं कोई है तो कहीं कोई! और परमात्मा तो मुझे हर समय देख ही रहे हैं। ऐसा उत्तर आत्मानुशासन का उदाहरण है। वह दिन धन्य होगा जब हमारे भीतर भी आत्मानुशासन पैदा होगा।

***

चौथा बिन्दु आत्मानुशासन पूरा हो चुका है। अब आगे यह लिखने की जरूरत नहीं है कि आपको क्या करना है। आप समझ चुके होंगे कि पुन: रुकना है, सोचना है, अपने आप से कुछ वादा करना है फिर आगे बढ़ना है।

इस बार अगले 21 दिन तक इन्हें अपने जीवन का हिस्सा बनाएं–

1. सामान बिखेर कर नहीं रखना है।
2. हाथ का काम अधूरा नहीं छोड़ना है।
3. जूठा नहीं छोड़ना है।
4. रात 10 बजे से सुबह 07 बजे तक मोबाइल का त्याग करना है।
5. कम से कम 01 किताब का पेज रोज पढ़ना।
6. गाली नहीं देना है।
7. तू–तड़ाक की भाषा का प्रयोग नहीं करना है।

5

विवाद विग्रह से पराङ्गमुखता

नाव हमारी भँवर में कब आवेगी भाई
सबसे मिलकर चालिए गुरु वचन सुखदाई

5

विवाद विग्रह से पराङ्मुखता

12 अक्टूबर 2022 के प्रवचन में गुरुदेव फरमाते हैं कि अपनों से विवाद नहीं करना। वाद का अर्थ चर्चा होता है और जब उसमें विकार आ जाता है तो वह विवाद का रूप ले लेता है। उत्तराध्ययन सूत्र के पाप श्रमण अध्ययन में कहा गया है कि जो विवाद की उदिरणा करता है उसे पाप श्रमण कहते हैं।

विवायं य उदीरेइ... पाव–समणे त्ति वुच्चई

दशाश्रुतस्कंध में कहा गया है कि संघ में विवाद पैदा करने वाला महामोह कर्म का बंध करता है।

दशवैकालिक में कहा गया है कि साधु को कलह का त्याग करना चाहिए।

शास्त्रों में कहा गया है कि यदि कभी कलह हो जाए तो मुँह की अमी निगलने से पहले क्षमा याचना करे। न हो सके तो पानी पीने से पहले करे। तब भी न हो सके तो गोचरी जाने से पहले करे। यदि तब भी न हो सके तो सायंकालीन प्रतिक्रमण में कर ले। तब भी न हो सके तो चौमासी को करे। और तब भी न हो सके तो संवत्सरी को करे। जो उस दिन भी चूक जाए उसकी समकित सुरक्षित नहीं रहती।

ध्यान रहे, विवाद से कलह होता है और कलह से झगड़ा।

झगड़े से हाथापाई होती है और हाथापाई से हिंसा। सर्वविदित है कि हिंसा से साधुत्व संकट में आ जाता है। इसलिए शास्त्रकारों का उपदेश है कि साधु को अल्प झंझटवाला, अल्प कलहवाला, अल्प तू-तू, मैं-मैं वाला होना चाहिए।

'ठाणं' में कहा गया है कि मुनि सोचे कि मैं ऐसा कौन-सा कार्य करूं, जिससे मेरे चतुर्विध संघ में कलह न होवे। वे अल्प झंझट और अल्प तू-तू, मैं-मैं वाले बनें।

समकित के पाँच लक्षणों में पहला लक्षण शम को कहा गया है। इसका अर्थ होता है समभाव रखना। शत्रु हो या मित्र, सब पर समभाव रहना चाहिए। साधु के 10 यति धर्मों में पहला धर्म 'क्षमा' को कहा गया है। इसका अर्थ होता है, क्रोध नहीं करना। क्रोध इसलिए नहीं करना क्योंकि क्रोध में व्यक्ति अपना विवेक खो बैठता है। उसमें हित-अहित का पता नही चलता। क्रोधी व्यक्ति यह भूल जाता है कि किसको संभालना चाहिए और किसको नहीं। मुनि जम्बू विजय जी कहा करते थे कि अपने फर्स्ट ओरा वाले लोगों को कभी दुखी नहीं करना चाहिए। यह बात उन्होंने भारत के सबसे अमीर अडाणी ग्रुप को कही, जो उनके परम भक्तों में से एक है। जब व्यक्ति को क्रोध आता है तब वह अंधा हो जाता है और अपने फर्स्ट ओरा वाले लोगों से भी विवाद कर बैठता है।

शास्त्रकार महर्षि हर पल क्षमा धारण करने का उपदेश देते हैं। श्री आचारांग सूत्र में क्रोध त्यागने का उपदेश दिया गया है। श्री सूत्रकृतांग में इसे अध्यात्म दोष कहा गया है।

कोहं च माणं च तहेव मायं, लोभं चउत्थं अज्झत्थदोसा

श्री ठाणांग सूत्र में अनन्तानुबंधी आदि क्रोध के प्रकार बताए गए हैं।

श्री समवायांग सूत्र में क्रोध को पाप प्रकृति बताया गया है।

श्री भगवती सूत्र में क्रोध को कटु फल देने वाला बताया गया है।

श्री ज्ञाता सूत्र में क्रोध त्यागने का उपदेश दिया गया है।

श्री उपासकदशांग में भगवान क्रोध की निंदा करते हैं।

श्री निरयावलिका सूत्र पंचक में तो वाद-विवाद की व्याख्या है कि कैसे कोणिक राजा अपनी पत्नी के कहने पर एक हार और हाथी के लिए अपने भाई हल और विहल से महासंग्राम कर बैठता है। इसका नाम महाशिला कंटक और रथ मुसल संग्राम था। यह महासंग्राम महाभारत के युद्ध से भी बड़ा था। इसमें 10 दिनों में करीब 1 करोड़ 80 लाख लोग मरे। इसका वर्णन जैन शास्त्रों में है। कोणिक राजा को कई लोग समझाते हैं। 12 व्रतधारी श्रावक चेटक राजा ने भी समझाया। चेटक, कोणिक के नाना भी थे। किसी के समझाने का उस पर कोई असर नहीं हुआ। वह तो वाद-विवाद में अंधा बना हुआ था। किसी भी सूरत में मानने को तैयार नहीं था। वह अपने नाना की अवहेलना कर देता है और 10 दिन में अपने 10 भाइयों को बलि चढ़ा देता है।

गौशालक अपने गुरु तीर्थंकर भगवान से वाद-विवाद कर

लेता है। जमालि अपने ससुर जी से वाद-विवाद कर लेता है। कमठ का वाद-विवाद तो नौ भवों तक चलता है। वाद-विवाद बढ़ते-बढ़ते वैरानुबंध का रूप ले लेता है और वह हर भव में अपना भयंकर परिणाम देता है। चंडकौशिक का पूर्व भव वाद-विवाद नहीं करने की प्रेरणा देता है। वाद-विवाद के कारण ही सारे यादव कुमार आपस में लड़ कर मर गए। वाद-विवाद के कारण ही शिशुपाल का वध हुआ। गीता में भी श्री कृष्ण क्रोध नहीं करने की प्रेरणा देते हैं। उपनिषद् भी क्षमा को श्रेष्ठ बताते हैं। पश्चिम में फोरगिवनेस शब्द का प्रयोग किया जाता है, जिसका अर्थ क्षमा होता है। जीसस क्राइस्ट अपने को सूली पर चढ़ाने वालों से भी वाद-विवाद नहीं करते। इस प्रकार सभी धर्म और धर्म उपदेशक वाद-विवाद नहीं करने की प्रेरणा देते हैं फिर भी हम वाद-विवाद में पड़े रहते हैं। एक छोटे से विवाद के कारण फर्स्ट वर्ल्ड वार हुआ, जिससे करीब 70-80 लाख लोग मारे गये। वाद-विवाद ने करोड़ों, अरबों लोगों को अपनी ज्वाला में भस्म कर दिया है।

इतिहास साक्षी है कि वाद-विवाद के कारण कितने युद्ध हुए हैं। कितनी लड़ाइयाँ हुई हैं। वाद-विवाद के कारण न जाने कितनी हत्याएँ हो चुकी हैं। ऐसी-ऐसी बातों पर विवाद हो जाता है जिसे सुनकर हँसी आएगी। एक शादीशुदा जोड़े ने अपनी शादी के 20 मिनट बाद ही तलाक ले लिया। पति ने उसका कारण बताया कि पत्नी ने मेरे हस्ताक्षर से बड़ा अपना हस्ताक्षर कर दिया। बड़े-बड़े विवाद हमेशा छोटी बातों से शुरू होते हैं। छोटी सी बात कब बड़ी हो

कर वाद-विवाद का रूप ले लेती है, कहा नहीं जा सकता। विवाद के बहुत सारे कारण होते हैं। व्यक्ति कभी क्रोध के कारण विवाद करता है तो कभी मान के वश। कभी लोभ के वश तो कभी ईर्ष्या और कभी पद-प्रतिष्ठा के लिए विवाद हो जाता है।

वाद-विवाद से साधुओं की संस्था भी नहीं बच पाती है। साधुओं के बीच भी दरार पैदा हो जाती है। साधु के पास कोई सम्पत्ति नहीं है पर अहंकार उसे झुकने नहीं देता। परिणामस्वरूप वह अपने परम उपकारी गुरुदेव का भी अविनय कर बैठता है। साध्वियाँ गुरुणी का...

एक खुशहाल संघ में द्वेष की चिनगारी भड़कने लगती है। भाई-बहन अलग हो जाते हैं। भाई-भाई एक दूसरे का मुँह नहीं देखते। माँ-बेटे, पिता-पुत्री में क्या नहीं होता। अपने को सही साबित करने के लिए न मालूम कितने झूठ बोले जाते हैं। इन भावों में यदि आयुष्य का बंधन हो जाएगा तो सोचो क्या होगा! अगला भव???

साधुओं को लानी तो गोचरी ही है! चलना तो पैदल ही है! रहना तो गर्मी में ही है! सहना तो परीषह ही है! संघ से अलग होकर कौन-सी रोल्स रॉयस मिल जाती है! कहाँ अमेरिका का वीजा मिलता है! एक चीज छोड़कर और कुछ भी तो नहीं मिलती। जो चीज मिलती है वह है चिर असमाधि।

जैसे अग्नि सभी चीजों का भक्षण कर लेती है, वैसे ही वाद-विवाद सभी गुणों का भक्षण कर लेता है।

जैसे दिवाकर सर्व भोगी है, वैसे ही वाद-विवाद सब सद्गुणों का भोग कर लेता है।

जैसे सागर में खारापन है, वैसे ही विवाद में खारापन है।

जैसे साँप में जहर है, वैसे ही विवाद में जहर है।

जैसे बिच्छु में डंक है, वैसे ही विवाद में डंक है।

जैसे मगरमच्छ डरावना है, वैसे ही विवाद डरावना है।

जैसे शेर खूँखार है, वैसे ही विवाद खूँखार है।

जैसे उल्लू को सूरज नहीं दिखता, वैसे ही विवाद को सद्गुण नहीं दिखते।

जैसे दूध में नीबू का रस पड़ते ही दूध फट जाता है, वैसे ही विवाद मन में आते ही मन फट जाता है।

जैसे स्वयंभू रमण समुद्र अनंत है, वैसे ही विवाद की परंपरा अनंत है।

जैसे आकाश अनंत है, वैसे ही विवाद के दुष्परिणाम भी अनंत हैं।

जैसे भरतपुरी लोटा बिन पेंदे का होता है, वैसे ही विवादी पुरुष बिन पेंदे का होता है।

जैसे बिजली अपना-पराया देखे बिना सब को झटका देती है, वैसे ही विवादग्रस्त पुरुष सबको झटके देते हैं।

विवाद ने अनेक जीवन बर्बाद कर दिए। कितने मन मलिन कर दिए। अनगिनत दिलों को तोड़ दिया। अनगिनत आँखों में आँसू दिए।

विवाद मन में खटास पैदा करने वाला है।

मिठास का नाश करने वाला है।

अपनों में दूरी पैदा करने वाला है।

विवाद क्रूर बनाने वाला है।

विवाद लज्जा का नाश करने वाला है।

विवाद भयंकर से भयंकर दुष्कृत्य करने वाला है।

गुरुदेव फरमाते हैं कि वाद-विवाद मत करो। ये छोटा सा जीवन है। एक मिनट क्रोध में होने पर आप 60 सेकण्ड की खुशी का नाश कर देते हो। एक घंटे क्रोध करते हो तो 3600 सेकण्ड। एक दिन में 86400 सेकेंड। एक साल में 31536000 सेकेंड। पीढ़ियाँ खत्म हो जाती हैं पर लड़ाई नहीं खत्म होती। कोर्ट में सालों-साल मुकदमा चलता रहता है। तारीख पर तारीख पड़ती रहती है। दोनों पक्षों के पैसे लगते रहते हैं। जेब खाली होती रहती है। केस करने वाला मर जाता है पर केस जिंदा रहता है। न मालूम कितने घरों की ये दास्तान है।

विवाद ऐसा राक्षस है जो सब को खा जाता है।

यह ऐसी बाढ़ है जिसमें सब डूब जाते हैं।

ऐसी खाई है जिसमें सब गिर जाते हैं।

इतना पढ़ने के बाद भी क्या आपके मन में विवाद करने की इच्छा है?

एक बार एक सभा में एक सन्त ने पूछा कि बताइए विवाद क्यों है?

...तो किसी ने कहा, कोई बात नहीं मानता है इसलिए।
किसी ने कहा, मन लायक काम नहीं होता है इसलिए।
किसी ने कहा कि कोई हमें नहीं पूछता है इसलिए।
किसी ने कहा, विचार नहीं मिलते हैं इसलिए।
किसी ने जनरेशन गैप कहा तो किसी ने कुछ और...

सबकी बात सुनने के बाद उन्होंने कहा की आपकी बात भी सही हो सकती है पर आप मेरी भी सुनो। प्रश्न है कि विवाद क्यों होता है। संत कहते हैं कि **विवाद करने से होता है। लड़ाई करने से होती है। तू-तू, मैं-मैं करने से होता है। झगड़ा करने से होता है। हम विवाद नहीं करते तो विवाद नहीं होता है। झगड़ा नहीं करते हैं तो नहीं होता है। तू-तू, मैं-मैं नहीं करते तो नहीं होता है।**

आपने कहा कि कोई बात नहीं मानता। ध्यान देंगे तो पता चलेगा कि बात नहीं मानने वाले अधिकांश लोग हमारे करीबी ही होते हैं। **जो हमें बहुत प्यारे हैं या बहुत प्यार करते हैं वे कुछ भी करते हैं हमें गुस्सा नहीं आता। आता भी है तो लम्बा नहीं खिंचता** किंतु वही चीज जब दूसरे करते हैं तो बात बिगड़ जाती है।

इसका मतलब यह हुआ कि जहाँ अपनेपन का भाव नहीं है, वहाँ वाद-विवाद की संभावना बढ़ जाती है और जहाँ अपनापन होता है, वहाँ वाद-विवाद गायब हो जाता है। इससे पता चलता है कि हम वाद-विवाद करेंगे तो होगा, नहीं करेंगे तो नहीं होगा। **हम अपने आप से वादा करें कि कभी वाद-विवाद नहीं करेंगे।** बात को हम बढ़ाते हैं तो बढ़ जाती है। बात को खींचते हैं तो खिंच जाती है।

आग लगाने से आग लगती है। आग में घी डालने से वह भड़कती है। हम तो पहले से ही बारूद लिए बैठे रहते हैं। दूसरा जैसे ही चिनगारी लगाता है, बारूद में विस्फोट हो जाता है।

एक प्रश्न है कि माचिस की तीली लगाने पर क्या होगा?

जवाब आया, आग लग जाएगी।

फिर प्रश्न पूछा कि यदि गिलास में पानी हो तब तीली जलाएंगे तो क्या आग लगेगी?

फिर जवाब आया, नहीं-नहीं, वो तो बुझ जाएगी।

बस यही बात है। हमारे अंदर विवाद होता है तो बाहर भी विवाद निकलता है।

भगवान महावीर स्वामी पर तेजोलेश्या फेंकी गयी फिर भी वे शांत रहे। उन्होंने कोई विवाद नहीं किया। इसलिए विवाद नहीं किया क्योंकि उनके अंदर विवाद था ही नहीं। उन्हें साँप ने काटा तो दूध की धारा निकली क्योंकि उनके अंदर क्षमा का दूध भरा हुआ था। कहते हैं कि काँटे उनको देखकर उल्टे हो जाते थे। वे आदमी ही ऐसे थे कि कोई काँटा उनको चुभ ही नहीं सकता। कोई कैसा भी शूल बिछाए वह उसे चुभने ही नहीं देते। उनके शरीर से कभी बदबू नहीं आती थी। आएगी कहाँ से! अंदर होगी तो आएगी न! थी ही नहीं तो आएगी कहाँ से। उन्होंने कभी विवाद किया ही नहीं। एक हम हैं जो फूलों को भी चुभों लें। महावीर जैसे आदमी को काँटे भी नहीं चुभते और हम फूलों से भी लहुलुहान हुए जाते हैं।

शास्त्र में कहा गया है कि कुशिष्य गुरु की शिक्षा को भी

उल्टे रूप में लेता है। वह सोचता है कि गुरु मुझे दास समझते हैं, मुझसे द्वेष करते हैं पर विनीत शिष्य थप्पड़ और डंडा पड़ने पर भी विनय भाव बनाए रखता है।

विवाद करना एक आदत है। आदती व्यक्ति को तो मुद्दा चाहिए। वह यहाँ क्यों बैठ गया, यहाँ क्यों नहीं बैठा? उसने मुझसे बात क्यों की? उसने मुझसे बात क्यों नहीं की? उसने उससे बात क्यों की? उसने उससे बात क्यों नहीं की? एक व्यक्ति ने तो आशीर्वाद देने पर भी विवाद कर लिया कि मेरे सिर पर हाथ क्यों रख दिया? कुछ लोग इस पर विवाद कर लेते हैं कि उसने मुझे देखा ही नहीं और देखने पर भी यह कह कर विवाद कर लेंगे कि मुझे घूर रहा है?

कई लोगों की विवाद करने के मामले में पी.एच.डी होती है। कई तो विवादों के इंजीनियर होते हैं और कई एम बी ए। जिस आदमी का जन्म ही विवाद करने के लिए हुआ हो वह तो किसी से भी विवाद कर लेगा। खाने-पीने को लेकर विवाद, पहनने को लेकर विवाद, बर्तनों को लेकर विवाद, कपड़ों के लिए विवाद, जेठानी का विवाद, बेटे का विवाद, बेटी का विवाद, गुरु का विवाद, शिष्य का विवाद, गुरुभाई का विवाद, ठंडा है तो विवाद, गर्म है तो विवाद, लोग आ जाएं तो विवाद, नहीं आएं तो विवाद, पैसा है तो विवाद, पैसा न हो तो विवाद। विवाद करना एक मनोवृत्ति है। 95 फीसदी विषय नहीं विवादास्पद होता, आदमी विवादास्पद होता है।

महावीर स्वामी को देखिए, वह तो विवाद करते ही नहीं। गोदुहा आसन पर बैठ जाते हैं। कोई धक्का देता है तो फिर गोदुहा

आसन पर बैठ जाते हैं। फिर धक्का देता है तो फिर बैठ जाते हैं। कोई पत्थर मार रहा है, कोई लकड़ी से मार रहा है, कोई धूल फेंक रहा है, कोई उनके पीछे कुत्ते छोड़ रहा है। कभी ठंडा तो कभी बासी आहार मिलता है, पर वे विवाद से पराङ्गमुख ही रहते हैं। हमें देखना है कि हमारे गिलास में पानी है या पेट्रोल। पानी होगा तो तीली बुझ जाएगी और पेट्रोल होगा तो भभक जाएगी। इसमें दोष तीली का नहीं है, दोष हमारा है। जो हमारे भीतर होगा वही बाहर प्रतिबिम्बित होगा। हम दूसरों को दोष देते हैं कि उसने विवाद कर दिया, उसने ऐसा बोल दिया, उसने वैसा बोल दिया, उसने ऐसा कर दिया, उसने वैसा कर दिया। मैं तो चुपचाप बैठा था। मैं तो बड़ा शांत आदमी हूँ। उसने ऐसा कर दिया इसलिए मुझे गुस्सा आ गया। इसलिए मैं विवाद करने लगा। मैं तो बड़ा सोणा-सोणा हूँ।

फिर से जान लें कि यह एक मनोवृत्ति है। यह मनोवृत्ति रहने पर जीव एक भव के विवाद को अगले भव में भी ले जाता है। आप इसका उदाहरण देख सकते हैं; सीतेन्द्र जब नरक में पहुंचा तो देखा कि रावण और लक्ष्मण के जीव आपस में लड़ रहे हैं। नरक में पहुंचने के बाद उनकी लड़ाई चल रही थी। वह अगले भव में साँप बन जाता है तो वहाँ भी विवाद करता है। आगे के भवों में कुत्ता और शेर बनता है तो वहाँ भी विवाद।

चण्डकौशिक का विवाद क्या था? आचार्य थे, क्रोध में शिष्य से विवाद हो गया। शिष्य को मारने दौड़े तो अंधेरे में सिर खंभे से टकरा गया। विवाद के परिणाम मरे तो अगले भव में कनखल में

कौशिक नामक ब्राह्मण बने। कौशिक अपने आश्रम में किसी को कुछ नहीं देता था। कोई फूल या फल तोड़ ले तो उसकी शामत आ जाती थी। वह तोड़ने वाले के पीछे क्रोध में भागता। एक बार ऐसे ही क्रोध में भागते समय गिर गया। गिरने से उसका सिर फूटा और वहीं नाग बन गया। पिता ने तो कौशिक नाम रखा था। वह भयंकर क्रोधी था तो उसका नाम चण्डकौशिक हो गया। चण्ड मतलब क्रोध। ब्राह्मण के भव का विवाद साँप के भव में चला गया। सर्प के भव में चण्ड विकराल बन गया। कहानी कहती है कि पूरा जंगल सूख गया। पेड़ झुलस गए। पौधे सूख गए। पत्तियां जल गईं। सुंदर वन जंगल बन गया। वीभत्स रूप हो गया। ये विवाद का परिणाम था। चण्ड ने तो प्रभु को भी नहीं बख्शा। समाप्त करने के उपक्रम से उन्हें डंक मारा। उन पर जहर फेंका। प्रभु ने उस विवाद के फल को भोगा, पर अकारण वत्सल प्रभु समभाव से उसे बोध देते हैं।

आपने सुना होगा कि ज्ञान परभव में जाता है, पर ध्यान रखना, क्रोध भी परभव में जाता है। विवाद भी जाता है। द्वेष भी जाता है और ईर्ष्या भी जाती है। जो गहरा होगा वही आगे जाएगा। आप अपने को टटोलें कि मेरे अंदर क्या गहरा है।

जिन्दगी बहुत छोटी-सी है। वह बीत जाएगी। वाद-विवाद करेंगे तो भी बीतेगी और नहीं करेंगे तब भी। कोई अमर रहने वाला नहीं है। ये सोचना है कि हमारी अर्थी के पीछे चलने वाले लोग हमें किस तरह याद करेंगे! एक अर्थी के पीछे चल रहे लोग कह रहे थे कि अच्छा हुआ जो मर गया। गाँव में शाँति हो गई। कभी इससे

लड़ता तो कभी उससे। उंगली करता ही रहता। हर चौमासे में झगड़ा करता था। साधु-साध्वियों को रुला देता था। एक चौमासा भी शांति से नहीं जाने दिया। आचार्य और उपाध्याय श्री का अविनय करने में भी इसने कसर नहीं छोड़ी। एक ने कहा कि पता नहीं खुद को क्या समझता था। दूसरों को तो कुछ गिनता ही नहीं था। हर जगह अपनी ही चलाता था। अपनी ही टाँग ऊँची रखता था। **ध्यान रखना, मौत कभी-भी सॉरी बोलने की मोहलत नहीं देती है।** माफी माँगे बिना ही आदमी एक झटके में रुखसत हो जाता है। लोकप्रिय श्रावक रत्न श्री महेन्द्र जी गादिया एक झटके में ही संसार को छोड़ गए। ऐसे झटके से गए कि समाज के लोग हत्प्रभ रह गए। पूरा जैन और जैनतर समाज उनके असामायिक निधन से आहत हुआ। सिर्फ बात रह जाती है। तुलसीदास कहते हैं-

तुलसी इस संसार में भाँति-भाँति के लोग
सबसे हस मिल बोलिए नदी नाव संजोग

संकल्प करें कि कभी-भी किसी से विवाद होगा तो क्षमा याचना किए बगैर सोएंगे नहीं। अधिकांश लोग तो संवत्सरी के दिन भी क्षमायाचना नहीं करते हैं। जिससे लड़ाई होती है उससे तो एकदम नहीं। यदि वास्तविक संवत्सरी जानना है तो देखना होगा कि जितने केस कचहरी में चल रहे थे, वे वापस ले लिए गये क्या? लोगों ने सोचा क्या कि मुझे नहीं लड़ना केस! मैं केस वापस लेता हूँ। ये होता है तो वास्तविक संवत्सरी है। नहीं तो हर साल संवत्सरी आती है पर हमारी संपत्ति के झगड़े, जमीनों के झगड़े, यहाँ तक कि धर्मस्थानक

के झगड़े चलते रहते हैं। वहाँ भी पुलिस आ रही है। ताले लग रहे हैं। स्थानक सील किया जा रहा है। हम धर्म के नाम पर भी विवाद कर रहे हैं। संवत्सरी के प्रतिक्रमण के समय पुलिस आई है। कई जगह लाठियाँ चली हैं। कई जगह गिरफ्तारियाँ हुई हैं।

अरे भाई, संवत्सरी के दिन भी लड़ाई करोगे, विवाद-विग्रह करोगे तो कब करोगे खमतखामणा!

कब करोगे मिच्छा मि दुक्कडं!

कब करोगे क्षमायाचना!

कब धोओगे अपने मैले मन को!

जब दवा ही रोग बढ़ाने का काम कर रही है तो ठीक कौन करेगा! हमारी हालत तो ऐसी ही हो गई है, जैसे दवा ही रोग को बढ़ा रही हो। धर्म तो विवाद-विग्रह मिटाने वाला है और हमने उसमें भी विवाद खड़े कर दिये। कुछ लोगों को तो बात-बात पर मिथ्यात्व लगता है। दूसरे को पाखंडी और शिथिलाचारी बताने में भी हम देरी नहीं करते। मिथ्याभिनिवेश के वशीभूत ऐसा कहने से भी नहीं चूकते हैं कि वे आचार्य नहीं हैं, वे साधु नहीं हैं, वे अभवी हैं। पवित्र जिनवाणी के पाटे पर बैठकर शास्त्र वाचन की जगह वे दूसरों के दुर्गुण बाँच रहे हैं। बुला-बुला कर बता रहे हैं। नहीं मालूम पड़ने वाले को मालूम पड़ेगा तो धर्म के प्रति श्रद्धा घटेगी। इससे युवा मन दु:खता है। वह पहले से ही धर्म से दूर है और यह सब सुनकर, जानकर और दूर होता चला जाता है। उसकी श्रद्धा में फर्क आ जाता है। कई-कई साधु तो कहते हैं कि हमारे संप्रदाय के साधुओं के सिवाय सभी

मिथ्यात्वी हैं। असाधु हैं। अरे, आपको केवलज्ञान हो गया है!

एक प्रसिद्ध संत से किसी ने पूछा कि गुरुदेव, क्या मैं समदृष्टि हूँ तो गुरुदेव ने कहा कि मैं अभी अपना भी पूरा नहीं कह सकता हूँ तो आपके लिए क्या कहूँ। वे संत अपने लिए भी ऐसा कहते हैं और हम पूरी दुनिया को प्रमाण-पत्र बाँटते फिरते हैं। हम कहते हैं कि वह मिथ्यात्वी, वह अभवी, वह शिथिलाचारी, वह पाखंडी, वह ढीला, वह ऐसा, वह वैसा।

ऐसा कहने से क्या हम सुलभबोधि का बंध करेंगे?

प्रभु का उपदेश है-

उवसमसारं खु सामण्णं

उपशम ही श्रमण धर्म का सार है। भगवान धर्म का सार उपशम को कहते हैं। वे कहते हैं कि सारे धर्म को, शास्त्रों को, तप को यदि एक शब्द में कहा जाए तो वह है उपशम भाव। और उपशम भाव को ही कहते हैं वाद-विवाद से पराङ्गमुखता...

गुरुदेव फरमाते हैं कि बोलने से विवाद होता है और मौन रहने से ब्रेक लग जाता है। विवाद के मौके पर मौन धारण करलें।

मौनिनः कलहो नास्ति।

नीति का यह महावाक्य हमें वाद-विवाद से पराङ्गमुख बनने में मदद करेगा। गुरुदेव की शिक्षा के साथ यह बात पूरी की जाती है कि किसी भी विवाद को पाँच मिनट से ज्यादा नहीं रखना। पाँच मिनट के भीतर क्षमायाचना कर लेना।

***

पाँचवा बिन्दु पूरा हुआ। पूर्व बिन्दुओं की भाँति एक बार फिर थोड़ा सा रुकें, सोचें और आगे लिखी बातों को अपने जीवन का हिस्सा बनाएं। भूलिएगा नहीं कि कम-से-कम 21 दिन तक इसे अपने जीवन का हिस्सा बनाना है।

1. शान्त कलह को फिर से नहीं शुरू करना।
2. खुद लड़ाई शुरू नहीं करना।
3. भाई-बंधु पर कोर्ट में केस नहीं करना।
4. लड़ाई होने पर सोने से पहले सॉरी कहकर ही सोना।
5. लड़ाई होने पर बोल-चाल बंद नहीं करना।
6. आग में घी का काम नहीं करना।

6

मैत्री भावों का विकास

मैत्री भाव रखिए सदा, मत रखिए तकरार
जय जिनेन्द्र कहिए, सदा मुख से वचन उच्चार

6

मैत्री भावों का विकास

मेत्तिं भूएसु कप्पए – सभी जीवों से मैत्री हो
मित्ती मे सव्वभूएसु – सभी सत्वों से मैत्री हो
सत्त्वेषु मैत्रीं – सभी जीवों पर मैत्री भावना रखना।
किसी के प्रति भी अमैत्री का भाव न हो।

मैत्री भाव जगत में मेरा सब जीवों पर नित्य रहे।
दीन दु:खी जीवों पर मेरे उस से करुणा स्रोत बहे।

चार भावनाओं में पहली भावना का नाम है मैत्री।

अमितगति विरचित भावना बत्तीसी का पहला श्लोक मैत्री भाव को दर्शाता है।

प्रतिक्रमण में खामेमि सव्व... में मैत्री की कल्पना है।

संवत्सरी पर्व मैत्री से संबंधित है, जो महापर्व की कोटि में है। यह विश्व मैत्री दिवस के रूप में भी मनाया जाता है।

राजनीति में भी मित्र राष्ट्रों की कल्पना की गई है। विश्व युद्ध के समय मित्र राष्ट्रों का बड़ा महत्त्व था। धर्म क्षेत्र में तो मैत्री प्रथम और प्रमुख भावना है। भगवान ने आत्महितकामी प्राणी को

कहा है कि वह नित्यप्रति भावनाओं की अनुप्रेक्षा करे। इससे उसे महानिर्जरा महापर्यवसान होता है। उसमें एक मैत्री भावना है। गुजराती में दोहा है– **मैत्री भाव नुं पवित्र झरणुं मुझ हैयामा वह्य करे।** इसका अर्थ है कि प्रभु ऐसा आशीष प्रदान करें कि मेरे हृदय में सदा मैत्री भाव का पवित्र झरना बहता रहे। परम कल्याण के 40 बोलों में कहा गया है कि सभी जीवों के प्रति मैत्री भाव धारण करने से जीव जल्दी मोक्ष को प्राप्त करता है। तीर्थंकर पद प्राप्ति के 20 बोलों की आराधना करते हुए भगवान के भीतर पूर्वभव में सभी जीवों के प्रति मैत्री भावना का प्राबल्य होता है और वे 'सविजीव करूं शासन रसिक' की भावना से ओतप्रोत होते हैं। शांत सुधारस में कहा गया है कि 'मैत्री परेषां हितचिन्तनं यद्' अर्थात् दूसरे के हितचिन्तन में लगना, सभी के हित में विचार करना मैत्री है। सर्वत्र मैत्री की कल्पना करने वाले जीव का कोई भी शत्रु नहीं रह जाता है। उसके मन में सभी जीवों के प्रति मैत्री अर्थात् शुभ भावना आ जाती है। संक्षेप में कहें तो उसके मन में किसी के प्रति भी द्वेष नहीं रहता है। सभी के प्रति सात्विक भावना का निवास रहता है। 'हितचिन्तनं मेव मैत्री' कहकर तो शास्त्रकारों ने बहुत बड़ी बात कह दी है। मैत्री भाव का झरना भव-भव में बहता है। गौतम स्वामी, प्रभु महावीर को देखकर समर्पित हो गये। इसका कारण पूर्व भव की मैत्री थी। राजीमति भी प्रभु पर मोहित इसलिए हुई, क्योंकि पूर्व भव की मैत्री थी। अभयकुमार की सेवा में जो देव आया, वह मित्र देव था। कोणिक को जिस देव ने सहायता दी वह उसका मित्र था। देवर्धिगणि को

प्रतिबोध देने वाला पूर्व भव का मित्र देव था। ब्रह्मदत्त चक्री पिछले 5 भव से मित्र के रूप में थे। मैत्री के अनेक उदाहरण देखने-सुनने को मिलते हैं।

प्रभु का चिन्तन तो और गहरा है। वे फरमा रहे हैं कि जीव को सभी जीवों का हितचिंतन करना है। तेरे-मेरे का भाव जहाँ समाप्त हो जाता है, वह मैत्री है। जहाँ कोई दूसरा नहीं रह जाता, जहाँ कोई पराया नहीं रहता, वहाँ मैत्री है। सभी जीव मेरे हैं और मैं सभी जीवों का हित करूं, यह भावना मैत्री है। जम्बूकुमार और प्रभव पिछले कई जन्मों से मित्र थे। वे हर भव में एक-दूसरे को प्रतिबोध देने वाले बने। भगवान को भी कल्याण मित्र कहा गया है। उत्तराध्ययन सूत्र के तीसरे अध्ययन में मित्र होना पुण्यवाणी का लक्षण बताया गया है। उत्तराध्ययन सूत्र के ग्यारहवें अध्ययन में उसे शिक्षा का अधिकारी बताया गया है जो मित्रता की रक्षा करता है। जो पीठ पीछे भी मित्र की बुराई नहीं करता, उसे विनीत का लक्षण बताया गया है। श्री ठाणांग सूत्र में मित्र को बल के रूप में कहा गया है। निधि के रूप में कहा गया है। रामचरितमानस में 'धीरज धर्म मित्र अरु नारी, आपदकाल परिखिअहिं चारी' कहकर बताया गया है कि मित्र की परीक्षा आपदकाल में होती है। चाणक्य ने कुमित्रों से सावधान रहने को कहा है। मित्र वह कहलाता है, जिसके सामने आप अपने मन को खोल के रख दें। 'मिथ: त्रायते इति मित्रम' के माध्यम से कहा गया है कि जो परस्पर एक दूसरे को बचाते हैं वे मित्र हैं। मित्र उसे कहा गया है जो हित-अहित की सलाह देते हैं। संकट काल में साथ खड़े रहते

हैं। जिनसे आप गुप्त से गुप्त बात कह सकते हैं। दरअसल मैत्री ऐसा शब्द है जो व्यक्ति को सुनने में आनंद देता है। ऐसा अहसास है, जो व्यक्ति को भरापन महसूस कराता है।

अक्सर इस युग में खालीपन देखा जाता है। यह एक मानसिक बीमारी का रूप ले रहा है और यह बीमारी निरंतर बढ़ रही है। मनोवैज्ञानिक और समाजशास्त्री इसकी भयावहता से चिन्तित हैं। आज सबकी दुनिया मोबाइल में सिमट गयी है। लोग एक दूसरे से बात करना पसन्द नहीं कर रहे। संगोष्ठियाँ बंद सी हो गयी हैं। लोगों का अधिकतर समय मोबाइल ने ले लिया है, जिसके कारण आपसी संवाद समाप्त सा हो गया है।

एक घर में रहने वाले लोग कई-कई दिन तक बात नहीं करते हैं। यदि करते हैं तो मोबाइल से या मैसेज के माध्यम से। व्यक्ति एक दूसरे से कट रहा है। यह भारत की नहीं बल्कि विश्वव्यापी समस्या है। ईंट, चूने और पत्थरों से मकान तो बन सकता है, लेकिन घर तो मित्रों से ही बनेगा। संवाद से बनेगा। आजकल फेसबुक पर लोगों के 5000 मित्र हैं लेकिन घर में भाई से बोलचाल बंद है।

आजकल की फ्रेन्डशिप बड़ी अधूरी है। पहले मित्र होते हैं आपके माता-पिता। फिर गुरु। फिर सहपाठी। फिर भाई-बहन। पति-पत्नी। आप सोचेंगे कि ये तो रिश्ते हैं। नहीं, ये केवल रिश्ते नहीं हैं। किसी भी रिश्ते में जब तक मैत्री नहीं आती जब तक वह अधूरा रहता है। पति-पत्नी जब तक मित्र नहीं बनते, तब तक वे पूरे नहीं बन सकते। माता-पिता जब तक मित्र नहीं बनते, तब तक वे आपसे

पूरी तरह से जुड़ाव पैदा नहीं कर पायेंगे। किसी रिश्ते में बुनियादी सोच होती है अर्थात् मित्रता की सोच होगी है तो वह रिश्ता सफल साबित होगा। नहीं तो फिर औपचारिकता रह जाएगी।

आप देखिए न, पति, पत्नी से खुला हुआ नहीं है। पत्नी, पति से खुली हुई नहीं है। भाई-बहन परस्पर खुले हुए नहीं हैं। भाई, भाई से खुला हुआ नहीं है। वे एक दूसरे से बात साझा नहीं करते हैं। उसके कारण उनके बीच एक काल्पनिक दीवार खड़ी रहती है। तभी तो लड़की किसी बॉयफ्रेंड को ढूँढ़ती है और लड़का किसी गर्लफ्रेंड को ढूँढ़ता है। शादी के बाद पति और पत्नी में भी विवाहेत्तर संबंध देखे-सुने जाते हैं। यह आँकड़ा लगातार बढ़ता जा रहा है। संयुक्त परिवार कम हो रहे हैं। परिवार सिकुड़ते चले जा रहे हैं। आने वाले समय में कई और रिश्ते समाप्त हो जाएंगे।

समाजशास्त्रियों का आकलन है कि बुआ, चाचा, ताऊ और मौसी जैसे रिश्ते तो खत्म हो जाएंगे, क्योंकि जब एक ही लड़का या लड़की होंगे तो उस लड़के या लड़की के संतान होने पर उसके बुआ और ताऊ कहाँ होंगे। समाज बिखरता जा रहा है। संस्कृति की धज्जियां उड़ती जा रही हैं। अकेलापन निरंतर बढ़ रहा है। लोग रिश्तों से कतराने लगे हैं। इसका एक मात्र कारण है रिश्तों में मैत्री का अभाव।

पिता बच्चों को डाँट रहे हैं। कोई गलती न होने पर माँ बच्चे पर चिढ़ रही है। बहन टोंट मार रही है। भाई धमकी दे रहा है। इस व्यवहार से वह घर में किसी से खुल ही नहीं पाता। फिर वह बाहर

झाँकता है। अब बाहर अच्छे मित्र मिल जाएं तो ठीक और न मिलें तो कुसंगति में पड़ जाना स्वाभाविक है। इसके दुष्परिणामस्वरूप नशीली दवाओं का व्यापार अरबों-खरबों डॉलर का हो गया है। बच्चे और किशोर नशे की लत में फँसे हुए हैं। चरस, गाँजा और अफीम जैसे न जाने कितने प्रकार के नशीले पदार्थ इस समय हर शहर में मिलते हैं। इनकी गिरफ्त में सभी सभी आयु वर्ग के लोग आ रहे हैं। सुशांत सिंह राजपूत की मौत और आर्यन खान के पकड़े जाने के बाद बॉलीवुड का नकाब तो उतर ही चुका है।

हमारे अभिनेता और अभिनेत्रियां किस प्रकार से नशे में डूबे हुए हैं, यह हमने 'उड़ता पंजाब', फैशन, 'संजू' और 'विक्रम' फिल्मों में देखा। इनमें नशे का चित्रण किया गया है। खास बात यह कि संजू सफलतम फिल्म साबित हुई। इससे युवाओं के रुझान का पता चलता है। हुक्का पार्लर और बीयर बार की तादाद बढ़ती चली जा रही है। अकेलापन जब सालता है तो व्यक्ति को नशे की आदत लग जाती है। मीना कुमारी की मौत क्यों हुई? गुरुदत्त, दिव्या भारती, कुलदीप रंधावा, जियाखान क्यों मरे?

राकेश झुनझुनवाला 45000 करोड़ का आदमी था। इतना स्मोक करता था, इतना गुटखा खाता था कि आप उसके केबिन में खड़े नहीं रह सकते थे। शाहरूख खान चेन स्मोकर है। मर्लिन मुनरो ड्रग्स के कारण मरी। माइकल जैक्सन की मौत का कारण नींद की गोलियों का ओवरडोज था। पीना और स्मोक करना आजकल फैशन बन गया है।

इसका कारण है अकेलापन। सद्मित्रों का नितांत अभाव। और कुमित्रों की संगति। यह मैं नहीं कह रहा हूँ। यह सब शोध का निष्कर्ष है। शोध बताते हैं कि संयुक्त परिवार में रहनेवालों में नशे की लत कम पायी जाती है। जिन बच्चों की परवरिश भाई-बहनों के साथ होती है, वे कम चिड़चिड़े होते हैं। आत्महत्या की दर बढ़ने का एक कारण अकेलापन महसूस होना भी है। जब व्यक्ति को यह महसूस होता है कि मैं अकेला हूँ, मेरा कोई नहीं है, तब वह आत्महत्या जैसा कदम उठाता है। भय्यू जी महाराज जैसे आध्यात्मिक ख्याति प्राप्त संत ने आत्महत्या कर ली। 2021 में एक मठाधीश ने आत्महत्या कर ली।

कुमित्र बुरे काम में साथ हो जाता है, फिर मतलब साधने के लिए ब्लैकमेल करता है। उसका परिणाम आत्महत्या तक जा पहुंचता है। युवाओं के बारे में कहा जाता है कि वह गुमराह है। गलत लाइन पर है। क्रोधी हो गया है। नशेड़ी हो गया है। किसी की सुन नहीं रहा। इन आक्षेपों से पहले यह खोज करने की जरूरत है कि उसके जीवन में कोई अच्छा मित्र है कि नहीं। किताबें बहुत अच्छी मित्र होती हैं। अच्छा संगीत तो बहुत काम करता है। कोई शौक हो तो वह बहुत मदद करता है। चित्रकारी, नृत्य, बाँसुरी बजाना ऐसे कार्य हैं जो कि आपको सकारात्मक ऊर्जा से भर सकते हैं। संगीत से चिकित्सा होती है पर बहुत दुख की बात है कि जिस देश में संगीत की खोज हुई है उसी देश ने संगीत चिकित्सा विदेशियों से सीखी। तानसेन के बारे में आपने सुना होगा कि उनके राग मेघ मल्हार से बारिश हो जाती थी

और राग दीपक गाने से अग्नि प्रज्वलित हो जाती थी। तानसेन के देश के लोग संगीत बाहर से सीख रहे हैं। जहाँ पर संगीत शास्त्र का निर्माण हुआ, सप्त सुरों का संधान हुआ, ताल और लय की खोज हुई, वहीं के लोग विदेशी संगीत पर थिरक रहे हैं। जहाँ तीर्थंकर भगवान की देशना में मालकोश का प्रयोग होता था, वहाँ के लोग विदेशी संगीत पर आसक्त हैं। युवा रॉक और पॉप सुन रहा है। कत्थक और भरतनाट्यम को भूलकर वह ऐसा डांस सीख रहा है, जिसका क्लाइमेक्स डांसर को निर्वस्त्र होने पर मजबूर कर देता है।

भारत ने संगीत को अध्यात्म से जोड़ा है। यहाँ के कत्थक में साधना थी। बिरजू महाराज गहरे साधक थे। सारे गम जिसके चरणों में आने से समाप्त हो जाते हैं वह है वास्तविक संगीत। आज तो कानफोड़ू डी.जे. रह गया है।

6 फरवरी 2022 को दुनिया से अलविदा करनेवाली लता जी ने 1991 में कहा था कि संगीत अपनी गरिमा खो रहा है। अच्छा संगीत भी आपको तनावरहित बना सकता है। अच्छे मित्र या अच्छा संगीत दोनों आपको और आपके खालीपन को भर सकते हैं। आपके जीवन को खुशहाल कर सकते हैं। लेकिन अकेलापन तब दूर होगा, जब संवाद स्थापित होगा। संवाद मैत्री भाव से ही विकसित हो सकता है। आप देखें कि माँ, पिता, भाई-बहन, पति-पत्नी, गुरु-शिष्य होने से पहले आप मित्र हैं या नहीं!

युवा साधु के पास आने से कतराता है। यह बात आज की नहीं है। जमाने से है। 1911 की श्रीलाल जी महाराज की जीवनी में

लिखा है कि युवा धर्म से दूर जा रहा है। आज से 111 साल पहले ये लिखा गया था। इसलिए दूर है, क्योंकि वह गुरु में मित्र को नहीं देख पाता। जब वह गुरु में एक कल्याण मित्र को देखेगा तब खिंचा चला आएगा। गुरु बनने से पहले मित्र बनना जरूरी है।

आचार्य श्री रामलाल जी म.सा. ने प्रवचन में फरमाया था कि एक युवा साधु के पास आया। वह कुंठित था। साधु ने उसे डाँट दिया तो उसने आना छोड़ दिया। अब हम दोष देते हैं युवा को कि वह आता नहीं है। गुरु का काम है शिष्य की समझ विकसित करना। डंडा लेकर पीछे पड़ना उचित नहीं है। यदि माता-पिता या गुरु ऐसा करते हैं तो वे बच्चे को निश्चित ही धर्म से दूर करते हैं। दबाव देने से वह भागेगा। इसलिए दबाव मत दो। उसकी समझ विकसित करने की कोशिश करो। चर्चा करो। खुलकर बातें करो। उसको यह भरोसा हो जाए कि यह मेरे मित्र हैं। ये मेरे हितकारी हैं। जब ऐसा भरोसा हो जाएगा तब ही आप उसके उज्ज्वल भविष्य की नींव रख सकेंगे। उसका आप पर विश्वास जम जाएगा, तब वह विश्वास तोड़ेगा नहीं। विश्वास जम जाएगा तब वह माँ-बाप की आज्ञा का उल्लंघन नहीं करेगा। तब गुरु-शिष्य के मध्य दूरी नहीं होगी।

इस दुनिया में कोई मूर्ख नहीं है। सब समझदार हैं। शायद आपसे ज्यादा समझदार हैं। आपसे ज्यादा स्मार्ट हैं। आप उसे समझाने की कोशिश कर रहें हैं जबकि वह शायद आप से ज्यादा जानता है। फिर क्यों ज्ञान बाँट रहे हो। ज्ञान बाँटने की मशीन बनने की जरूरत नहीं है। फिर किसी बात को चिढ़कर कहना, क्रोध में कहना

या अहंकार के वश में होकर कहना कितना उचित है? बिल्कुल नहीं।

एक महाराज चिल्ला कर बोले कि नरक में जाओगे। किसका संसार कितना बाकी है, कौन कितना हलुकर्मी है, यह आपको नहीं मालूम है। क्या पता कौन नरक में जाएगा! अर्जुन माली जैसा व्यक्ति भी मोक्ष चला गया। चीजों को अपने तरीके से होने दो। एक बात और कि हर रिश्ता दो चीजों पर निर्भर करता है। एक फ्रिक्वेन्सी और दूसरा स्पेस। जब तक आपकी फ्रिक्वेन्सी किसी से नहीं मिलेगी, तब तक वह आपके पास आएगा ही नहीं। आएगा तो बैठेगा नहीं। बैठेगा तो सुनेगा नहीं। सुन लिया तो वापस नहीं आएगा।

एक साधु चौमासा करते हैं, वहाँ दस लोग आते हैं। दूसरे साधु करते हैं, वहाँ दूसरे दस लोग आते हैं। तीसरे करते हैं तो तीसरे दस लोग आते हैं। हर महाराज का प्रभाव किन्हीं 10 लोगों पर पड़ता है। क्यों पड़ता है? जिनके साथ जिसकी फ्रिक्वेन्सी बैठती है वह उनसे जुड़ जाता है। जुड़ता ही नहीं, जान तक दे सकता है।

शादी के लिए कई लड़कियाँ देखी जाती हैं। कोई पसंद नहीं आती। पसंद आ जाती है तो बात नहीं चलती। बात चलती है तो कुंडली नहीं मिलती है और कुंडली के 36 गुण मिलने के बाद भी तलाक हो जाता है। इसलिए तलाक हो जाता है क्योंकि फ्रिक्वेन्सी मैच नहीं हुई। किसी रिश्ते में जब तक फ्रिक्वेन्सी मैच नहीं होती है तब तक वह रिश्ता दृढ़ नहीं होता। तब तक मैत्री में नहीं बदलता।

आपने देखा-सुना होगा कि कई लोग एकदम से दिल में

बस जाते हैं। इसलिए बस जाते हैं क्योंकि फ्रिक्वेन्सी मैच हो जाती है। फ्रिक्वेन्सी मैच होने के बाद ये सब बेमानी हो जाता है कि क्यों और कैसे प्यार हुआ। मुद्दा फ्रिक्वेन्सी का है। फ्रिक्वेन्सी मैच होने से बात बन जाती है, नहीं तो दस करोड़ लगाकर अच्छे मुहूर्त में शादी हुई, लेकिन थोड़े समय बाद तलाक हो जाता है। इसी पुस्तक में आपने पहले पढ़ा कि शादी होने के बाद कुछ ही समय में एक पति-पत्नी में तलाक हो गया। बॉलीवुड और हॉलीवुड के तलाक फेमस हैं।

दूसरा बिन्दु है स्पेस। किसी भी रिश्ते में स्पेस होना बहुत जरूरी है। माता-पिता बच्चों को स्पेस दें। बड़ा भाई छोटे भाई को स्पेस दे। गुरु-शिष्य आपस में स्पेस मेंटेन करें। स्पेस मतलब जगह देना। सोचने और समझने का अवसर देना। उनके मन को समझना। कोई बात थोपना नहीं। इतना विश्वास जगा देना कि वो आपसे कोई बात छुपा ही नहीं सके। बच्चे से कुछ भी हो जाए वह माँ से कह दे। डर कर नहीं बल्कि इसलिए कि वह बात को अपने पेट में पचा ही नहीं सके। गलत से गलत काम कर देने पर भी वह आप पर भरोसा करे। आपके सामने सब बातें बेझिझक कह डाले। ऐसा तब होगा, जब आप उसे विश्वास में ले लेंगे। और विश्वास तब आएगा, जब आप स्पेस देंगे। यह बहुत जरूरी है। माता-पिता बच्चों से बहुत सारे बिन्दुओं पर बात ही नहीं करते हैं। उम्र के साथ होने वाले परिवर्तनों को स्वीकार नहीं करते हैं।

बड़ों से अक्सर सुना जाता है कि हम तो अपने पिता के साथ ऐसा नहीं करते थे। हमारी अपने बाप से फटती थी। अरे भाई! ठीक

है। उस जमाने में दस औलाद होती थी। गाँव या मोहल्ला साथ में रहता था। 20-20 लोग साथ रहते थे। पिता से नहीं बोलता था तो चाचा से बोलता था। चाचा से नहीं तो चाची से। बड़े भाई से नहीं तो बहन से बात हो जाती थी लेकिन मन में नहीं रहती थी। तब पिताजी से नहीं बोलने पर भी काम चल जाता था। अब तो आप अकेले रहते हो। आप, आपकी बीवी और आपका बेटा। चौथा कुत्ता। अब बात किससे करें। पिताजी को ऑफिस और बिजनेस से टाइम नहीं। माँ को ब्यूटीपार्लर और सीरियल से टाइम नहीं। कोई दूसरा भाई-बहन है नहीं। ले देकर एक कुत्ता ही रहता है। अब उस कुत्ते से क्या कहे। उससे कह कर भी क्या फायदा! वो तो टाँग उठा कर मूत देगा और बच्चा कुंठित हो जाएगा।

इसका परिणाम है कि आज छोटे-छोटे बच्चों की काउंसिलिंग हो रही है। बड़े-बड़े स्कूलों में साइकियाट्रिस्ट रखे जा रहे हैं, जो बच्चों की कुंठा को दूर करने की कोशिश करते हैं।

यदि आपकी अपने बाप से फटती थी तो परिवार का कोई दूसरा सिल देता था। फटा हुआ मन शिक्षा की सूई और प्रेम के धागे से सिल दिया जाता था। अब तो वह सूई-धागा ही नहीं है।

मैत्री महत्त्वपूर्ण बिन्दु है। आप एक दूसरे के मित्र बनो, दुश्मन नहीं, पहरेदार नहीं। कई दम्पती में आपस में गलतफहमी हो जाती है। पति कहता है कि तुम किससे बात कर रही थी! इतनी देर क्यों कर रही थी! ऐसे हँस-हँस के बात क्यों कर रही थी! आँखें क्यों मटका रही थी। विश्वास होगा तो ऐसी बातें नहीं होंगी। एक-दूसरे के

प्रति सम्मान की भावना होगी तो समर्पण स्वत: हो जाएगा। फिर पहरेदार बनने की जरूरत नहीं पड़ेगी।

आप क्या समझते हो कि इस युग में किसी की जासूसी करके आप पकड़ पाओगे। जिसको मिलना होगा और कुछ गलत करना होगा वह कभी भी कर सकता है। दिन के 8 बजे से 5 बजे तक बच्चा बाहर होता है। स्कूल-कॉलेज में होता है। ऑफिस में होता है। अपने व्यवसाय के लिए बाहर होता है। अगर आपके और उसके बीच में प्रेम और विश्वास का धागा नहीं है तो वह कभी भी आँखों में धूल झोंक सकता है। इसलिए समझदारी इसी में है कि आपसी समझदारी का विकास करें। उन्हें स्पेस दें और परिपक्व बनाएं। अच्छी चीजों के प्रति प्रोत्साहित करें। यह खुलापन उसे थामे रखेगा। वह सच्चा इनसान बनेगा। मातृभक्त, पितृभक्त, गुरुभक्त, प्रभुभक्त, जिनशासन प्रेमी, संस्कृति रक्षक, दृढ़धर्मी और प्रियधर्मी बन पाएगा। इस दौर के तथाकथित जेंटलमैन में एक प्रचलन चल रहा कोई त्योहार नहीं मनाने का। वह भारतीय त्योहारों से कट रहा है। दिवाली, होली और रक्षाबंधन छोड़कर क्रिसमस, वेलन्टाइन डे, फ्रेडशिप डे और न्यू ईयर सेलीब्रेट कर रहा है। जब वह भारतीय त्योहारों से जुड़ेगा तो कहीं न कहीं संस्कृति से जुड़ेगा। संस्कृति से जुड़ेगा तो संस्कृति बचेगी। संस्कृति बचेगी तभी धर्म बचेगा। संस्कृति बचे बिना धर्म का बचना असंभव है। 'मातृ देवो भव: पितृ देवो भव: गुरु देवो भव:' हमारी संस्कृति है।

ध्यान रहे, धर्म और संस्कृति अलग-अलग हैं। संस्कृति

बचेगी तभी धर्म बचेगा। देश के प्रधानमंत्री देश की संस्कृति को बचाने का प्रयास कर रहे हैं। सैकड़ों मूर्तियां दूसरे देशों से भारत आयी हैं। मीनाक्षी नटराजन की मूर्ति देख कर भारत प्रसन्नता से झूम गया।

अमेरिका में अक्टूबर माह को भारतीय त्योहारों के लिए घोषित किया गया है। युवा त्योहारों से जुड़ता है तो कहीं न कहीं अकेलेपन से हटता है और सात्विकता से जुड़ता है। इस दौर में अकेलेपन से लड़ना बहुत जटिल होता चला जा रहा है। कितना अकेलापन हो गया उसे एक फेसबुक पोस्ट से समझा जा सकता है। एक आदमी ने फेसबुक पर लिखा कि पिछला रविवार परिवार के साथ बिताया। वह लिखता है कि वाह! बड़े अच्छे लोग थे।

यह पोस्ट यह बताने के लिए काफी है कि आज परिवार के साथ बैठना ही बंद हो गया है। पहले तो परिवार है नहीं। संयुक्त परिवार में धर्म एवं संस्कृति की सुरक्षा की संभावना ज्यादा है। दो लोगों का ही परिवार रहेगा तो कितना बनाएंगे और कितना बहराएंगे। कैसे '**विउलं असणं पाणं खाइमं साइमं पडिलाभेस्सामि**' की चर्चा चरितार्थ हो पाएगी। बहराने से, खिलाने से कठोरता की भावना खत्म होगी। भावुकता उत्पन्न होगी। यह सब होगा तो जीवन में कठोरता और कृतघ्नता नहीं होगी।

कठोरता और कृतघ्नता भयंकर दुर्गुण हैं। ये मैत्री भाव के विकास के अभाव में फलते-फूलते हैं। इसके विपरीत भावुकता और कृतज्ञता मैत्री भाव के विकास से होती है। जिसका जितना अधिक मैत्री भाव विकसित होगा वह उतना भावुक होगा। जिसका जितना

मैत्री भाव विकसित होगा वह उतना ही अपने गुरुजनों के प्रति कृतज्ञता का भाव धारण किए होगा। कृतज्ञ व्यक्ति हमेशा अपने आपको गुरुजनों की भक्ति में लगाए रखता है। यह महान प्रभाव मैत्री भाव के विकास का है।

पुराणों में एक कहानी आती है। सारे देवता पृथ्वी से पूछते हैं कि बताओ तुम्हें सबसे ज्यादा भारी कौन लगता है।

धरती माँ कहती हैं कि मेरे लिए सबसे भारी व्यक्ति कृतघ्न है। कृतघ्न को महापापी कहा गया है।

***

छठा बिन्दु पूरा हो चुका है। अब समय आ गया है थोड़ा सा रुकने, सोचने और अपने आप से वादा करने का। वादा 21 दिन तक कुछ बिन्दुओं को अपने जीवन का हिस्सा बनाने का। तो करिए वादा और अपनाइए नीचे लिखे बिन्दुओं को। अपनाने वाले बिन्दु हैं-

1. Be a good friend (अच्छे मित्र बनें)।
2. स्पेस दें। जैसे- (क) दूसरे का निर्णय उस पर छोड़ें।

(ख) ताका-झाँकी न करें। (ग) काम सौंपें।

(घ) तानाशाही न करें। (ङ) हर चीज के लिए पूछताछ न करें।

(च) समझाने से पहले यह जानें कि जिसके लिए समझा रहे हैं, वह काम कितना हानिकारक है।

3. प्यार करें। जीओ और जीने दो की नीति अपनाएं।
4. हर जगह 'मोगैम्बो' न बनें।
5. बच्चे/बड़े/माता-पिता के साथ क्वालिटी टाइम बिताएं।

7

जीवन नियमन

व्रत बारह धारण करें, 14 नियम दिलधार
जीवन नियमन हम करें, भव भव में सुखकार

7

जीवन नियमन

पिछले छः बिंदु ने आपको प्रेरित किया होगा। अब सातवें बिंदु की बात। इसकी शुरुआत कुछ सवालों से। इन सवालों का जवाब अपने मन में दीजिए।

क्या आप बिना लगाम के घोड़े की सवारी करने की सोच सकते हैं?

क्या आप बिना अंकुश के हाथी पर बैठने की बात सोच सकते हैं?

क्या आप बिना वल्गा के रथ पर बैठने की सोच सकते हैं?

क्या आप बिना ब्रेक की साइकिल चलाना चाहेंगे?

क्या आप बिना ब्रेक की बाइक चलाना चाहेंगे?

क्या आप बिना पावर ब्रेक की कार में सफर करेंगे?

क्या आप बिना पावर ब्रेक वाली रोल्स रॉयस पसंद करेंगे?

क्या आप ऐसी फॉर्मूला रेस की कल्पना कर सकते हैं जिसमें शामिल स्पोर्ट्स कार में ऑटोब्रेक का सिस्टम ही नहीं रखा गया हो?

क्या आप उस कार में चलने की कल्पना कर सकते हैं, जिसमें उसे रोकने का कोई सिस्टम ही नहीं हो?

आपने देखा-सुना होगा किसी ट्रेन या कार का ब्रेक फेल होने के बारे में। उसके बाद क्या हुआ होगा यह भी आपको भलीभाँति पता होगा। यहाँ तक कि जैन तीर्थंकरों ने तो इस स्थिति में सहायक द्रव्य की घोषणा की है। वे कहते हैं कि अधर्मास्तिकाय नामक द्रव्य जीव की स्थिति में, ब्रेक में सहायक भूत है। चलना जरूरी है किंतु चलने के साथ-साथ रुकना भी जरूरी है। आप सिर्फ चलने पर ही निर्भर नहीं रह सकते हैं। रुकना भी चलने के समान ही उपयोगी है। 'फरारी' जैसे चलती है वैसे ही रुकने का भी उसमें सिस्टम होता है। यदि वह 3.1 सेकेण्ड में 0 से 60 किलोमीटर की स्पीड को छूती है तो उसमें 0 पर आने की क्षमता भी उतनी ही तेज होती है। शायद ऐसी कार नहीं होगी जो कि 3.1 सेकेंड में 60 की स्पीड पकड ले और 60 से 0 पर आने में पाँच मिनट का टाइम ले। ऐसा नहीं होगा क्योंकि जितनी ज्यादा स्पीड होगी ब्रेक की पकड़ भी उसी तुलना में तीव्र होगी। यह एक स्वभाविक तकनीकी तथ्य है।

हम जिस दौर में जी रहे हैं वह दौर गति का है। पहले 2 जी था फिर 3 जी आया। उसके बाद 4 जी और अब 5 जी के दौर की शुरुआत हो चुकी है। देखें पहले के नेट की स्पीड को और अब 5 जी के नेट की स्पीड को। पहले के ब्लूटुथ के डेटा ट्रांसफर की स्पीड और 5 जी में डेटा ट्रांसफर की स्पीड में बहुत अंतर है। पहले लैण्डलाइन फोन थे। फिर सेलफोन आया। फिर वायरलेस आया। इस प्रकार से भारत में सूचना के क्षेत्र में क्रान्ति आ गई। इसके कारण बड़े-बड़े परिवर्तन देखने को मिले। बटन वाले मोबाइल से टच स्क्रीन मोबाइल

और फिर एंड्राएड फोन। उससे भी एक कदम आगे आई-फोन। आई-फोन के भी अलग-अलग वर्जन। हर सितम्बर में एक नया एपल फोन लांच होता है। इस तरह हम बहुत तेजी से बदल रहे हैं। भविष्य की गति का हम अंदाजा नहीं लगा सकते हैं।

कुछ सौ साल पहले कबूतरों द्वारा सूचनाएं भेजी जाती थीं। फिर तार आए और फिर टेलीग्राम। फिर पोस्टकार्ड आए। पोस्ट ऑफिस द्वारा सूचना को गंतव्य तक पहुंचाने में 4-5 दिन लगते थे। तब सूचना प्रसारण की गति बहुत धीमी थी। अब तो ई-मेल कुछ ही क्षणों में दुनिया के किसी भी हिस्से में भेजा जा सकता है। विदेश में रहने वाला शांतिलाल सांड का पौत्र वीडियो कॉल के माध्यम से अपने दादा को अपना पूरा रूम दिखाता है। कहता है कि दादाजी देखो मेरे रेफ्रिजरेटर में क्या-क्या पड़ा है।

हमने तरक्की की है। पहले के जमाने में प्राय: दो कंपनियों की गाड़ी भारत में थी। एक थी एम्बेसडर और दूसरी थी फियेट। तीसरी साधारण जीप थी। बहुत धनी आदमी के पास ही एम्बेसडर होती थी। 1981 में मारुति सुजुकी भारत में कार लेकर आई। 1998 के आस-पास कार के तीन और मॉडल बाजार में आये; सेन्ट्रो, मटीज और इंडिगो। आज कारों की बाढ़ आ गयी है। नये-नये मॉडल रोज नये फीचर के साथ लांच हो रहे हैं।

भारत पहले कुटीर उद्योग और ग्रामोद्योग पर निर्भर था। गांधीजी ने पूर्ण स्वराज की कल्पना में ग्रामोद्योग की महत्त्वपूर्ण भूमिका मानी है। उनका चिंतन था कि इसी के बल पर हम पूर्ण

स्वराज प्राप्त कर सकते हैं। हम कुछेक प्रकार के वस्त्रों को पहना करते थे। दर्जी के पास जाकर सिलाई करवाते थे। दर्जी माप लेता था। इस दौरान बहुत सी बातें होती थीं। हाथ ऊपर करो, नीचे करो, सीने में हवा भरो। न मालूम क्या-क्या। एक वस्त्र की सिलाई में कई दिन लग जाते थे।

हमने बदलाव देखा। रेडीमेड वस्त्रों की दुकानें खुल गईं। 90 के दशक में ग्लोबलाइजेशन होने के बाद सन् 2000 से 2005 तक जबरदस्त बदलाव आया। अब ब्रांड महत्त्वपूर्ण हो गया है। पहले एक पूरी ड्रेस 200-400 रुपये में आ जाती थी लेकिन अब तो एक शर्ट ही चालीस हजार रुपये तक में बिक रही है, बस खरीदने वाला चाहिए। बचपन में स्कूल ड्रेस में ही शादी की बारात में जाने वाला बच्चा भी अब ब्रांड की बात कर रहा है। ऑनलाइन डिलेवरी हो रही है। पूरा का पूरा बाजार आपके हाथ में है। बटन दबाओ और आपको जो कुछ चाहिए वह सब घर पर ही मिल जायेगा।

अब ढाई लाख रुपये से लेकर ढाई करोड़ तक की कार उपलब्ध है। करीब सत्ताईस करोड़ की घड़ी दिल्ली एयरपोर्ट पर पकड़ी गई।

आजादी के 75 साल में हमारी आमदनी 365 रुपये से बढ़कर 1,28,829 रुपये हो गई है। गरीबों की आबादी 80 फीसदी से घट कर 20 फीसदी पर आ गई। 21 करोड़ नल मोदी सरकार ने लगवाए हैं। लकड़ियों के बजाय अब गैस पर खाना पक रहा है।

1947 में 49,523 किलोमीटर मीटरगेज तथा ब्राडगेज

और 5,370 किलोमीटर नैरोगेज रेलवे लाइन थी। 72 इलेक्ट्रिक, 17 डीजल और 8120 भाप के इंजनों से 35.2 लाख सवारी और दो लाख टन माल की ढुलाई होती थी। वहीं 2022 में 13,523 ट्रेन्स द्वारा 2.3 करोड़ लोग और 3.89 मिट्रिक टन माल ढुलाई का काम हुआ। देश में 7325 रेलवे स्टेशन हैं। रेलवे के पास 2,93,077 फ्रेट वैगन, 76,608 कोच और 12,729 लोकोमोटिव इंजन हैं।

बीते 75 सालों में 63 लाख किलोमीटर सड़क नेटवर्क हमारे पास है। भारतमाला योजना में 34,800 किलोमीटर राष्ट्रीय राजमार्ग बने। पहले महज चार लाख किलोमीटर थे। राष्ट्रीय राजमार्गों की कुल लम्बाई 1947 में 21,378 किलोमीटर थी जो अब बढ़कर 1.40 लाख किलोमीटर से भी अधिक है।

देश में 111 जलमार्ग हैं। इनमें से 13 शुरू हैं, जो हर साल 5.5 करोड टन कार्गो का लदान करते हैं। अभी हमारे पास 129 हवाई अड्डे हैं। इन हवाई अड्डों से दस करोड़ लोग सालाना सफर करते हैं। 1947 में 1,362 मेगावाट बिजली का उत्पादन था, जो जून 2022 के अंत तक 4,03,761 हो गया है। 31 जुलाई 1995 को पश्चिम बंगाल के मुख्यमंत्री श्री ज्योति बसु ने केन्द्रीय संचार मंत्री सुखराम को नोकिया के फोन से पहला कॉल किया था। आज 80 करोड़ लोगों के पास मोबाइल है। 4 जी के सात लाख टावर हैं। 5 जी को बेहतर करने के लिए सात लाख और चाहिए। 1979 में 1 जी, 1991 में 2 जी, 2001 में 3 जी, 2019 में 4 जी आया। 2023 में

5 जी आ चुका है। आज 10 गुना ज्यादा कनेक्टिविटी और पलक झपकते ही डाउनलोड की सुविधा है।

वर्तमान में कुल 22 शहरों में मेट्रो चल रही है या चलने वाली है। 754 किलोमीटर का मेट्रो नेटवर्क है।

2014 में शहरी आबादी बढ़कर 42.4 प्रतिशत हो गई।

1947 में 47,524 डॉक्टर थे, जो जून 2022 तक 13,08,009 हो गये। वर्तमान में कुल 612 मेडिकल कॉलेज हैं। 1997 में सिर्फ 19 थे।

1947 में 283 फिल्में बनी जिनका प्रदर्शन 7000 स्क्रीन पर हुआ। 2022 में 1500 से ज्यादा फिल्में 9,423 स्क्रीन पर रिलीज हुई। 1947 में सिनेमा का टिकट 25 पैसे में मिलता था, जबकि 2025 तक 250-300 रुपये मल्टीप्लेक्स में औसत कीमत हो जायेगी। 1947 में दिलीप-नूरजहाँ की जुगनू ने पचास लाख रुपये कमाए। 2022 में के.जी.एफ.-2 ने सभी भाषाओं में 992 करोड़ रुपये कमाए। 1997 में दिल्ली में मल्टीप्लेक्स आया। 2008 में यू ट्यूब का आगमन हुआ।

2002 में अतुल्य भारत, 2021 में अपना भारत और 2022 में ताजमहल, गूगल स्ट्रीटव्यु पर दुनिया का तीसरा सबसे ज्यादा देखा जाने वाला स्मारक बन गया।

हमने प्रगति की है, आविष्कार किए हैं, लेकिन सारी प्रगति के बावजूद वैज्ञानिक चिंतित हैं। समाजशास्त्री परेशान हैं। वैज्ञानिकों के लिए ई-वेस्ट चिंता का विषय है। यह भयंकर रूप से बढ़ रहा है।

2021 की रिपोर्ट में कहा गया है कि 1000 से ज्यादा घातक पदार्थ कचरे अथवा उसकी प्रोसेस से निकलते हैं। चीन एक करोड़ टन, अमेरिका 69 लाख टन, भारत 32 लाख टन सालाना कचरा पैदा करता है।

'ग्लोबल वेस्ट मॉनीटर' की रिपोर्ट के अनुसार 5.36 करोड़ मिट्रिक टन ई-कचरा दुनिया भर में 2019 में पैदा हुआ। टेलीविजन और वॉशिंग मशीन 9 साल, एयर-कंडीशनर और रेफ्रिजरेटर 10 साल, सेलफोन 5 साल चलता है। इसके बाद ये सब ई-कचरे में बदल जाते हैं। सिर्फ भारत में 2019 में बत्तीस लाख टन ई-वेस्ट निकला। भारत में सालाना पन्द्रह करोड़ स्मार्टफोन, 1.75 करोड़ टेलीविजन, दो करोड़ ऑडियो सिस्टम, 1.45 करोड़ रेफ्रिजरेटर, 70 लाख वॉशिंग मशीन बिकती है। अनुमान है कि सन् 2030 तक भारत 1.4 करोड़ टन ई-वेस्ट पैदा करेगा। ई-वेस्ट से लेड, लिथियम, मर्करी आदि निकलता है, जिससे मिट्टी और भूगर्भ जल प्रदूषित होता है। इनको जलाने से उत्पन्न धुएं से कैंसर, त्वचा रोग, किडनी, फेफड़े, हार्ट की बीमारियां होने की आशंका रहती है।

आँकड़े और भी बहुत कुछ कहते हैं। 2050 तक 30 भारतीय शहर गहरे जल संकट से घिर जाएंगे। 15 महानगरों में रहने वाले 5 करोड़ लोगों को शुद्ध पेय जल उपलब्ध नहीं हो सकेगा। यूनिसेफ इण्डिया 2021 की रिपोर्ट में है कि हर छठा भारतीय शहरी झुग्गी में रहता है। 10 में से चार लोगों को पीने का साफ पानी सुलभ नहीं है।

1947 में 4 हजार क्यूबिक मीटर जल प्रति व्यक्ति सालाना उपलब्ध था, जो 2022 में घट कर 1 हजार क्यूबिक मीटर रह गया। 1947 में 25 फीसदी इलाका जंगल से घिरा था जो अब 21 फीसद हो गया है। विश्व में जंगल की अंधाधुंध कटाई सभी को पता है।

1947 में बाघों की संख्या चालीस हजार थी जो 2022 में 2,997 है।

विश्व वायु गुणवत्ता रिपोर्ट 2021 के अनुसार दुनिया के 15 सबसे प्रदूषित स्थानों में से 10 भारत में हैं। टॉप 100 में 53 भारत के हैं। ध्वनि प्रदूषण भयंकर रूप से बढ़ रहा है। लैंसेट प्लेनेटरी हेल्थ रिपोर्ट के अनुसार 2019 में 16.7 लाख मौतें वायु प्रदूषण से, 14 लाख मौतें सीसा प्रदूषण से हुईं। वैज्ञानिक डॉ. सुरेन्द्र पोखरना के अनुसार हमने इतने रासायनिक हथियार बना लिए हैं, जिससे सैकड़ों बार दुनिया को नष्ट किया जा सकता है। आणविक बम के प्रभाव भयावह साबित हुए हैं। अगस्त 1945 में हिरोशिमा इसके दर्द को भोग चुका है। अब तो परमाणु बम बनाने की प्रक्रिया आम हो चुकी है। इस पर नियंत्रण आवश्यक है। कल्पना कीजिए कि ये बम क्या कर सकता है। आज तो उससे भी आगे हाइड्रोजन बम है।

साहिर लुधियानवी की गजल

''गुजश्ता जंग में तो घर बार ही जले,
अजब नहीं इस बार जल जाएं तनहाइयां भी
गुजश्ता जंग में तो पैकर (शरीर) ही जले,
अजब नहीं इस बार जल जाएं परछाइयां भी''

भयानकता बयान कर रही है।

सन् 1970 से 2010 तक के चालीस सालों में पृथ्वी की अनेक प्रजातियाँ नष्ट हो गई हैं। हर वर्ष लगभग पन्द्रह हजार करोड़ जीव मांसाहारी लोगों द्वारा मारे जाते हैं। प्रति वर्ष 20 हजार प्रजातियां नष्ट हो रही हैं। अभी राजस्थान के अलवर सरिस्का रेंज को तितलियों के लिए रिजर्व किया गया। कोरबा के राजा रामानुज प्रताप सिंह देव ने एक रात में तीन चीतों का शिकार किया। वह अंतिम शिकार था। उसके करीब 75 सालों बाद मोदी जी ने अपने जन्मदिन के अवसर पर चीतों की भारत वापसी करवाई, जिससे पूरा देश प्रसन्न है।

अनगिनत प्रजातियों को हमने अपने क्षणभंगुर सुख के लिए नष्ट कर दिया है। एक-एक का वर्णन किया जाए तो एक किताब की सीरीज सिर्फ नष्ट होने वाली प्रजातियों पर निकल सकती है। इन सबसे वैज्ञानिक चिंतित हैं। प्रदूषण से वैज्ञानिक चिंतित हैं। वायु प्रदूषण से वैज्ञानिक चिंतित हैं। ध्वनि प्रदूषण से चिंतित हैं। ग्लेशियर के पिघलने से वैज्ञानिक चिंतित हैं। ग्लोबल वार्मिंग से वैज्ञानिक चिंतित हैं। ओजोन परत में होने वाले छेद से वैज्ञानिक चिंतित हैं। केमिकल वार के संकेतों से वैज्ञानिक चिंतित हैं। परमाणु युद्ध की आशंका से वैज्ञानिक चिंतित हैं। सायबर वॉर और केमिकल वॉर से पूरा विश्व हिल गया है। एक छोटे से कोरोना वायरस ने पूरे विश्व को हिला कर रख दिया। सारी इकोनॉमी टें बोल गई। अपनी प्रगति पर इतराने वाले मनुष्य के गाल पर प्रकृति का यह भयानक तमाचा था।

भुज का भूकंप हम नहीं भूले होंगे। लातूर की त्रासदी हमें पता होगी। भोपाल गैस कांड हमें अभी भी आतंकित करता है। चेर्नोबिल परमाणु दुर्घटना हमारी स्मृतियों में ताजा होगी। अमेरिका में बाढ़ से पचास हजार जीव मारे गये। ऑस्ट्रेलिया के जंगलों में लगी आग बुझने का नाम नहीं लेती। इंडोनेशिया में वालकेनो (ज्वालामुखी) जब-तब फटती रहती है।

क्या ये वास्तव में विकास है?

क्या ये संकेत प्रगति के हैं?

सोचिएगा। विचार करिएगा।

कोपेनहेगन में एक सम्मेलन में विश्व के सम्पन्न कहलाने वाले राष्ट्र के प्रमुख लोग उपस्थित हुए। उसको लेकर जेम्स कैमरीन की विज्ञान फंतासी 'अवतार' फिल्म कुछ संदेश देती है। बताया गया है कि एक अमेरिकी दल अंतरिक्ष के पेंडोरा नामक ग्रह से बहुमूल्य खनिज की चोरी करने के खातिर अनगिनत वृक्षों को नष्ट करता है। वहाँ के मूल निवासियों को जान से मार देता है। दल का एक सदस्य कहता है कि तमाम वृक्ष एक-दूसरे से जुड़े हैं और उनके बीच रहस्यमय माध्यम से संवाद कायम है। वह कहता है कि हमारे द्वारा वहाँ किए गए विनाश का प्रभाव पृथ्वी पर पड़ सकता है। फिल्म में यह भी रेखांकित किया गया है कि मनुष्य का लालच धरती को तबाह करके अंतरिक्ष तक जा पहुंचा है। फिल्म बताती है कि सेटेलाइट की अति ने अंतरिक्ष में भी प्रदूषण फैला दिया है। हम इस तथ्य को अनदेखा कर रहे हैं कि सृष्टि के सारे मनुष्य और वृक्ष एक

भीतरी अदृश्यता से जुड़े हैं और एक कण का नाश पूरे तंत्र को प्रभावित करता है।

हमारा मूल वृक्ष नीम है, पीपल है, बरगद है। 200-200 साल पुराने वृक्षों को 'भारतमाला' और 'चतुर्भुज' योजना में काट दिया गया। पेड़ों को काटकर हम उनकी जगह पौधे लगाते हैं। जितने लगाते हैं उतने पनपते नहीं हैं। शहर के लोग धूल रोकने के लिए बंगलों में अशोक वृक्ष लगाते हैं, परन्तु इससे वर्षा होने में कोई मदद नहीं मिलती। नीम और पीपल जैसे विशाल वृक्ष ही पर्यावरण की रक्षा कर सकते हैं। बकौल निदा फाजली-

''सुना है अपने गाँव में, रहा न अब वह नीम
जिसके आगे झुकते थे, सारे वैद्य हकीम''

तथाकथित विकास के नाम पर हमने कंक्रीट के जंगल बना दिये। लगातार बढ़ते तापमान के बावजूद लोग इमारतों में काँच का अधिक प्रयोग कर रहे हैं। फिर काँच को ठंडा करने के लिए एयर कंडीशनर का धुआंधार प्रयोग हो रहा है। एयर कंडीशनर से निकलने वाली गैसों से ओजोन परत में छेद बढ़ता जा रहा है। कौन सोचेगा इस पर?

एक अच्छा नीम 40 एयरकंडीशनर जितनी कूलिंग करता है। हर वृक्ष की अपनी ऊर्जा है। वृक्षों पर हमारे यहाँ बहुत काम हुआ है। हमारे तीर्थंकरों ने वृक्षों के नीचे कैवल्य प्राप्त किया। वे प्रकृति के निकट रहकर साधना करते थे और हम प्रदूषण को भयंकर रूप दे रहे हैं। शहरों में दिन में साफ आकाश दिखना मुश्किल है तो रात में तारों

भरा आकाश दिखना नामुमकिन सा हो गया है।

क्या ये विकास है?

सोचना होगा इस विकास पर।

विचार करना होगा इस विकास पर।

लॉकडाउन के दौरान देखा-सुना गया कि दिल्ली साफ हो गई। देहरादून से हिमालय दिखने लगा। नदियों का पानी साफ हो गया। पूरी दुनिया कहने लगी कि लॉकडाउन का सार्थक प्रभाव भी होता है। हमने कोरोना से शायद कोई सबक ही नहीं लिया है। वही ढर्रा बना हुआ है। शादियों में होने वाला खर्च बढ़ता ही जा रहा है। फाइव स्टार, सेवन स्टार होटल्स में शादियां हो रही हैं। एक-एक शादी में 10-20 करोड़ से लेकर 100 करोड़ रुपये तक खर्च हो रहे हैं। खाने के लिए 200-500 आइटम बन रहे हैं। उनकी बरबादी हो रही है। नालों में बहाया जाता है। फूलों की बरबादी होती है। न मालूम दुनिया के किस-किस कोने से फूल मंगवाए जाते हैं। कितना उड़ा रहे हैं? कितना बरबाद कर रहे हैं? कहाँ जा रहे हैं? दुल्हन के मेक-अप में लाखों रुपये खर्च हो रहे हैं किंतु वहीं कोई भिखारी आ जाए तो उसे भगा दिया जाता है। साधु-संत गोचरी आ जाएं तो नहीं मिलती है। कभी-कभी तो उन्हें बिना पानी लिए लौटना पड़ता है।

यह सब क्या है?

कभी सोचा इस पर!

कभी विचार किया इस पर!

करोड़पति-अरबपति लोगों के घरों में साधु-संतों को

धोवन और गरम पानी नहीं मिल पा रहा है। साधु की पहली भेंट वॉचमैन से होती है। फिर घर के कुत्ते से मिलना पड़ता है। उसके बाद ड्राइवर, फिर नौकर, फिर रसोइया। इसके बाद महाराज का पुण्य तेज हो तो सेठ-सेठानी के दर्शन होते हैं। सेठ-सेठानी भी भोजन के लिए बाहर जाने वाले हैं। आपके घर से साधु खाली लौट जाए, धिक्कार है! ऐसे पैसे को भी धिक्कार है। ऐसी सफलता किस काम की!

दो करोड़ की गाड़ी रखने वाला धोवन पानी के लिए ना कर देता है। 5 लाख की साड़ी पहनने वाली सेठानी रोटी के लिए ना कर देती है। 50 लाख का डायमंड सेट पहनने वाली चौबिहार की गोचरी को मना कर बड़े गर्व से कहती है कि हम तो शाम का खाना बाहर ही खाते हैं।

क्या ये हमारी संस्कृति है?

क्या साधु का घर से खाली जाना आपके पुण्य में वृद्धि करने वाला होगा?

एक श्रावक के बारे में पढ़ा था कि पाँच सौ साधुओं को निर्दोष गोचरी मिले इसलिए उसने अपने घर में 1500 लोगों के भोजन की नियमित व्यवस्था कर दी। आज दो साधु अलग से आ जाएं तो साथ वाले को कहते हैं- क्या रे? पहले बोला नहीं, हमारी बेइज्जती करा रहा है।

ये क्या है? क्या ये विकास है?

रात भर क्लबों में भटकते रहना, शराबनोशी करना, विदेशी भोजन करना। जोमेटो, स्विगी के स्थायी ग्राहक बने रहना क्या है?

आपको पता है कि ऑर्डर देने पर जो खाना काऊ बॉय लाता है उसके ऊपर नॉनवेज भी रख कर लाता है! क्या नानवेज का कोई कण आपके खाने में ना मिले ऐसा संभव है!

ये बात संतों को डिलवरी ब्वाय से पता चली कि ऊपर-नीचे नॉनवेज और बीच में वेज रखा जाता है। उसे तो बस डिलवरी करना है।

कितना लिखा जाए। ये सब तथाकथित विकास के परिणाम हैं। अब अपना ध्यान प्रकृति की ओर दीजिए। पृथ्वी पर उल्का पिंडों का वर्षण होता है। कई छोटे होते हैं और कई विशाल। इनके बारे में आपने पढ़ा होगा। रूस में एक पिंड गिरा था, जिसने 6 शहरों को प्रभावित किया। ये पिंड बस्ती नष्ट कर देते हैं। बड़े-बड़े गड्ढों का रूप दे देते हैं। कनाडा की एक झील इसका उदाहरण है।

इस उदाहरण के साथ अपना ध्यान शुरुआती पन्ने पर ले जाइए। वहाँ उल्लेख है कि क्या आप उस पर बैठना चाहेंगे, जिसमें ब्रेक न हो। ऐसे घोड़े की सवारी करना चाहेंगे जिसकी लगाम न हो।

कदापि नहीं करना चाहेंगे। उल्का पिंड इसीलिए बड़ा हादसा कर देते हैं क्योंकि इनमें ब्रेक की कोई संभावना ही नहीं है।

इस विश्वव्यापी संकट को देखकर गुरुदेव एक सूत्र फरमाते हैं- '**जीवन नियमन।**' यह ऐसा सूत्र है जो अपनी वैश्विकता के लिए नकारा नहीं जा सकता। इस सूत्र से दुनिया को विनाश से बचाया जा सकता है। इस सूत्र से आप शान्ति की आशा रख सकते हैं। जीवन नियमन का सूत्र कोपेहेगन में कहने जैसा है। जी-20 सम्मेलन में

रखने जैसी ताकत रखता है। यह सूत्र सम्पन्नता के मापदण्डों का पुनर्मूल्यांकन करने की क्षमता रखता है। ये हमारी धरती को बचा सकता है। जीवन नियमन का सूत्र सस्टेनेबल डेवलपमेंट से भी दो कदम आगे है। गुरुदेव फरमाते हैं कि अपने वस्त्रों, अपने खाने की चीजों, धन के पीछे दौड़ने की लालसा का नियमन करो।

ये समझदारी नहीं है कि हम अपने सुख के लिए आने वाली पीढ़ी को नरक जाने का रास्ता बनाएं। अपने सुख के लिए उनको दुखी करें। अक्टूबर 2022 में घटी एक घटना वैश्विक चिंता का सबब बनी। घटना यह थी कि एक गर्भस्थ शिशु में भी प्रदूषण के संकेत पाए गए। उसकी साँस नली में भी कुछ पाया गया।

इस घटना से डॉक्टर चकित एवं चिंतित थे। ऐसा पहली बार पाया गया। हमने सब कुछ तो खराब कर दिया। कहीं तो रुको। कभी तो रुको। रुकना जरूरी है। ब्रेक जरूरी है। ब्रेक का नाम है जीवन नियमन। कभी बैठो पेड़ के नीचे। कभी लोट लो लाल मिट्टी में। कभी पैरों को काली मिट्टी से काला होने दो। कभी घुसने दो धोरों की रेत अपने कानों में। चमकने दो उनके सुनहलेपन से अपने बालों को। कभी चूल्हे पर हाथ से बनी हुई रोटी को अपने हाथों से चूर कर, पालथी मार कर खाने का लुत्फ घर में भी उठाओ। गोबर से लीपा हुआ आँगन लुप्तप्राय हो गया है।

आपको जानकर हैरानी होगी कि गोबर परमाणु रेडिएशन से रक्षा करने में समर्थ है। नीम के 5-5 किलोमीटर तक रेडियेशन का प्रभाव नहीं पड़ता। बनो कभी नादान। करो कभी बच्चों जैसी शरारतें।

निदा फाजली कहते हैं–

दो और दो का जोड़ हमेशा चार कहां होता है ?

सोच–समझ वालों को नादानी दे मौला

फिर मूरत से बाहर आकर चारों ओर बिखर जा

फिर मंदिर को कोई मीरा दीवानी दे मौला

हम भूल चुके हैं ये सब।

याद करो, कब रोए थे! पैसे के लिए नहीं, बल्कि प्रभु की प्रार्थना करते हुए।

भक्ति करते हुए कब आँसू आए थे!

वन्दना करते हुए कब भावुक हुए थे!

कब गीत गाते हुए आँखें सजल हुई थी।

कब बैठे थे प्रभु के पास!

कब बैठे थे गुरु के पास। माँ के पास। पिता के पास। पत्नी के पास। दोस्तों के पास।

यहाँ बैठने का अर्थ है कि बिना स्वार्थ के कब बैठे थे।

कब की थी मन लगा कर सामायिक!

कब दिया था अपने हाथ से गुरु महाराज को दान!

कब बहराई थी गोचरी!

अपने हाथों से उनके पात्र भरते हुए कब आँखें भर आई थी।

इन सारे प्रश्नों के जबाव देगा– जीवन नियमन।

हरिवंश राय बच्चन ने लिखा है–

जीवन की आपाधापी में कब वक्त मिला

कुछ देर कहीं पर बैठ कभी यह सोच सकूँ,
जो किया, कहा, माना उसमें क्या बुरा भला।
जिस दिन मेरी चेतना जगी मैंने देखा
मैं खड़ा हुआ हूँ इस दुनिया के मेले में,
हर एक यहाँ पर एक भुलाने में भूला
हर एक लगा है अपनी-अपनी दे-ले में
कुछ देर रहा हक्का-बक्का, भौचक्का-सा,
आ गया कहाँ, क्या करूँ यहाँ, जाऊँ किस जा?
फिर एक तरफ से आया ही तो धक्का सा
मैंने भी बहना शुरू किया उस रेले में,
क्या बाहर की ठेला-पेली ही कुछ कम थी,
जो भीतर भी भावों का ऊहापोह मचा,
जो किया, उसी को करने की मजबूरी थी,
जो कहा, वही मन के अन्दर से उबल चला,
जीवन की आपाधापी में कब वक्त मिला
कुछ देर कहीं पर बैठ कभी यह सोच सकूँ,
जो किया, कहा, माना उसमें क्या बुरा-भला।
मेला जितना भड़कीला रंग-रंगीला था,
मानस के अन्दर उतनी ही कमज़ोरी थी,
जितना ज़्यादा संचित करने की ख़्वाहिश थी,
उतनी ही छोटी अपने कर की झोरी थी,
जितनी ही बिरमे रहने की थी अभिलाषा,

उतना ही रेले तेज़ ढकेले जाते थे,
क्रय-विक्रय तो ठण्डे दिल से हो सकता है,
यह तो भागा-भागी की छीना-छोरी थी,
अब मुझसे पूछा जाता है क्या बतलाऊँ
क्या मान अकिंचन बिखराता पथ पर आया,
वह कौन रतन अनमोल मिला ऐसा मुझको,
जिस पर अपना मन प्राण निछावर कर आया,
यह थी तकदीरी बात मुझे गुण दोष न दो
जिसको समझा था सोना, वह मिट्टी निकली,
जिसको समझा था आँसू, वह मोती निकला।
जीवन की आपाधापी में कब वक्त मिला
कुछ देर कहीं पर बैठ कभी यह सोच सकूँ,
जो किया, कहा, माना उसमें क्या बुरा-भला।
मैं कितना ही भूलूँ, भटकूँ या भरमाऊँ,
है एक कहीं मंज़िल जो मुझे बुलाती है,
कितने ही मेरे पाँव पड़े ऊँचे-नीचे,
प्रतिपल वह मेरे पास चली ही आती है,
मुझ पर विधि का आभार बहुत-सी बातों का।
पर मैं कृतज्ञ उसका इस पर सबसे ज़्यादा-
नभ ओले बरसाये, धरती शोले उगले,
अनवरत समय की चक्की चलती जाती है,
मैं जहाँ खड़ा था कल उस थल पर आज नहीं,

कल इसी जगह पर पाना मुझको मुश्किल है,
ले मापदंड जिसको परिवर्तित कर देती
केवल छूकर ही देश-काल की सीमाएँ
जग दे मुझ पर फैसला उसे जैसा भाए
लेकिन मैं तो बेरोक सफर में जीवन के
इस एक और पहलू से होकर निकल चला।
जीवन की आपाधापी में कब वक्त मिला
कुछ देर कहीं पर बैठ कभी यह सोच सकूँ,
जो किया, कहा, माना उसमें क्या भला-बुरा।

जीवन की आपाधापी में कब तक दौड़ोगे! कब तक भागोगे! कितना भागोगे! कभी तो रुको। तनाव, अनिद्रा, डिप्रेशन, ड्रग्स, शराब, स्मोकिंग आदि जीवन नियमन न होने के कारण हैं। ये अनियमन की संतानें हैं। ये अनियमन का विस्तार है। ये अनियमन के फल हैं, जो मनुष्य भोग रहा है। अब तो दवाइयां भी काम नहीं कर रही हैं। सारी सुविधाएं हैं पर नींद नहीं है। पैसा है पर चैन नहीं है। रिश्ते हैं पर समरसता नहीं है। साधन है पर साधना समाप्त हो रही है।

क्या कभी किसी साधु के पीछे नंगे पैर आपा खोकर दौड़ने की भावना आई थी!

कभी उनके आहार की भावना आई थी!

क्या कभी उनके आहार नहीं लेने पर दुख हुआ था।

घर असुस्ता होने पर चन्दनबाला की तरह आँखों से आँसू की धार बही थी!

ऐसा करना पागलपन होगा पर ये हमें भावुक बनाता है। हमें भोला बनाता है। हमें सरल बनाता है। हमें सरस बनाता है। हमें दीवाना बनाता है। हमें प्रेमिल बनाता है। सारी दुनिया की दौलत मिलने पर होने वाले सुख से भी अधिक सुखी बनाता है।

ये सच है। कभी करके देखना। कभी हँस के देखना। आदमी हँसना भूल गया। लाफिंग क्लब में हँसने की ट्रेनिंग दी जा रही है। आदमी रोना भूल गया। इस कचरे को भरो मत। इससे खाली होने की कोशिश करो। अहंकार के नकली मुखौटे को उतारकर सात्विक सही स्वरूप में आ कर तो देखो। ये संभव होगा जीवन नियमन से।

हम इतिहास देखें। अपने साधु-संतों की तपस्या देखें। खेता जी महाराज दो द्रव्य रखते थे और एक चादर ओढ़ते थे। नाना गुरु ने नौ महीने मट्ठे का ही प्रयोग किया, पानी भी नहीं।

अनेक साधु विगय त्यागी हैं। रसना त्यागी हैं। ये सब जीवन नियमन है। साधु समाज वस्त्रों की मर्यादा रखता है। पात्र भी मर्यादित रखता है। रात्रि भोजन, सचित्त, अभक्ष्य का जीवन पर्यन्त त्यागी होता है। हम उनके अनुयायी हैं। साधु चौदह नियम नहीं पाल सकते हैं, जबकि आप तो खुले हैं, मनचाहा बनवा सकते हैं। सुबह और शाम उन्हीं द्रव्यों को गर्म करके भी काम में ले सकते हैं। परन्तु जीवन नियमन का भारी अभाव देखा जाता है। उपभोक्तावाद के इस दौर में हमारी भोगेच्छा चरम अवस्था में है। इतना जूठा शायद कभी भी नहीं छूटा होगा। गुरुदर्शन करने जाने पर भी जूठा छोड़ने में गुरेज नहीं है। वहाँ भी रुकने के लिए पाँच सितारा सुविधाएं चाहिए। यदि उपलब्ध

नहीं हुई तो वहाँ भी झगड़े करने लग जाते हैं।

ये क्या है?

ये जीवन नियमन का अभाव है। हमारा जीवन कम से कम गुरुदर्शन के समय तो संयमित बने। उस समय तो हम मर्यादापूर्वक जीएं, पर हमने उसको भी पिकनिक का रूप दे दिया है।

जीवन नियमन को तीन बातों से देखा जा सकता है–

1. परिग्रह परिमाण

2. उपभोग परिभोग परिमाण

3. अनर्थ दण्ड त्याग

1. परिग्रह परिमाण

परिग्रह की मर्यादा करें। कर्मादान के व्यापारों का त्याग करें। कितना कमाएंगे? कमाने के लिए क्या-क्या करेंगे। मालूम नहीं है क्या कि 75000 करोड़ का मालिक साइरस मिस्त्री एक मिनट में चला गया! वह कितना ले गया?

2. उपभोग परिभोग परिमाण

उपभोग 26 बोल हैं। उन बोलों को आप पढ़ें। उन पर विचार करें। सारी सामग्रियाँ उसमें हैं। तौलिए से लेकर इत्र तक सब कुछ हम मर्यादित रखें। मैं इत्रादि सौन्दर्य प्रसाधन का मना नहीं करता। मेरा कहना है कि उसमें भी सात्विकता होनी चाहिए। अभक्ष्य से रहित हो। तड़क-भड़क वाली ना हो, मन को संयमित बनने में सहायता दे। इस बारे में जानने के लिए आनंद श्रावक के जीवन को जानें। जानें कि 12 लाख करोड़ के मालिक आनंद श्रावक ने 26

बोलों की कैसी मर्यादा की थी। जानने के लिए उनके बारे में पढ़ना होगा। किसी जानकार से सुनना होगा।

3. अनर्थ दण्ड त्याग

अनर्थ दण्ड त्याग की समझ सुखद है। इसका पालन हितकारी है। इसके बारे में थोड़ा सा निवेदन है कि अनर्थ दण्ड अर्थात् फिजूल के लिए दिखावा, नकलीपन, नुमाइश गलत है। जितना आवश्यक है उतना उपयोग करने की मनाही नहीं है। पर इस दौर में अपव्यय की बाढ़ आ गई है। स्वच्छता अभियान के ढकोसलों के आगे हमारी गायें मर रही हैं। सारा कचरा ले जाकर एक जगह डाल दिया जाता है, जो सड़कर बीमारियों को आमंत्रित करता है। कचरे में डाला जाने वाला खाद्य पदार्थ पहले के दौर में गायों का भोजन बनता था।

इससे बुरे दिन गायों के शायद कभी नहीं आए होंगे। समझदार लोग कुत्ते पाल रहे हैं। दूध गाय का पीते हैं और कुत्तों को मलाई खिलाते हैं। कुत्तों पर इतना खर्च करने वालों को कुत्तों का ही दूध पीना चाहिए। कत्लखानों में गायों का कत्ल करते हैं और शाकाहारी बनने का ढिंढोरा पीट रहे हैं। पुराने श्रावकों के पास गायें थीं। 80-80 हजार गायें। कामदेव और आनन्द आदि के बारे में पढ़िए। उनके जीवन के नियम के बारे में जानिए। 26 बोलों की मर्यादा के बारे में जानिए। आज के रईस से रईस इनसान से भी ज्यादा धनी थे।

इतनी सुविधा वाला जैन धर्म पाकर भी यदि हम पालन नहीं

कर पाएंगे तो हमें नरक से कौन बचा पाएगा! नरक से बचने के लिए नवकारसी करें। श्रेणिक का नरक टल जाता, अगर कर लेता तो। रात्रि भोजन त्याग, एकासन, आयंबिल सब जीवन नियमन को आचरण में लाने के तरीके हैं।

मोबाइल पर कई-कई घंटे लगाना क्या अनर्थ दण्ड नहीं है!

चौबीसों घंटे ऑनलाइन बने रहना क्या अनर्थ दण्ड नहीं है!

चालीस-चालीस हजार की टी-शर्ट पहनना क्या अनर्थ दण्ड नहीं है!

वॉट्सएप पर बेवजह एक्टिव रहना क्या अनर्थ दण्ड नहीं है!

फेसबुक पर नई-नई पोस्ट करना क्या अनर्थ दण्ड नहीं है!

सेल्फी के पीछे पागलों की तरह भागना क्या अनर्थ दण्ड नहीं है!

क्या कर रहे हो यह सब और किसके लिए कर रहे हो। दिल पर हाथ रख कर कहो, क्या ये सब केवल और केवल दिखावा नहीं है। साधु की दवाई लाने में हमको जोर आता है। उनके लिए चश्मा लाने में बगलें झाँकते हैं। उनके लिए निर्दोष दलाली करने का हमारे पास वक्त नहीं है। उनको कोई दोष ना लगे और उनका काम हो जाए इसके लिए हमारी कोई पैरवी नहीं है। बस पागलपन में गंदगी फैला रखी है। इतना ही प्रभाव और पहचान है आपकी तो आपके प्रभाव से साधु को किसी भी दुकान से कोई भी वस्तु आवश्यकता होने पर निर्दोष मिल जानी चाहिए।

होता क्या है इसे आप एक साधु की डायरी में लिखे कुछ

शब्दों से जान सकते हैं। साधु की डायरी में लिखा था, आज करीब दस किलोमीटर का विहार था। कल दस्त लगने पर कमजोरी थी लेकिन विहार तो करना पड़ा। लग रहा था कि कहीं पानी मिल जाए, कही मुँह को तर करने का कोई निर्दोष साधन मिल जाए। साथ में नगर के प्रतिष्ठित भाई थे पर नहीं मिल पाया। कई दुकानें आईं। कई घर आए। सामग्री का अवसर था पर श्रावक की दलाली की कमी से सुविधा नहीं बन पायी। आखिर जैसे-तैसे उल्टी कर-कर के यथास्थान पहुँचना ही पड़ा।

इसे पढ़ें और विचार करें...

मैं किसी की गलती नहीं बता रहा हूँ। मैं कह रहा हूँ कि इतना समय लगाकर, इतना पैसा कमाकर भी हमारी क्या पहचान है। कितनी पहुँच है। हमारे कारण हमारे उपास्य मुनियों को साता नहीं पहुंची, हमारे कारण हमारे स्वधर्मियों को साता नहीं पहुँची, हमारे कारण हमारे मित्रों को साता नहीं पहुँची...

...तो जो किया जा रहा है उस पर पुन: विचार करना चाहिए। और विचार करने के लिए जरूरी है जीवन नियमन।

चौदह नियम किसी चीज के त्याग के लिए नहीं कहता है। सिर्फ मर्यादा और नियमन की बात करता है।

सुना जाता है कि डॉ. अब्दुल कलाम के अंतिम समय में 2500 किताबें, एक घड़ी, छ: शर्ट, छ: ट्राउजर और तीन सूट मिले।

अल्बर्ट आइन्स्टाइन शेविंग करने, नहाने और कपड़े धोने के लिए एक ही साबुन का प्रयोग करते थे।

मार्क जुकरबर्ग प्राय: ग्रे कलर की टी-शर्ट पहनते हैं।

बराक ओबामा अधिकतर ब्लू या ग्रे-सूट में रहते हैं।

स्टीव जॉब्स अपने घर पर बहुत कम सामान रखते हैं।

वॉरेन बफेट अपनी सादगी के लिए प्रसिद्ध हैं।

ये उदाहरण सिर्फ इसलिए हैं कि जिन्हें जैन धर्म, जिनशासन नहीं मिला वे किसी भी कारण से ऐसा करते हैं, फिर हमें तो जिनशासन एवं गुरुदेव की शरण प्राप्त है। हमें साधु-साध्वियों के दर्शन हो रहे हैं।

जो श्वेत वस्त्रधारी हैं।

जो ब्रांडेड कपड़ों के त्यागी हैं।

जो सैलून के त्यागी हैं।

जो ब्यूटीपार्लर त्यागी हैं।

जो कार के त्यागी हैं।

जो चप्पल के त्यागी हैं।

जो स्नान के त्यागी हैं।

जो होटल के त्यागी हैं।

जो सिनेमा के त्यागी हैं।

जो सप्त कुव्यसनों के त्यागी हैं।

जो परम ब्रह्मचारी हैं।

जो अहिंसा आदि पंच महाव्रतधारी हैं।

जिनके परीषहों और उपसर्गों को देखकर मन धन्य-धन्य कह उठता है। अनुमोदना का मन होता है। आफरीन आफरीन की

पुकार उठती है। ऐसा है आपका जिनशासन और आप हैं उसके आराधक श्रावक।

तो हमें क्या करना चाहिए। हम भी बनाएं लिस्ट। मर्यादा की एक लक्ष्मण रेखा खींचें, जो हमें एक जीवन शैली में ढाल दे। नियमन से जुड़ें। अष्टमी-चतुर्दशी से शुरुआत करें। इन दो दिनों रात्रि भोजन त्याग, जमीकन्द त्याग, बाहर का खाना त्याग, द्रव्यों की मर्यादा, स्नान त्याग, ब्रह्मचर्य पालन और सामायिक-संवर करें।। इस तरह से कुछ शुरू करें जो आपको ये याद दिलाए कि आप गुरुदेव के आह्वान पर जीवन नियमन का पालन कर रहे हैं। याद रहे, कोल्हू में चलने वाला बैल और रिंग रोड पर साइकिल चलाने वाला कहीं नहीं पहुँचता है। हम भी बिना संयम और नियमन के सकाम निर्जरा करने वाले नहीं बन पाएंगे। नियमन से आपको जिस आनंद की प्राप्ति होगी वह अद्भुत और अनुपम होगी। आप भी उस आनंद को प्राप्त करें। यही प्रभु से प्रार्थना है!

***

एक-एक कर सातवां बिन्दु पूरा हुआ। इससे पहले आपने 6 बार वादा किया कुछ बातों को अपने जीवन में अपनाने का। अब सातवीं बार वादा करिए कि आगे लिखी बातों को कम-से-कम 21 दिन तक अपने जीवन में उतारेंगे।

1. कपड़ों की मर्यादा करें।
2. स्क्रीन टाइम लिमिट करें।
3. कैफीन को लिमिट करें।
4. मसाला और नमकीन की लिमिट तय करें।
5. एक घंटा नियमपूर्वक मौन रखें।
6. किसी लाइब्रेरी के मेंबर बनें।

8

सामूहिक साधना और स्वाध्याय

साधना सब मिल करें, संघ सदा जयकार
संघे शक्ति कलौ युगे की वाणी है हितकार

8

सामूहिक साधना और स्वाध्याय

जब यह बात लिखी जा रही है, उस समय पूरा भारत दीपावली मनाने में मगन है। जी हाँ, आज दीपावली है। आप सोचेंगे कि यह बात यहाँ क्यों बतायी जा रही है! इसका यहाँ पर जिक्र करना क्या उचित और जरूरी है! जरूरी है तभी ये बातें हो रही हैं। क्यों जरूरी है इसे आगे पन्ने दर पन्ने समझते जाएंगे।

इस समय खुशी का माहौल है। सभी लोग आनंदित हैं। मगन हैं। व्यस्त भी हैं। भारतीय समाज पर पश्चिम का कितना भी प्रभाव पड़ा होगा पर भारत के त्योहारों पर कुछ असर नहीं हुआ है। आज के दिन कोई गुस्सा करता है तो कहते हैं कि आज नया दिन है, गुस्सा क्यों कर रहा है। आज के दिन कोई रोए तो कहते हैं कि नया दिन है, आज रोता क्यों है। आज के दिन कोई लड़े तो कहते हैं कि नया दिन है, लड़ता क्यों है। आज के दिन को नया दिन माना गया है। आज के दिन को खुशी का दिन मानते हैं। आज के दिन को आनंद का दिन माना गया है। आज के दिन को महोत्सव का दिन माना गया है। यह दिन सामूहिक उत्सव का दिन है। हर व्यक्ति नए कपड़े पहनता है। हर कोई मिठाई खाता है। घर सजाते हैं। रंगोली बनाते हैं। दीपक जलाते हैं। पूजा करते हैं। आज के दिन खुशी का माहौल देखा

जाता है। यह खुशी सामूहिक है। इसका आनंद सभी सामूहिकता से लेते हैं। उस सामूहिकता का प्रभाव देखने को मिलता है।

गम और खुशी संक्रामक हैं। आँसू और हँसी संक्रामक हैं। आप हँसते हुए लोगों को देखकर हँसी नहीं रोक पाएंगे और गमगीन मंजर को देखकर आँसू पोछने लगेंगे। ऐसा इसीलिए क्योंकि ये संक्रामक हैं। संक्रमण हमारे मन को संक्रमित करता है। हमारी माताएं सीरियल देखते हुए नायिका के रोने पर रोने लगती हैं। उनके हँसने पर हँसती हैं।

संक्रामकता का प्रयोग हिटलर अपने भाषणों में करता था। बड़ी संख्या में बैठे लोगों के बीच वह अपने दस लोगों को बैठा देता। वे दस लोग तालियां बजाते तो सारी भीड़ ताली बजाने लगती। वे दस लोग सीटी बजाते तो सभी लोग सीटी बजाने लगते। वे दस लोग विरोध करते तो सारी भीड़ विरोध करने लगती।

संक्रमण के मनोवैज्ञानिक बिन्दु को हिटलर के प्रचारकों ने समझा और उसका प्रयोग किया। समाज से आप सीखते हैं। आपके चारों तरफ रहने वाले लोग आपको बहुत से ऐसे कार्य करने के लिए प्रेरित करते हैं, जिन्हें आपने किसी से सीखा नहीं हैं। जैसे जो भाषा आप बोलते हैं, जो न्यूज पेपर आप पढ़ते हैं, जो खाना आप खाते हैं, जो कपड़े आप पहनते हैं, जो पढ़ाई आप करते हैं, उस पर लोगों का प्रभाव होता है। ऐसे बहुत से विषयों पर कहीं न कहीं लोगों का प्रभाव देखने को मिलता है।

आपने हिन्दी कहीं सीखी नहीं। महाराष्ट्र में रहने वालों ने

मराठी कहीं सीखी नहीं। कर्नाटक में रहने वाले पारसमल दक के पोते को किसने कन्नड़ सिखाया! चेन्नई में रहने वाले सिद्धार्थ लोढ़ा ने कहाँ से तमिल सीखी! कहीं भी नहीं ना! मारवाड़ में रहने वाले को मारवाड़ी, मालवा में रहने वाले को मालवी, मेवाड़ में रहने वाले को मेवाड़ी सिखाना नहीं पड़ता। वह सीख जाता है। और तो और वह लोग अंग्रेजी भी मारवाड़ी में बोलते हैं। एक केंद्रीय मंत्री गुरुदेव के दर्शन करने आए थे। उनका लहजा पूरी तरह मारवाड़ी था। तमिल वाला हिन्दी तमिल में बोलता है। ये लोगों का प्रभाव है। ये सामूहिकता का प्रभाव है। इससे आप मुकर नहीं सकते।

पंजाब व दिल्ली में रहने वाला छोला-भठूरा, राजमा खाता है। तमिलनाडु में रहने वाला इडली-चटनी खाता है। संक्षेप में आपकी सारी चीजें लोगों से, समाज से प्रभावित हैं। वर्तमान दौर तो विज्ञापन का दौर है। पहले डिमांड और सप्लाई का रोल था, अब एडवर्टाइज और सप्लाई का रोल है। उपभोक्तावाद के दौर में आप वही हो जो भीड़ है। आप उसके अनुसार ही करेंगे। चाहकर भी अपने आपको रोक नहीं पाएंगे। संवत्सरी के दिन आदमी अनचाहे उपवास और प्रतिक्रमण कर लेता है। ये प्रभाव है आपके सरकम्स का। आपके चारों और जो माहौल है, आप वैसे होते हैं। 2014 के आम चुनाव में मीडिया का प्रयोग खुलकर किया गया। आप जानते हैं कि परिणाम क्या हुआ। राजनेता बड़े स्मार्ट हैं। वे जानते हैं कि कौन-सी बातें फैलानी चाहिए। पेट्रोल की कीमत 105 रुपये हो गई, कोई नहीं बोलता। सभी हिन्दू-मुस्लिम में व्यस्त हैं। ये प्रभाव है मीडिया की

सामूहिक चेतना का।

मेलबर्न में विराट कोहली की बैटिंग देख कर कौन नहीं उछला होगा। टी-20 और वह भी पाकिस्तान के खिलाफ हुआ मैच अश्विन के चौके और विराट की समझदारी से जीतने पर सभी उछल पड़े। पूरा मुल्क उछल पड़ा। वहीं पाकिस्तान में लोग दु:खी हुए। हमारा सुख और दु:ख आम तौर पर भीड़ पर आधारित है। हमको भीड़ प्रभावित करती है। संगीत चल रहा हो तो कौन नहीं थिरकेगा! किस की गर्दन नहीं हिलेगी! कौन अपने आपको रोक पाएगा! रोक पाएगा तो बस पागल या योगी। हमारे यहाँ सामुदायिक कर्मों की बात कही गई है।

प्रश्न होगा कि सामुदायिक कर्म क्या है?

आपने सुना होगा कि भूकंप आने से 10 हजार लोग मर गये। बाढ़ से 5 हजार लोग मर गये। प्राकृतिक आपदा, रेल हादसा, विमान दुर्घटना में एक साथ ही कई लोगों के मरने का समाचार सुना होगा। एक साथ उनके प्राण क्यों निकले? एक साथ ही उनके चीथड़े क्यों उड़े? यह सवाल है तो इसका जवाब भी है।

एक उदाहरण से इसका जवाब आसानी से पा सकते हैं। 'बाहुबली' फिल्म रिलीज हुई। पूरे भारत में 4000 स्क्रीन पर इसका प्रदर्शन हुआ। प्राय: एक ही समय में हुआ। अगर 4000 स्क्रीन पर 1 लाख लोगों ने भी एक साथ देखा तो उन 1 लाख लोगों के भाव कैसे होंगे? उनके परिणाम कैसे होंगे? उनकी लेश्या कैसी होगी? वे 1 लाख लोग एक साथ एक जैसे दृश्यों को देखते हुए जिन भावों,

परिणामों और लेश्याओं में होंगे उनमें उनका लगभग एक जैसा कर्मों का बंधन होगा। पूरे विश्व के लोग यदि फुटबाल मैच देख रहे हैं तो सबके भाव प्राय: एक जैसे होंगे। तब कर्म बन्धन भी प्राय: एक जैसा होगा। इसी का परिणाम है भूकंप। इसी का परिणाम है आगजनी। इसी का परिणाम है भयंकर आपदा।

एक छोटे से वायरस ने 7 अरब लोगों को घर पर बैठा दिया। सामुदायिक रूप से उपार्जित कर्म सामुदायिक रूप से उदय में आते हैं और भोगने पड़ते हैं। हम सामूहिक चेतना वाले लोग हैं। जिनकल्पी समूह से प्रभावित नहीं होते। प्रत्येक बुद्धि पर इफेक्ट नहीं होता। तीर्थंकर भगवान का अपना औरा होता है। वह और दूसरों को प्रभावित कर लेता है पर खुद प्रभावित नहीं होता, लेकिन आम आदमी सामूहिक चेतना वाला है।

शालिभद्र की 32 औरतें थी। सबने पुण्य भोग किया। उन सभी ने साथ में ही पुण्य बाँधा था। उन 32 ने संगम द्वारा दिये गए दान की अनुमोदना की। उसमें सहयोग दिया। उस अनुमोदना का उत्कृष्ट व अचिंत्य प्रभाव सबको मिला। ऋषभदेव भगवान, बाहुबली, भरत, ब्राह्मी सुन्दरी के पूर्व भव साथ थे। ऐसे अनेक उदाहरण हैं। मल्लीनाथ भगवान के पूर्व भव के मित्र राजा इस भव में गणधर बने। गणधर गौतम वासुदेव के भव में महावीर प्रभु के सारथी थे। मरीचि के भव में उनके शिष्य थे।

पुण्य कर्म बंध सामूहिक किया है तो सामूहिक भोगना पड़ेगा। इसे ऋणानुबन्ध भी कहा गया है। आप समझ रहें होंगे जो

गुरुदेव समझाना चाह रहे हैं। गुरुदेव फरमा रहे हैं सामूहिक साधना और स्वाध्याय के बारे में। हम इतने भयंकर पाप कर्मों को सामूहिक रूप से बाँध रहे हैं तो इसे हटाने का सामूहिक रूप से क्या प्रयोग किया?

प्रसिद्ध उद्योगपति विनोद अडानी अपने गुरु जम्बू विजय जी से पूछता है कि इतना व्यापार करता हूँ, उसमें इतनी हिंसा होती है क्या करना चाहिए?

मुनि जी ने कहा कि इतना पुण्य करना कि बैलेंस हो जाए।

हम सामूहिक रूप से धर्म आराधना करते हैं या नहीं?

हमारी उपस्थिति समता शाखा में कितनी होती है?

हमारी उपस्थिति प्रार्थना में कितनी होती है?

हमारी उपस्थिति प्रवचन में कितनी होती है?

सामूहिक रूप से किये गये कीर्तन का इतना सकारात्मक प्रभाव हमारे पर हो सकता है जिसकी हम कल्पना नहीं कर सकते हैं। इसके लिए अंग्रेजी में एक शब्द है कम्यूलेटिव इफेक्ट। इसका अनुवाद होगा सामूहिकता का प्रभाव।

सामूहिक रूप से की गई साधना प्रभावशाली हो सकती है।

सामूहिक रूप से किया गया जाप असरकारी हो सकता है।

सामूहिक रूप से किया गया ध्यान अधिक फलप्रद हो सकता है।

सामूहिक रूप से किया गया कीर्तन ज्यादा प्रभावी हो सकता है।

सामूहिक रूप से किया गया स्वाध्याय असरदार हो सकता है।

सामूहिक रूप से किया गया भक्तामर, पुच्छिंसुणं, लोगस्स, उवसग्गहर महान् प्रभावशाली हो सकता है।

भद्रबाहु स्वामी के समय ऐसा देखा गया कि सकल संघ जब एक साथ साधना करता है तो देव उपस्थित हो जाता है। ये सामूहिकता का प्रभाव है। 2 लोग करें तो इसका प्रभाव दुगुना, 200 लोग करें तो दो सौ गुना, 2 हजार लोग करें तो दो हजार गुना हो जाएगा। इसी तरह जितने लोग बढ़ते रहेंगे प्रभाव उतना ही बढ़ता जाएगा। जनवरी 2023 के प्रारम्भ में इसका प्रभाव तब देखा गया जब पूरा जैन समाज 'सम्मेद शिखर' मामले पर एक साथ उठ खड़ा हुआ। समूह के एक साथ प्रदर्शन करने का नतीजा हुआ कि हुक्मरानों को झुकना पड़ा। सामूहिकता का प्रभाव प्राय: सब पर पड़ेगा। वह पूरा समूह आपको हेल्प करेगा। आपको ट्रीट करेगा। आपको प्रभावित किए बिना नहीं रहेगा। इसके इफेक्ट देखे गये हैं। 1947 के दंगों में जब पाकिस्तान में जैन समाज के लोग फँसे तब उन्होंने एक साथ उपाश्रय में बैठकर नवकार का जाप किया। ऐसा करने पर उन्मादी भीड वहाँ आ ही नहीं पाई। बाद में पता चला कि उन्मादियों को वह मोहल्ला दिख ही नहीं रहा था, जहाँ जैन समाज के लोग थे। खुद उन्मादी यह कहते सुने गए कि हम 'भावड़ा' मोहल्ला के सामने से निकलते हैं तो वह हमको दिखता ही नहीं है या चारों तरफ से लपटों से घिरा दिखता है।

इसको किसी वैज्ञानिक की सील नहीं चाहिए पर ये इफेक्ट है, जो फील किया गया है। लोगों ने इसे महसूस किया है। इसके प्रमाण उनको मिले हैं। क्यों इन्द्र, भगवान के समवसरण की रचना करता है? क्यों भगवान बहुत बड़ी परिषद में देशना देते हैं? क्यों वर्षी दान का कार्यक्रम संपादित करते हैं? क्यों इन्द्र जन्म महोत्सव मनाता है? क्यों भगवान के पिता दीक्षा महोत्सव मनाते हैं? क्यों देवों द्वारा कैवल्य महोत्सव सेलिब्रेट किया जाता है?

उस महोत्सव को देखकर अनेक जीव सम्यक् दृष्टि बनते हैं। कई परित्त होते हैं। कई संसारी के मन में श्रावकत्व की भावना आती है। कई के मन में साधुता की भावना आती है। कई साधु श्रेणी चढ़ जाते हैं। कई कैवल्य लक्ष्मी को प्राप्त हो जाते हैं। एक साथ बहुत बड़े समूह को एक ही क्रिया में दत्तावधान देखने का यह प्रभाव है।

आप कल्पना करो कि गणधर गौतम स्वामी ने 4400 पुरुषों के साथ दीक्षा ली। भरत चक्री ने 10 हजार लोगों के साथ दीक्षा ली। ऋषभ देव स्वामी ने 4000 लोगों के साथ दीक्षा ली। जम्बू स्वामी 527 लोगों के साथ संयम अंगीकार करते हैं।

वैसे ही जब किसी दीक्षा प्रसंग पर दीक्षार्थी का जुलूस निकलता है, दीक्षार्थी का अभिनंदन होता है, राखी, मेहंदी, ओछा रसम, पाट बिठाई, कुमकुम, मुंह-जूठा, वीर थाल के साथ रंग-बिरंगे वस्त्रों में देवी सी सजी बहना मुंडन के बाद वस्त्र परिवर्तन कर जब श्वेत परिधान में निकलती है तब कौन-अपनी शुक्ल लेश्या को रोक सकता है?

कौन अपने हृदय को थाम सकता है?

कौन अपने को कठोर रख सकता है?

एक क्षण पूर्व रंग-बिरंगे राजसी वस्त्र और हीरा-पन्ना, माणक-मोती, नीलम, पुखराज, सोना-चाँदी से लदी, सजी बहना मुंडित सिर, रजोहरण, शीश पर केसरिया स्वस्तिक बनवाकर जब खड़ी होती है तो दृश्य कितना स्वर्गिक होता है। कितना सात्विक होता है।

सोचो! उसे देखने वाले हजारों लोग कैसे कर्मों का बन्धन करते होंगे। सोचो क्या माहौल होगा! क्या दृश्य होगा! क्या फिजा होगी!

भगवान जानते थे कि आरंभ-समारंभ होगा पर भगवान ने निषेध नहीं किया। भगवान सामूहिक साधना के महत्त्व को समझते थे। इन सबके पीछे एक ही कारण समझ में आता है समूह चेतना का अचिंत्य प्रभाव। इसीलिए भगवान ने मना नहीं किया। जब इतने सारे लोग किसी एक महोत्सव में शरीक होते हैं तो वे सभी सामूहिकता के प्रभाव से स्वयं को अछूता नहीं रख पाते। वे उससे भावित होते ही हैं। इसीलिए सर्वज्ञ भगवान महोत्सव में होने वाली हिंसा के बावजूद उसमें भाग लेने के लिए निषेध नहीं करते हैं।

कल्पना करें कि 10 हजार लोगों के बीच आप बैठे हैं और वे सभी नवकार महामंत्र का तार स्वर में जाप कर रहे हैं तो क्या आप अपने को उस ध्वनि अथवा जाप से अलग कर पाएंगे? कदापि नहीं कर पाएंगे। आप महामंत्र में मगन हुए बिना नहीं रहेंगे। इसका कारण

सिर्फ और सिर्फ सामूहिकता ही है। इसलिए सभी लोग अपने-अपने स्तर पर प्रयास कर समूह के साथ जुड़ने का प्रयत्न करें और अपने गाँव-शहर में प्रेरित कर उन्हें सातविकता से जोड़ें। धर्म-ध्यान, जाप, योग आदि उपक्रमों द्वारा उनका मार्गदर्शन करें।

आप सोच सकते हैं कि मेरे अकेले करने से क्या होगा? यदि ऐसा सोचते हैं तो जरा इतिहास पर नजर डालिए। आर एस एस की स्थापना पाँच लोगों ने ही की थी। बी जे एस (भारतीय जैन संघटना) 3 लोगों ने शुरू किया था। 'जीतो' (JITO) की कल्पना एक ही व्यक्ति की है। पतंजलि योग पीठ दो लोगों का कमाल है। भारतीय योग संस्थान और 'इस्कॉन' एक ही व्यक्ति की देन है। ऐसे अनेक संगठन हैं जो एक-दो व्यक्तियों की पहल से शुरू होकर विश्वव्यापी हो गए।

निश्चय नय से विचार करेंगे तो उपादान तो आपका ही होता है परन्तु निमित्त किसी भी क्षण निर्मित हो सकता है। कोई भी प्रसंग बन सकता है। जब इतने सारे जीव एक साथ मोक्ष जा सकते हैं तो...

आप आगमों को पढ़ेंगे तो पता चलेगा कि असंख्य जीव एक साथ देवलोक में भी जा सकते हैं। एक ही समय में संख्यात मनुष्य देवलोक के एक ही विमान में उत्पन्न हो सकते हैं। जैन दर्शन में त्रायस्त्रिंशत का वर्णन है। वे देव वह होते हैं जो पूर्वभव में एक साथ साधना करते हैं और एक साथ आराधना करके अगले भव में एक साथ एक ही देवलोक में पैदा होते हैं। भगवती शास्त्र में आया है कि

वे 10 हजार जीव एक साथ मछली के पेट में उत्पन्न हुए, जो एक साथ एक ही जैसे भावों में युद्ध कर रहे थे। बाकी 1 करोड़ 77 लाख 90 हजार जीव एक साथ नरक में पैदा हुए।

कम्यूलेटिव इफेक्ट का प्रभाव हम साधना में ले सकते हैं। जब कभी मौका होवे हम एक साथ सामूहिक रूप से कीर्तन, जाप, स्वाध्याय आदि धार्मिक अनुष्ठान से जुड़ें। वैदिक लोग यज्ञ करवाते हैं। सनातनी सुंदर काण्ड का पाठ करवाते हैं। अन्य अनेक कथाएं चलती हैं। हम भी अपने घर में सामूहिक जाप करवा सकते हैं। कई लोग गृह प्रवेश आदि प्रसंगों पर जाप आदि का उपक्रम भी करते देखे जाते हैं। जाप हमें सकारात्मक ऊर्जा से भर सकता है। हमारी लेश्या को पवित्र बनाने में मदद कर सकता है। हमारे मन में चलने वाले अशुभ कर्म बंधन की शृंखला को तोड़ सकता है।

एकाकी साधना का भी महत्व है परन्तु सामूहिक साधना का महत्व आम आदमी के लिए कई गुना ज्यादा है। हो सके तो सामूहिक अशुभ कर्मों को बाँधने से बचें। 10 हजार लोग एक साथ कोई खेल रहे हैं, कोई उत्सव मना रहे हैं और उनका मन वासना से भरा है तो कैसे कर्मों का बन्धन होगा? हम सकारात्मक सामूहिकता का हिस्सा बनने का प्रयास करें।

एक आदमी किसी भारी शिला को उठाने का प्रयास करता है। नहीं उठने पर एक-दो लोगों से सहयोग लेता है। एक-दो के सहयोग से भी शिला नहीं उठती तो और ज्यादा लोग जब एक साथ दम लगाकर हइशा कहते हुए उठाते हैं तो शिला उठ जाती है। ये

सामूहिकता है। ये कम्यूलेटिव इफेक्ट है। वैसे ही जब बहुत सारे लोग सामूहिक चेतना के साथ कीर्तन करेंगे तो उसका प्रभाव हमको परिवर्तित किए बिना नहीं रहेगा। इसलिए संघ का निर्माण हुआ। तीर्थ की स्थापना हुई। उसकी संरचना हुई। '**संघणगर! भद्दं ते**' कहा गया।

ये क्यों कहा गया? सभी जिनकल्पी क्यों नहीं हुए? सभी एकल विहारी क्यों नहीं बने?

भगवान जानते थे संघ की ताकत। भगवान को पता थी सामूहिक शक्ति। भगवान अपने ज्ञान में 'एक सूत्र कोई भी तोड़े, रस्सी हस्ती को बाँधे' का फल जानते थे। उन्होंने प्रेरणा की और लुप्त हो चुके तीर्थ को पुनर्स्थापित किया। वे तीर्थंकर कहलाए। ऐसे तीर्थंकर भगवान को अनंतश: प्रणाम।

जैसे नगर में रहने वाला निर्भय है, वैसे ही संघ में रहने वाला निर्भय है।

जैसे चक्र का स्वामी अपराजेय है, वैसे ही संघ में रहने वाला अपराजेय है।

जैसे रथ पर बैठकर यात्रा करने वाले को कभी थकान नहीं आती, वैसे ही संघ रथ की सवारी करने वाला थकता नहीं है।

जैसे पद्म के सान्निध्य में आनंद आता है, वैसे ही संघ पद्म के सानिध्य में आनंद आता है।

जैसे चन्द्रमा शीतलता प्रदान करता है, वैसे ही संघ शीतलता प्रदान करता है।

जैसे रवि प्रकाश प्रदान करता है, वैसे ही संघ रूप रवि

अज्ञान रूपी अंधकार का नाश करके ज्ञान रूपी प्रकाश प्रदान करता है।

जैसे सागर अनेकानेक रत्नों का आकर है, वैसे ही संघ रूप समुद्र ज्ञान, दर्शन, चारित्र, तप रूप अनेक रत्नों का आकर है।

जैसे मेरु सर्वश्रेष्ठ है, अतुल्य है, अनुपम है, वैसे ही संघ सर्वश्रेष्ठ, अतुल्य और अनुपम है।

सूत्रनंदी में संघ गौरव की महिमा गाई गई है। सामूहिकता की महिमा गाई गई है। हम संघ भावना को बढ़ाते हुए अपने आप को सामूहिक स्वाध्याय एवं साधना से जोड़ने का प्रयास करें। गुरुदेव सामूहिक स्वाध्याय में उपासकदशा की सर्वप्रथम प्रेरणा देते हैं। महत्तम महोत्सव के अन्तर्गत अनेक आगमों को पढ़ने का आह्वान भी है। ऐसे कितने ही आयाम दे कर गुरुदेव निरंतर कृपा करते हैं। परिवारांजलि आदि से जुडकर हम एक साथ एक जैसे शुभ कर्मों का उपार्जन करके अपने कर्मों को हलका कर सकते हैं।

***

'सामूहिक साधना और स्वाध्याय' नामक आठवां बिन्दु भी आप पढ़ चुके। एक बार फिर अवसर है थोड़ी देर रुकने का, सोचने का और अपने आप से वादा करने का। वादा कुछ नया नहीं करना है। वही पुराना वादा 21 दिन तक कुछ बातें अपनाने का। इस बार 21 दिन तक यह करें–

1. घर में 5 मिनट सामूहिक जाप करें।
2. सात दिन में एक बार बच्चों के साथ संस्कार बैठक हो।
3. पत्नी से सात दिन में एक बार मन की बात करें।
4. महीने में एक बार पत्नी/दोस्तों के साथ सेल्फ डेवलपमेंट की बात करें।
5. टीम वर्क करने की प्लानिंग करें।
6. संघ के साथ मिलकर चलें। अपना राग नहीं अलापें।
7. सधर्मी सहयोग करें। उनके हाल–चाल जानें।
8. किसी के दुर्गुण को फैलाना नहीं, प्रचारित नहीं करना।
9. यह भाव रखना कि सब मेरे हैं।

9

तत्त्वानुप्रेक्षा
आत्मचिंतन

पाप घटे और पुण्य बढ़े, सुख की बहे बयार
तत्त्व का चिंतन करो भव भ्रमण से पार

9

तत्त्वानुप्रेक्षा : आत्मचिंतन

सी ए बनकर ऑडिट करना सरल है।

एडवोकेट बनकर केस के प्वांइट पकड़ना सरल है।

सोना-चाँदी परखना सरल है। हीरे की जाँच करना भी कदाचित सरल है।

किताबों और शास्त्रों का संशोधन करना भी सरल है।

फिल्म एडिट करना सरल है।

गाना कम्पोज करना सरल है। उसे ट्यून में लाना सरल है।

समंदर को पार करना सरल है। सैकड़ों फीट की ऊँचाई से पैराशूट के सहारे जम्प करना सरल है।

आत्मचिंतन करना सरल है।

बड़े-बड़े ग्रंथ पढ़ना जरूरी है।

प्रवचन देना भी जरूरी है।

तपस्या करना भी जरूरी है।

ईर्या समिति का पालन जरूरी है।

भाषा विवेक जरूरी है।

भोजन विवेक जरूरी है।

उपकरण विवेक, महाव्रत पालन जरूरी है।

श्रावक व्रत आराधना भी जरूरी है।

लगे हुए व्रत की आलोचना करना जरूरी है।

पर

इन सारी बातों से ज्यादा जरूरी है आत्मावलोकन।

प्रार्थना जरूरी है।

प्रवचन जरूरी है।

शाखा जरूरी है।

सामायिक जरूरी है।

प्रतिक्रमण जरूरी है।

स्वाध्याय जरूरी है।

थोकड़ा पढ़ना जरूरी है।

स्वाध्याय करना भी जरूरी है।

थोकड़ा कंठस्थ करना भी जरूरी है।

मौन रखना भी जरूरी है। ध्यान करना भी जरूरी है।

लोगों से बात करना भी जरूरी है।

परन्तु

इन सबसे ज्यादा जरूरी है आत्मनिरीक्षण।

कहा भी गया है–

आत्मचिंतन अभाव में सब कुछ होता व्यर्थ

चाहे जो भी कर चुके नहीं है उसका अर्थ

आत्मावलोकन, आत्मचिंतन, आत्मनिरीक्षण महत्त्वपूर्ण बिन्दु हैं। पूरे जीवन का निष्कर्ष और निष्यंद है। इससे पूर्व एक शब्द

है– तत्त्वानुप्रेक्षा। व्यक्ति शोध करता है।

उसने भूगोल की खोज की।

खगोल में खोज की।

केमिकल की खोज की।

पदार्थों की खोज की।

अनेक नये–नये आविष्कार किए।

कई फार्मूले प्राप्त किए।

इन सब खोज से मानव का जीवन सरल बना। उसकी समस्याएं घटी। उसकी कठिनाइयाँ कम पड़ीं। इन सबको खोजने पर भी कुछ खोजना बाकी रह गया, जिसके बारे में अलबर्ट आइंस्टीन कहते हैं कि मुझे यदि अगला जन्म इनसान का मिले तो मैं इन सबको खोजने वाले की खोज करना चाहता हूँ।

कितनी बड़ी बात है यह! पिछली सदी का महानतम वैज्ञानिक एक आध्यात्मिक सूत्र देता है कि मैं उस खोज करने वाले की खोज चाहता हूँ। जिसने घंटों लेबोरेटरी में बिताए थे, घंटों मैथ के थीरम साल्व किये थे, घंटों एक्सपेरिमेंट किये थे। जिसका जीवन पदार्थ की खोज में गया। वस्तुओं की खोज में गया। वह महान कहलाने वाला कहता है कि मैं उसकी खोज करना चाहता हूँ जिसने पर पदार्थ की अनुप्रेक्षा की, पर पुद्गल की अनुप्रेक्षा की, पर रसायनों की अनुप्रेक्षा की।

लोग कहते हैं कि दुनिया के प्राप्त इतिहास में उस आदमी ने मस्तिष्क का सर्वाधिक उपयोग किया। सबसे तीव्र IQ Level वाला

वह आदमी कहता है कि मैं आत्मा की अनुप्रेक्षा करना चाहता हूँ। उसकी तरफ ही इंगित करते हुए गुरुदेव कह रहे हैं तत्त्वानुप्रेक्षा। तत्त्व = सार, तत्त्व = निष्यंद, तत्त्व = मूलभूत तत्त्व। जैसे इत्र की एक बूँद में सैकड़ों फूलों का सार है, जैसे घी की एक बूँद में दूध का सार है, वैसे ही जो सारभूत है वह तत्व है। इसकी बहुत चर्चा है। उपनिषद् इसकी चर्चा करते हैं। गीता में इसके बारे में कहा गया है। वेद में कहा गया है। याज्ञवलक्य, गार्गी की चर्चा रोचक है। वे सार की तरफ इंगित करते हैं। भगवान फरमाते हैं कि तत्त्व के जानकार बनो। प्रश्न है कि तत्त्व क्या है? तत्त्व है- 'जिणपण्णत्तं तत्तं' जिन प्रज्ञप्त तत्त्व ही ऐसा सारभूत पदार्थ है जिसको जानकर सम्पूर्ण ज्ञान हो जाए। जिसके बोध से सर्व बोध हो जाए। इसके लिए आचारांग में कहा गया है- **जे एगं जाणइ से सव्वं जाणइ** अर्थात् जो एक को जान लेता है वह सर्व को जान लेता है। जिसको जानने के बाद कुछ भी जानना शेष नहीं। जिसके बोध के बाद कुछ बोध अवशिष्ट नहीं। ऐसा ज्ञान जिसे पाने के बाद कुछ भी पाने की आवश्यकता नहीं है, उस तत्त्व की अनुप्रेक्षा करना।

मूल रूप में तत्त्व 9 कहे गए हैं। पदार्थ 9 बताए गए हैं। उनकी व्याख्या में चौदह पूर्व है। उनकी व्याख्या में 32 शास्त्र है। उनकी व्याख्या में द्वादशांगी है। उसकी व्याख्या है वह सब कुछ जो हम पढ़ते-लिखते हैं। जो पढ़ाते हैं। संक्षेप में 9 तत्त्वों पर हम एक नजर डालते हैं-

1. **जीव**- जो जीता है, जो कर्ता है, जो भोक्ता है, मोक्ष

जाता है, जो चतुर्गति रूप संसार में परिभ्रमण करता है।

2. **अजीव**– जो चेतना रहित है, जो जड़ है। कई सारे ऐसे अजीव पदार्थ हैं जीव जिनका भोग करता है। जिनके सहारे अपना काम चलाता है।

3. **पुण्य**– पुनाति इति पुण्यं। आत्मा को पवित्र करने वाला। हलका करने वाला। उसे करना कठिन, भोगना सरल है।

4. **पाप**– पातयति इति पापं। आत्मा को गिराने वाला। भारी बनाने वाला। इसे करना सरल और आनंददायी है पर उसका भोग भयानक। यह रुलाने और दुखी करने वाला है।

5. **आस्रव**– कर्मों का आगमन। ये मुख्य रूप से बीस प्रकार के कहे गए हैं। जिन माध्यमों से जीव में कर्मों का आगमन होता है।

6. **संवर**– ये जैन धर्म का अपना अलहदा है। ऐसा अन्य किसी भी दर्शन में नहीं है। संवर मतलब कर्मों को रोकना। जो कर्म आत्मा में आ रहे हैं उन पर रोक लगाना।

7. **निर्जरा**– कर्मों का आत्मा से आंशिक पृथक्करण। थोड़ा–सा अलग हटना। अलग होना।

8. **बंध**– जो कर्म जीव में आ रहे हैं उनका जीव से जुड़ जाना। चिपक जाना। एक कालावधि के लिए।

9. **मोक्ष**– आत्मा को सभी कर्मों से सदा–सदा के लिए हटा देना। अलग कर लेना।

ये संक्षेप में हमने समझा। ये सब कुछ निर्भर है जीव पर। जीव है तो बंध है। जीव है तो निर्जरा है। जीव है तो आस्रव है। जीव

है तो संवर है। इन सारे तत्त्वों का ज्ञान जीव करता है। इन सारे तत्वों से प्रेरणा जीव लेता है। सुख का वेदन जीव करता है। दु:ख का वेदन जीव करता है। नरक में जीव जाता है। देव जीव बनता है। तिर्यंच में जीव भटकता है। मनुष्य भी जीव है। सारी गति, जाति, योनि, स्थान जीव से ही संबद्ध हैं। इसलिए सर्व सारभूत पदार्थ तत्त्व जीव है, हमें ऐसा समझना चाहिए। इस जीव के चिंतन को आत्मचिंतन कहते हैं।

गुरुदेव फरमा रहे हैं कि पाप घटाना और पुण्य बढ़ाना। प्रथम तो पुण्य और पाप भी जीव पर ही निर्भर है। पहले तो पाप को पाप समझना बहुत जरूरी है। पाप को पाप समझने की जागृति दुर्लभ है। अति कठिन है। व्यक्ति पाप समझता ही नहीं। 90 फीसदी लोगों को पाप का अर्थ शायद ही पता हो। यदि पता है तो अधूरा-अधूरा। आंशिक। उथला-उथला। पाप को पाप समझने की समझ होगी तो व्यक्ति उससे बचने की कोशिश करेगा। पाप 18 कहे गए हैं। झूठ भी पाप है। चौर्य कर्म पाप है। अब्रह्म पाप है। परिग्रह पाप है। चुगली पाप है। क्रोध पाप है। अहंकार पाप है। माया, छल, कपट पाप है। देखिए ना कितने लोग इनमें पाप मानते हैं?

अभी हम हिंसा पर बात करते हैं। हिसा जीवों की होती है और अनेक दार्शनिक जीव के बारे में ही स्पष्ट नहीं। वे पृथ्वी, पानी, अग्नि, वायु में जीव ही नहीं मानते। लोगों की ऐसी सोच है कि मुर्गा जीव नहीं है। ऐसे लोगों का मानना है कि ये तो हमारे खाने के लिए है। इसे तो भगवान ने हमारे लिए बनाया है। एक ऐसा भी दर्शन है जो स्त्री को भी जीव नहीं मानता। वह कहता है वह तो पसली है। आदम

बोर हुआ तो पसली निकाल कर प्राण फूंक दिये। इसमें जीव कहाँ! इसकी अस्मिता कहाँ! इसका अस्तित्व कहाँ! जो दर्शन जीव के बारे में भी स्पष्ट नहीं है, उसकी हिंसा के बारे में उसका क्या विचार होगा। कोई विचार नहीं होगा तभी तो इतने बड़े-बड़े नरसंहार हुए। एक फोटो देखने में आया, जिसमें जूतों के ढेर के नीचे लिखा था द्वितीय विश्व युद्ध में गैस चैम्बर में मारे गये लोगों के जूते।

जिनमें बोध ही नहीं है, वे हिंसा से क्यों डरेंगे! वे हिंसा से क्यों बचेंगे! दूसरे को भी मेरे समान तकलीफ होती है, यह विचार ही उनके भीतर नहीं है तभी वे भक्ष्य-अभक्ष्य का भी विचार नहीं करते हैं। वे अपने हाथों से कत्ल करके खा लेते हैं। उनमें कोई वेदना नहीं होती। किसी दुःख का एहसास नहीं होता। वे यह नहीं सोचते कि मैंने सिर्फ अपना पेट भरने के लिए इतने जीवों को मार दिया। वे कहते हैं कि सिर्फ मुझमें ही जीव है। मुझमें ही चेतना है। मुझमें ही संवदेना है। मैं ही इन सबका भोग करने वाला हूँ। इसी विचारधारा के कारण विश्व में इतना भयंकर पाप है। इतनी भयंकर हिंसा है। युवा पूछता है कि क्या सारा पाप हमको ही लगेगा, उनको नहीं! यह पूछने वालों से मेरा कहना है कि वे जानते ही नहीं हैं जीव की परिभाषा। उन्हें पता ही नहीं है चेतना। उनमें इस बात का बोध ही नहीं है कि जैसी मेरी चेतना है, वैसी ही उनकी भी है। परमात्मा महावीर स्वामी जी ने '**सव्व भूयप्प भूयस्स सम्मं भूयाइं पासओ**' का उद्घोष किया। उन्होंने फरमाया कि '**सव्वे जीवा वि इच्छंति।**' उनकी देशना है '**सव्वे पाणा पियाउया दुक्ख पडिकूला**' अर्थात् सबको प्राण प्रिय है, दुःख

प्रतिकूल है।

भगवान की वाणी जिन्हें पता ही नहीं है वे पाप से बचेंगे कैसे? उनके मन में इसकी संवेदना आएगी कैसे? तभी तो वहाँ पर हिंसा आम है। वे आपकी नजरों में सभ्य होंगे परन्तु उन्हें तो जीव के अस्तित्व का भी भान नहीं। जब भान ही नहीं तो सम्मान नहीं। अस्तित्व की गरिमा का भी बोध नहीं। फिर वह कैसे सभ्य हैं? कैसे समझदार हैं? उनमें न दया है न रहम। वे सिर्फ उथली-उथली बातें करते हैं।

जब उन्हें जीव का स्वरूप स्पष्ट होगा, उस पर विश्वास होगा तो बहुत बड़ा बदलाव जीवन में आ सकता है। आमूल-चूल परिवर्तन की गुंजाइश है। तत्त्वानुप्रेक्षा में पाप का संबंध जीव से है। पुण्य का संबंध जीव से है। नरक का संबंध जीव से है। देव का संबंध जीव से है। पुनर्जन्म जीव पर निर्भर है। पूर्व जन्म जीव पर निर्भर है। कर्म जीव पर निर्भर है। कर्म बंधन जीव पर निर्भर है। यदि जीव पर भरोसा होगा तो सारी थीम पर भरोसा हो जाएगा। इसलिए कहा गया है तत्त्वानुप्रेक्षा। सारभूत की अनुप्रेक्षा करना। और जीव ही सारभूत है। इसी पर विमर्श करना है। जीव के अस्तित्व से ही संसार का अस्तित्व है। जीव के अस्तित्व से मोक्ष का अस्तित्व है। उसी से धर्म है। उसी से अधर्म है। जीव की अवधारणा स्पष्ट होगी तो ये सारी धारणाएं स्वत: स्पष्ट हो जाएंगी। आस्तिक और नास्तिक का मूलभूत सिद्धान्त ही जीव है। जिसे जीव पर प्रतीति हो जाती है, जिसे जीव पर विश्वास हो जाता है, जिसे जीव का बोध हो जाता है, वह

सम्यक् दृष्टि और जिसे इस पर भरोसा नहीं वह मिथ्यात्वी। सम और मिथ्या का दारोमदार जीव पर ही है। इसलिए इसकी अनुप्रेक्षा करना जरूरी है। कर्म सिद्धान्त को जानना जरूरी है। उससे पहले आस्रव और संवर को स्पष्ट करना जरूरी है। कर्मों का आना आस्रव है, कर्मों का रुकना संवर है और मोक्ष सर्वकर्म नष्ट होना है। सभी धर्म मोक्ष की चर्चा करते हैं पर वह भी अधूरी है। वे कहते हैं कि मोक्ष में जाकर भी वापस आ सकते हैं। शरीर धारण कर सकते हैं।

परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्।
धर्म संस्थापनार्थाय संभवामि युगे युगे।।

जब बीज ही नष्ट हो गया तो वह कैसे फलित होगा! कैसे पुनर्भव हो सकता है!

जैसे जला हुआ बीज पुन: उगता नहीं है, वैसे ही जिस ईश्वर ने सम्पूर्ण कर्म रूप बीजों को समूल नष्ट कर दिया है वह पुन: कैसे जन्म लेगा। वह '**अपुणरावित्ति सिद्धि-गइ-नामधेयं ठाणं**' को प्राप्त हो जाता है। अर्थात् जहाँ से पुनरागमन नहीं है, पुन: देह धारण नहीं है, पुन: जन्म-मरण नहीं है, पुन: संसार परिभ्रमण नहीं है, पुन: दु:ख-सुख का वेदन नहीं है। वह सर्वदा के लिए, अपर्यवसित काल के लिए सिद्धि दशा को प्राप्त हो जाता है।

आस्रव और संवर को थोड़ा समझें। अन्य दर्शन भी तप पर जोर देते हैं, तप करते हैं। उपवास, लंघन, व्रत, आतापना, देह दु:ख उनमें भी होता है पर भगवान कहते हैं '**कलं अग्घइ सोलसिं**' वे सोलहवीं कला का भी स्पर्श नहीं कर पाते क्योंकि संवर नहीं है। संवर

जैन धर्म का अद्वितीय चिंतन है। जैसे तालाब को खाली करने के लिए तालाब में आने वाले नालों को रोका जाता है, वैसे ही कर्मरूपी नाले को आत्मारूपी तालाब में आने से रोकने के लिए संवर है। आत्मा नामक तालाब को खाली करना है तो पहले उसमें आने वाले नालों को रोकना होगा। आस्रवों को रोकना होगा। आस्रवों को रोकना, नालों को रोकना ही संवर है। संवर सबसे ज्यादा महत्त्वपूर्ण है। यह अन्य किसी दर्शन में नहीं है। बिना संवर के क्रिया तादृक् फल नहीं देती है। बिना संवर के क्रिया करने का मतलब है पिछला कर्जा चुकाने से पहले और नया कर्जा ले लेना। पहले कर्जा लेना रोको फिर चुकाओ। संवर अर्थात् कर्ज लेने की आदत रोकना, बंद करना फिर चुकाना। भगवान ने अपने निर्मल ज्ञान में ऐसा देखकर भव्य प्राणियों के कल्याण के लिए, उनके हित के लिए, उनके मंगल के लिए, उनकी रक्षा के लिए इन तत्त्वों का ज्ञान करवाया। इसकी अनुप्रेक्षा गुरुदेव फरमा रहे हैं। उन 9 में से भी मुख्य रूप से जीव की अनुप्रेक्षा करने से पूरा जीवन परिवर्तित हो सकता है। फिर आज जो मार-काट देखने में आ रही है वह नजर नहीं आएगी।

औरंगजेब ने महाराष्ट्र में युद्ध किया। युद्ध के बाद 10 साल महाराष्ट्र में अकाल पड़ा। चारों और हड्डियों के पहाड़ बन गए। क्यों किया था युद्ध? क्यों हुई थी हिंसा? उसका कहना था कि सभी गैर काफिर हैं और काफिरों को मारने से जन्नत मिलती है। ये जीव को नहीं समझने का दुष्परिणाम है। चंगेज खाँ ने लोगों को मारा। तैमूरलंग ने भयंकर नरसंहार किया। वह तो कहता था कि मुझे मार-काट की

आवाज से बड़ा सुकून मिलता है। वह कहता था कि दोनों हाथों में तलवार लेकर लोगों की गर्दन काटने का परम आनंद मैं बार-बार लेना चाहता हूँ।

भगवान फरमाते हैं- 'खामेमि सव्वजीवे' यानी सभी जीवों को क्षमा। कोई भी बाकी नहीं रहे। उन्होंने कहा कि 'मित्ती मे सव्वभूएसु' अर्थात् सबसे मेरी मित्रता है। उन्होंने उसमें किसी को भी नहीं छोड़ा। न हिन्दू न मुस्लिम। न सिक्ख न ईसाई। सभी मित्र हैं। उन्होंने इसके लिए कोई सीमा नहीं निर्धारित की। उन्होंने कहा कि कोई युद्ध नहीं। कोई झगड़ा नहीं। केवल शांति।

भगवान की बात पर चलने से जीवों की रक्षा होगी। पर्यावरण भी पूरा बच सकता है। कितने लोग मरे फर्स्ट वर्ल्ड वार में? कितने लोग मरे सेकेंड वर्ल्ड वार में? कितने लोग मरे 1947 के विभाजन में, 1962 के चीन युद्ध में, 1975 में पाकिस्तान के साथ हुई लड़ाई में? 1984 के सिख दंगों में क्या हुआ? नफरत क्यों है? जंग क्यों है? लता जी के स्वर में एक गीत है- ईश्वर अल्ला तेरो नाम। जब सभी परमात्मा के हैं, सभी ईश्वर के हैं तो आपस में इतनी दूरी क्यों? मार काट क्यों? नरसंहार क्यों?

इसका मतलब यह नहीं है कि भगवान युद्ध विरोधी हैं। भगवान युद्ध विरोधी हैं परन्तु आत्मरक्षा के प्रबल हिमायती हैं। आत्मरक्षा के लिए कोई मनाही नहीं है। अपनी तथा अपने परिवार की रक्षा, अपने धर्म तथा राष्ट्र की रक्षा के लिए सदा तत्पर रहना चाहिए। हाँ, भगवान का सिद्धान्त मानोगे तो एक चमत्कार घटित

होगा। वह यह कि तेरे-मेरे का भेद ही खत्म हो जाएगा। आप सोचो एक ऐसी दुनिया के बारे में जिसमें कोई गैर है ही नहीं। पराया है ही नहीं। दूसरा है ही नहीं। सभी मेरे हैं और मैं सबका हूँ। पर भगवान की वाणी का ज्ञान न होने के कारण इतना नरसंहार हो रहा है। यह बात यूनाइटेड नेशन में कहने जैसी है।

इसका एक और कारण है जीव तत्त्व का बोध न होना। प्रत्येक मनुष्य, प्रत्येक राष्ट्राध्यक्ष, प्रत्येक राजनेता इस बात को समझे कि हम बारूद के ढेर पर हैं। तत्त्वानुप्रेक्षा के द्वारा हम 'सेव अर्थ' (SAVE EARTH) के नारे को सार्थक कर सकते हैं। युद्ध रहित दुनिया बना सकते हैं। एक सुकून भरी दुनिया बना सकते हैं। जीव तत्त्व का बोध न होने से इस दौर में हर समय कोई न कोई युद्ध जारी है। रूस-यूक्रेन का युद्ध कब रुकेगा पता ही नहीं है।

क्या मरने वाले जीव नहीं हैं? क्या वे सुख नहीं चाहते? क्या वे जीना नहीं चाहते? तत्त्वानुप्रेक्षा पर बहुत लम्बी बात की जा सकती है। बहुत कुछ लिखा जा सकता है, परन्तु हम यहीं पर सोचें और विचार करें। सिर्फ 1 जीव पर ही चिंतन करें तो भी वैश्विक समस्याओं का समाधान हो सकता है।

तत्त्वानुप्रेक्षा के आगे है आत्मचिंतन। आचार्य श्री नानालाल जी म.सा. की अनमोल चिंतनमणियां उसमें सहायक हैं। विचार करें कि हे जीव! तू कौन है, कहाँ से आया है, कहाँ जाना है, क्या कर रहा है? ये सब गहरे बिन्दु हैं। एक-एक बिन्दु पर गहराई से सोचा जा सकता है।

जो यह सोच ले कि मैं क्या कर रहा हूँ वह कैसे बुरा कार्य कर पाएगा? कैसे किसी का दिल दु:खा पाएगा? कैसे किसी को ठेस पहुँचा पाएगा? नहीं कर पाएगा। कर ही नहीं सकता।

आगे गुरुदेव फरमाते हैं– 'तेरा बोलना करना तुच्छ भावों से युक्त तो नहीं।' गजब की बात है। वे कहते हैं कि तुच्छ भाव युक्त कोई कार्य तुम्हें नहीं करना है। वाणी से, अपने किसी कार्य से तथा अन्य किसी भी प्रवृत्ति से तुम किसी को कष्ट पहुँचाने वाले तो नहीं हो? तुम्हारा वर्तन दूसरों के लिए पीड़ाकारी तो नहीं है? इस पर सोचें। विचार करें। आत्मचिंतन करें। यह करते समय स्थल शोरगुल रहित हो। काल प्रात: या ब्रह्ममुहूर्त हो। आत्मचिंतन जीवन को पूर्णरूपेण बदल सकता है। व्यक्ति संभल सकता है। घर-घर विघटन के द्वार पर खड़ा है। यदि उसके मन में ये मणियाँ चस्पा होंगी तो प्रेम और आनन्द की बाँसुरी बज सकती है। आज तो एकान्त में बैठना ही दुष्कर हो गया है। आदमी के पास समय ही नहीं। अपने लिए भी समय नहीं है। स्वयं के लिए तो समय होना चाहिए ना! खुद के लिए तो खुद ही समय निकालना होगा। खाना तो स्वयं ही खाना होगा। पानी तो स्वयं ही पीना होगा। पोटी के लिए तो स्वयं को जाना होगा। आप कितने भी बड़े बन जाओ पर इतने बड़े कभी नहीं बन सकते कि कोई आपके नाम की पोटी कर ले। कोई आपके नाम की नींद ले ले। कितने भी आविष्कार हो जाएं और कोई यंत्र मानव के काम को हलका करने का दावा करे, परन्तु खाना तो खुद को ही खाना पड़ेगा। ऐसा कोई आविष्कार नहीं जो दूसरे के खाए गए खाने का स्वाद

आपकी जीभ पर ला दे और आपके पेट को भर दे। यह कार्य आपको ही करना होगा। आत्मचिंतन आपको ही करना होगा। आत्महित में आपको ही अनुप्रेक्षा करनी होगी। तभी गुरुदेव सामायिक की प्रेरणा देते हैं। ऐसा उपदेश देते हैं कि खुद की सुख-शाति तो खुद ही बढ़ानी होगी। खुद की समाधि पर तो खुद को ही काम करना पड़ेगा। दूसरा कौन करेगा?

अप्पा कत्ता अर्थात् आत्मा कर्त्ता है। सुख, समाधि और शांति के कर्त्ता हम ही हैं। कोई कह रहा होगा कि अच्छे दिन आने वाले हैं पर खुद के अच्छे दिन तो खुद को ही लाने होंगे। खुद के अच्छे दिनों के लिए खुद को ही काम करना होगा। दूसरा आपको प्रेरित कर सकता है। आपको बता सकता है। पढ़ा सकता है। कह सकता है पर करना तो आपको ही होगा। आत्मचिंतन से यह बोध स्पष्ट होता जाएगा।

मनुष्य ने अद्भुत तरक्की की है। रुपया, पैसा, मकान, दुकान, फैक्ट्री की दिशा में खूब तरक्की की है पर वह दु:खी है। इसलिए दु:खी है क्योंकि इन सबके बीच वह आत्मचेतना भूल गया है। सबके साथ बात कर रहा है, सबसे बोल रहा है पर खुद से बात करना भूल गया है। सबको खुश रखने में खुद की खुशी भूल गया है। सबको दिखाने के चक्कर में फँसे मनुष्य को खुद की ओर देखना याद ही नहीं आता है।

आप पूछिए अपने आपसे कि आप कब बैठे थे खुद के साथ? कब किया खुद से बात? कब हँसे थे खुद के साथ? कब रोए

थे खुद के लिए? याद कीजिए वह समय जो आपने सिर्फ और सिर्फ खुद के साथ बिताया था। कब कितना और कितनी बार।

एक पेड़ बहुत सुन्दर है। उस पर फूल भी हैं और फल भी। वह काफी फैला हुआ है पर एक माली उसे देखकर दु:खी हो गया। लोगों ने माली से पूछा कि क्यों रोते हो तो उसने कहा कि ये रौनक खत्म होने वाली है। हरियाली सूखने वाली है। ये वृक्ष भूमिसात् हो जाएगा।

लोग हँसने लगे। कुछ लोगों ने उस माली की अनुभवी आँखों को देखा और सविनय पूछा कि आप ऐसा कैसे कहते हैं। माली ने गंभीरतापूर्वक कहा कि ये वृक्ष अपनी जड़ों से अलग हो चुका है और जो जड़ों से अलग हो जाता है उसका...

इसी तरह का वाकया एक पुरुष के साथ हुआ। वह पुरुष बलिष्ठ था। उसका बोलना, चलना, खाना, पीना, दण्ड-बैठक करना सब कुछ नार्मल था। सभी उसकी फुर्ती की, उसकी त्वरा की, उसके काम करने के जज्बा की वाहवाही करते। यह सब देखने के बावजूद एक अनुभवी डॉक्टर ने उसको हिदायत देते हुए कहा कि अपनी सेहत पर ध्यान दो।

डाक्टर की बात सुनकर सभी सोचने लगे कि उसे समझ नहीं है। उसे कुछ पता नहीं है। इसके बल के बारे में इसने शायद सुना नहीं है। वह बलिष्ठ व्यक्ति भी डॉक्टर की हँसी उड़ाने लगा। डॉक्टर ने उस व्यक्ति से कहा कि तुम अपने लीवर की जाँच करा लो। तुम्हारा लीवर सड़ चुका है। तुम्हारी ये रौनक ज्यादा दिन की नहीं है। यह

सुनकर उस व्यक्ति को झटका लगा। उसने जाँच करायी। रिपोर्ट में लीवर सिरोसिस डिटेक्ट हुआ।

जैसे जड़ों से टूट चुका पेड़ अधिक दिनों तक हरा-भरा नहीं रह सकता, वैसे ही जिस व्यक्ति का लीवर डैमेज हो चुका हो वह ज्यादा दिनों तक खैरियत नहीं मना सकता। इसी तरह जिसने आत्मचिंतन का दामन छोड़ दिया है वह खैरियत नहीं मना सकता। आप लोगों के सामने हँस-हँस कर बात कर रहे होंगे, लोग आपसे खुश होंगे परन्तु यदि कभी रात को 1-2 बजे नींद उड़ने पर आप खुद को निहायत तनहा और निपट अकेला पाते हैं तो आपकी खुशी दिखावटी है। दिन में लोगों के सामने प्रसन्न व्यक्ति यदि रात में जार-जार रोता है तो क्या वह खुश है? वह खुद के साथ समय बिताने से डरता है इसलिए रात-रात भर ऑनलाइन रहता है। खुद से डरा हुआ आदमी खुद को भुलाने के लिए ऑनलाइन का सहारा ले रहा है। सिगरेट, ड्रग्स और शराबनोशी करता है। जो स्वयं से संतुष्ट होगा वह इन सबसे परे होगा। संतुष्ट होने का एक मात्र उपाय है आत्मचिंतन।

जैसे पूरा शरीर ठीक होने पर भी यदि लीवर ठीक नहीं हो तो बचना असंभव है, वैसे ही धर्म, दान, धन, मान, यशकीर्ति सभी कुछ होने पर भी आत्मचिंतन न होवे तो साधना में गति असंभव है। साधना को प्राणवती बनाने के लिए हमें तत्त्वानुप्रेक्षा करनी चाहिए। स्वाध्याय करें। आगमों का अर्थ पढ़ें। कर्म सिद्धान्त का ज्ञान करें। स्तोक पढ़ने की कोशिश करें। प्रवचन पुस्तिकाएं पढ़ें। जवाहर किरणावली पढ़ें। प्रवचन सुनें। उसे नोट करें। जैन कथा साहित्य पढ़ें।

तीर्थंकर चारित्र, जैन धर्म का मौलिक इतिहास, अपश्चिम तीर्थंकर आदि जैन तत्त्व साहित्य पढ़ें। जिणधम्मो, जैनप्रकाश, तत्त्वार्थ सूत्र पढ़ें। स्याद्वाद को समझें। नवतत्त्वों को जानें। ये सब करना तत्त्वानुप्रेक्षा में सहयोग देगा। इनके साथ-साथ आत्मचिंतन हो। ये गाड़ी के दो पहिए हैं। ये पक्षी के दो पंख हैं। जैसे पहिए बिना गाड़ी नहीं चलती और पंखों बिना पक्षी नहीं उड़ता, वैसे ही तत्त्वानुप्रेक्षा और आत्मचिंतन के बिना साधना फलवती नहीं होती। हमारे महान पुण्योदय से हमें अप्रतिम अनुशास्ता आचार्य श्री रामेश का सान्निध्य प्राप्त हुआ है। उनकी शरण में हमें बहुमूल्य रत्नसदृश आध्यात्मिक आरोग्यम् को मनन करने का मौका मिला है। इसे पढ़ें। इसका चिंतन करें। इसके नोट्स बनाएं। सभी लोग गुणपरक दृष्टि का विकास कर सकते हैं। छोटे से जीवन में गुण पर नजर पड़े। गुण को देखें। गुणमय बन जाएं। छिन्द्रान्वेषण त्यागें। संसार में किसी के घर में ताका-झाँकी करने वाले को लुच्चा कहते हैं। अध्यात्म में उसे छिद्रान्वेषी कहते हैं। न देखें वाद-विवाद। पराङ्गमुख बनें।

इस किताब को पढ़ने वाले वे व्यक्ति जिनकी उम्र 30-35 साल के आस-पास है वे 50 साल से ज्यादा शायद ही जीएंगे। अभी हमने 2019-20 में कोविड-19 देखा। आप में से कई लोग हॉस्पिटल से लौट आए होंगे। अस्पताल में आपने आदमी को दूसरे ग्रह की यात्रा पर जाते देखा होगा। जो सिलेण्डर हमें जिन्दगी दे पाया उसने उसको जिन्दगी नहीं बख्शी। हम मौत के मुँह से बाहर आ गए। जी हाँ हम जिंदा हैं। टाइगर जिंदा है। फिर क्यों विवाद पत्नी से, क्यों

माँ से विवाद और क्यों दोस्तों से विवाद। प्यार से मिलो, बैठो।

आप अब किताब का लास्ट चैप्टर पढ़ रहे हैं। इसके लिए आपको शाबाशी। ये भी बिना आत्मानुशासन के नहीं हो पाता। जीवन नियमन और इन्द्रिय निग्रह भी हमें समाधि और शांति देंगे। हमें शांत इनसान बनाएंगे। अपने भीतर मैत्री भावों को विकसित करें। सबको मित्रवत् स्पेस दें। फ्रीक्वेंसी को समझें। गुरु दर्शन करें तब भी स्पेस दें। मुनि, आचार्य, साध्वी जी व्याख्यान देकर थके हो सकते हैं, इसलिए उन्हें अकेला छोड़ दें। कुछ साँस लेने दें। शोरगुल ना करें। उन्हें समाधि पहुँचाएं। वह हमारी महती निर्जरा करवाएगी। विहार में भी ध्यान रखें। शांत रहने से एक समझ विकसित होगी, जिससे विकास होगा। संघ के हर सदस्य के साथ सामूहिक साधना करें। लेकिन उसमें गुटबंदी न हो। जगह-जगह गुट बन रहे हैं। ग्रुप बन रहे हैं। ये नासूर बन रहा है। धर्म तो अहंकार को समाप्त करने वाला है। साधु प्रेरणा दे, ना दे, पहुँचें और सामूहिकता का लाभ प्राप्त करें। वह ऊँचा उठाएगी।

नियमित काँच देखने वाला मनुष्य स्वयं को देखना भूल जाता है। बाहर देखने वाली आँखें अंदर झाँकना भूल जाती हैं। दूसरों को तौलने वाली नजर खुद के मूल्यांकन में चूक जाती है। प्रभु आचारांग में फरमाते हैं '**एवं तं मा होउ**' अर्थात् हे देवानुप्रिय, ऐसा तुम्हारे साथ ना होवे। तुम इनसे ऊपर उठो। गुणियों, मुनियों, गुरुजनों के प्रति सम्मान की भावना, प्रभु की महिमा, उनका कीर्तन, गुणगान, उनका चारित्र पठन, उसका रसमय वाचन सुलभ बोधि बनाएंगे।

निकट भवी बनाएंगे। हलुकर्मी बनाएंगे। शीघ्रातिशीघ्र सर्व दुखों से मुक्त बनाएंगे।

बोलो है इच्छा?

इच्छा है तो आध्यात्मिक आरोग्यम् को जीवन की थीम बनाने की कोशिश करें।

आपने 9 बिंदुओं को पढ़ा। इन बिंदुओं पर चिंतन-मनन भी किया होगा। तत्त्वानप्रेक्षा को पढ़ते समय दुर्गति के स्वरूप पर ध्यान गया होगा। जीव के स्वरूप का बोध होने पर व्यक्ति को दुर्गति से बचने का भाव बने बिना नहीं रहेगा। वह समय-समय पर स्वयं को सावधान करेगा अथवा सावधान हुए बिना नहीं रहेगा। उसका मन व्रत-नियम की तरफ खिंचेगा। इसलिए खिंचेगा क्योंकि उसे मालूम है कि पर भव में जाना है और वहाँ के लिए मैंने क्या बाँधा है।

कोई कितना भी माडर्न हो जाए, कितने भी आविष्कार हो जाएं, दुनिया कितनी भी तरक्की कर ले परंतु मौत पर विजय असंभव है। मृत्यु अवश्यंभावी है। वह खड़ी है। आइंस्टीन मरा। न्यूटन भी मरा। स्टीफन भी मरा। स्टीव जाब्स भी मरा। अब्दुल कलाम, विक्रम साराभाई सभी मरे। क्या किसी ने मौत पर विजय पाई!!!

आध्यात्मिक आरोग्यम् कोई आध्यात्मिक बात नहीं है। यह जीवन के बारे में सोचने का अवसर उपलब्ध कराती है। यह अपने हित की बात है। आप दूसरों को भी जीव मानेंगे तो उनसे वाद-विवाद नहीं करेंगे। उनके छिद्रान्वेषण का भाव नहीं रखेंगे। जीओ और जीने दो का भाव आपके भीतर काम करने लगेगा। आपका

जीवन खुशहाल बनेगा। जीवन को खुशहाल करने की ताकत आध्यात्मिक आरोग्यम् में है। खुशहाल बनाने की कुंजी आध्यात्मिक आरोग्यम् में है। इस कुंजी का प्रयोग कर अपने सुख-शांति पर लगे ताले को खोलने का काम करें। आध्यात्मिक आरोग्यम् नाम की कुंजी हमें प्रदान करने वाले आचार्य भगवन् को अनंतशः प्रणिपात। जीवन को आनंदमय बनाने की क्षमता आध्यात्मिक आरोग्यम् में है।

***

आध्यात्मिक आरोग्यम् के सभी बिन्दु पूरे हुए। इन बिन्दुओं के पूरे होने के साथ आपको अपना वादा भी पूरा करना है। आठ बार पहले किया गया वादा भी पूरा करना है और नवें बिन्दु का वादा भी पूरा करना है। वादा करें कि–

1. आत्मचिंतन करेंगे।
2. आत्ममुग्ध नहीं होंगे।
3. अपनी निजी लाइब्रेरी बनाएंगे।
4. साल में 5000 रुपये किताबों में निवेश करेंगे।
5. नव तत्त्व को लोगों तक पहुँचाने का प्रयास करेंगे।

साथ ही हँसें जैसे 10 वर्ष के हों, लोगों से मिलें जैसे 20 वर्ष के हों, स्वस्थ रहें जैसे 30 वर्ष के हों, प्यार करें जैसे 40 वर्ष के हों, सलाह दें जैसे 50 वर्ष के हों, परवाह करें जैसे 60 वर्ष के हों, ज्ञानी बनें जैसे 70 वर्ष के हों।